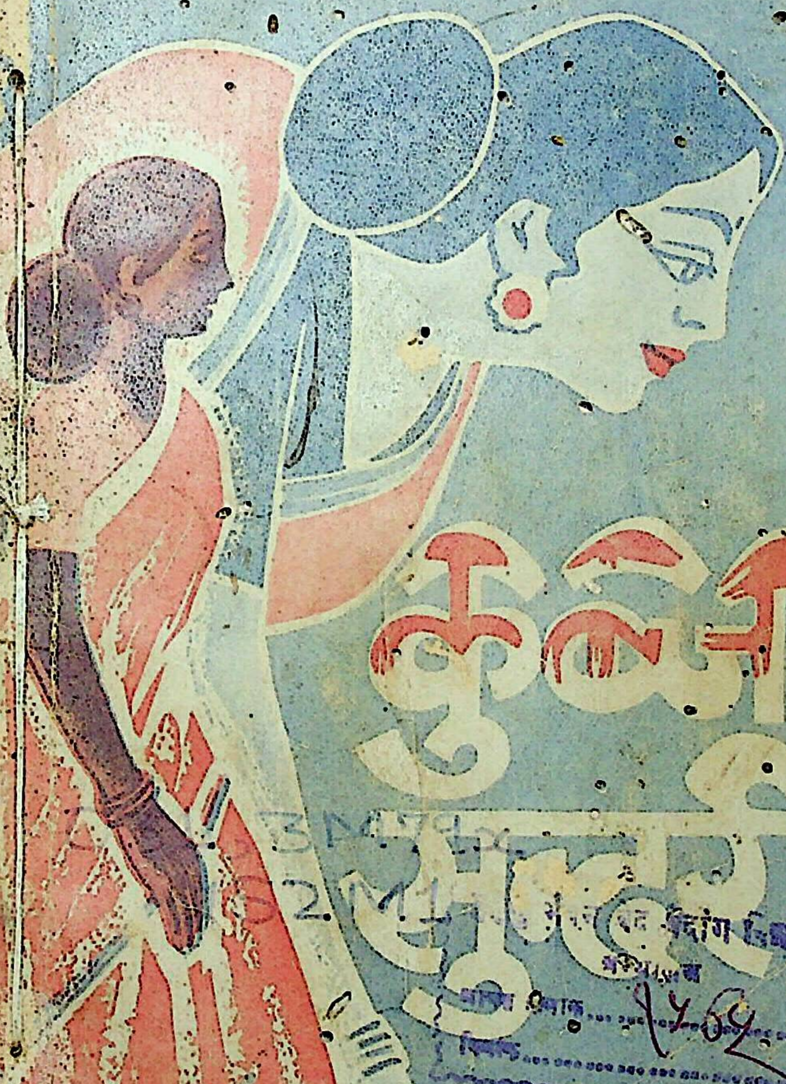


चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य



कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।



कुब्जा सुन्दरी

विचार-प्रेरक तथा शिक्षाप्रद
कहानियां

लेखक
चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

अनुवादिका
शान्ति भटनागर

१९८१



सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
यशपाल जैन
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

•

छठवीं बार : १६८१
मूल्य : ६.००

•

मुद्रक
अग्रवाल प्रिंटर्स
दिल्ली

प्रकाशकीय

स्व० चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। राजनीति, साहित्य, अध्यात्म तथा अन्य अनेक क्षेत्रों में उनका योगदान अभूतपूर्व रहा। उन्होंने जिस क्षेत्र में पदार्पण किया, उसी पर अपनी छाप डाली। राजाजी मूलत: आध्यात्मिक व्यक्ति थे। उन्होंने महाभारत, रामायण, उपनिषद आदि का गहराई से अध्ययन किया और अपने मौलिक चिंतन का लाभ पाठकों को दिया। उनकी 'दशरथनन्दन श्रीराम' तथा 'महाभारत कथा' पुस्तकें भारतीय वाङ्मय की अद्भुत कृतियां हैं। इन तथा उनकी दूसरी पुस्तकों को पढ़कर तृप्ति नहीं होती, बार-बार पढ़ने को जी करता है।

राजाजी की एक ही इच्छा थी और वह यह कि मनुष्य अच्छा मनुष्य बने। इसी के लिए उन्होंने विभिन्न विधाओं में साहित्य की रचना की। उनकी शैली में निराला प्रवाह है। गूढ़-से-गूढ़ विषय को सरल और सरस बना देने की कला में वह बेजोड़ थे। उनकी सारी पुस्तकों में, भले ही वह महाभारत का अनुशीलन हो, अथवा रामायण का; गीता का हो अथवा उपनिषद का; संत कवयित्री औवै का काव्य हो अथवा संत लारेंस का सौहृदयोग, सबके पढ़ने में कथा-कहानी जैसा रस और आनन्द आता है।

पाठक जानते हैं कि राजाजी ने कहानियां भी लिखी हैं, जिनके तीन संग्रह 'मंडल' से प्रकाशित हुए हैं। 'राजाजी की लघु कथाएं,' 'कुब्जा सुन्दरी' और 'दुखी दुनिया', उनके ऐसे कहानी-संग्रह हैं, जिनकी मांग बराबर बनी रहती है।

प्रस्तुत पुस्तक काफी दिनों से अप्राप्य थी। पाठकों का आग्रह था कि हम उसे शीघ्र ही फिर से छाप दें। उसी आग्रह को ध्यान में रखकर पुस्तक का पुनर्मुद्रण किया गया है।

आशा है, पाठक इसे चाव से पढ़ेंगे और बार-बार छापने का हमें अवसर प्रदान करेंगे।

—मंत्री

दो शब्द

ये कहानियां मूलतः तमिल में लिखी गई थीं और विभिन्न तमिल पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं। इनका अंग्रेजी अनुवाद मेरे पुत्र स्वर्गीय डाक्टर सी० आर० रामस्वामी ने किया था। उसीके आधार पर श्रीमती शांति भटनागर ने इनका हिंदी-रूपांतर किया है।

ये कहानियां सन् १९२५ से लेकर अबतक भिन्न-भिन्न अवसरों पर लिखी गई हैं। यहां वे तिथि के अनुसार क्रमबद्ध नहीं की गई हैं।

नई दिल्ली
दिसम्बर, १९४६

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

अनुक्रम

□□

□

कुब्जा सुंदरी

□□



कुब्जा सुन्दरी

□□

"उन्हें कुछ भी हो, हमें क्या ? ऐसी बातों में पड़ना खतरनाक होता है। मेरा कहना मानो और ऐसा मत करो।"

"खतरे की कोई बात नहीं है, कामू ! वह हमारी लिखावट नहीं पहचानते और अगर उन्हें मालूम भी हो जाय तो क्या ? एक मजाक ही सही।"

"अच्छी बात है; लेकिन तुम खुद लिखो, मैं अपनी कलम से नहीं लिखूंगी।"

"यही सही, लाओ मुझे दो, मैं लिखूंगी। इसमें मुश्किल ही क्या है ?"

यह बातचीत लड़कियों के वीरेशलिंग होस्टल के एक कमरे में हुई। कमला और कामाक्षी बी॰ ए॰ में पढ़ती थीं। उन्होंने मिलकर शरारत से भरा हुआ एक गुमनाम पत्र लिखा :

"गीता-शिरोमणि नरसिंह शास्त्री को हमारा प्रणाम !

महानुभाव, वीरेशलिंग होस्टल की हम छात्राएं आपकी सेवा में नम्रतापूर्वक निम्नलिखित प्रार्थना-पत्र भेजती हैं :

हम आपकी उस भावना का आदर करती हैं, जिसके कारण आपने अपने बड़े पद का त्याग किया और ईश्वर-भक्ति से प्रेरित होकर सर्वसाधारण को पुराने शास्त्रों के समझाने का धार्मिक कार्य उठाया। जैसा प्रतिभाशाली भाषण आपने पिछले रविवार को वसंत हाल में दिया था, वैसा हमने आजतक नहीं सुना। अबतक कोई भी व्यक्ति गीता या उपनिषदों के मर्म इतनी सुंदरता के साथ नहीं समझा पाया है। किंतु क्या कारण है

कि जो सत्य आप दूसरों को इतनी अच्छी तरह समझाते हैं, उससे स्वयं लाभ नहीं उठाते ?

क्या आपने अपने भाषण में यह बात बहुत ही अच्छे ढंग से नहीं समझाई थी कि विषय-भोग की ओर से हमें अपने विचार उसी प्रकार समेट लेने चाहिए, जिस प्रकार कछुआ अपनी खोपड़ी के अंदर अपने सारे अंग समेट लेता है ? और क्या आपने यह भी नहीं कहा था कि हमारी पांचों ज्ञानेंद्रियां पांच घोड़ों की तरह हैं, जिनकी रास कसकर रखनी चाहिए, नहीं तो वे हमारे क़ाबू से बाहर चली जायंगी और हमें ख़तरे में डाल देंगी ? फिर आपने अपने उपदेशों का स्वयं पालन क्यों नहीं किया ? आपने वहां दो घंटे तक भाषण दिया और इस बीच एक बार भी लड़कियों की ओर आंख उठाकर नहीं देखा। जिन लोगों ने वहां आपको देखा, उन्होंने आपको बिना गेरुआ वस्त्रवाला एक संन्यासी समझा। लेकिन पिछले दो दिनों का आपका आचरण इस बात को झूठा सिद्ध करता है। आप पुण्य के मार्ग से बुरी तरह हट रहे हैं और पाप के गड्ढे में गिरने ही वाले हैं। ऐसा मालूम होता है कि आपको अपनी आंखों पर काबू नहीं रह गया है। हममें-से कुछ ने आपके बारे में प्रिंसिपल साहब से कहने तक का इरादा कर लिया था; लेकिन फिर सोचा कि आपको बदनाम करना ठीक नहीं होगा और इसी लिए यह पत्र लिखा है।

जब आपकी पत्नी का देहांत हो गया था तो आपने प्रचलित प्रथा के अनुसार अपना दूसरा ब्याह क्यों नहीं कर लिया ? कृपाकर हमारी सलाह मानिये और गीता का उपदेश देना बंद कर अपने घर चले जाइये और ब्याह कर लीजिये। आप अभी बहुत बूढ़े नहीं हैं। हमारी समझ में आप करीब पचास वर्ष के ही होंगे। हमने आपके लिए एक लड़की पसंद की है। रेणिगुंट जंकशन से आगे वंकीपुर नाम का स्टेशन है। वहीं दक्षिण सड़क पर एक बड़ा-सा मकान है, जिसमें गोविंदार्य नाम के एक सज्जन रहते हैं। उनके करीब बाईस वर्ष की एक कन्या है। अगर आप तैयार हों तो हम उससे आपका ब्याह तय करा देंगी। हमें बस एक इशारे की ज़रूरत है। अगर आप अपनी छत की रस्सी पर अपनी रेशमी किनारीवाली चादर फैला देंगे और उस पर अपना छाता टांग देंगे तो उन्हें हम यहां

देख सकेंगी और समझेंगी कि आप हमारे प्रस्ताव से सहमत हैं। इसके बाद हम सबकुछ स्वयं कर लेंगी और लड़की के घरवालों से मिलकर उन्हें राजी करा लेंगी।

आप अपनी बदनामी मत कराइये और न अपनी नेकनामी पर बट्टा लगाइये। मेहरबानी करके छत पर खड़े होकर हमें घूरा मत कीजिए।

—वीरेशलिंग होस्टल की छात्राएं"

नरसिंह शास्त्री ने बिना किसी शिकायत का मौका दिये बारह साल तक सब-जजी की। इसके बाद वह एक साल तक जज के पद पर भी रहे। उनकी पत्नी को ब्याह के बाद पंद्रह वर्ष तक कोई संतान नहीं हुई। सोलहवें साल उन्होंने एक कन्या को जन्म दिया। नरसिंह शास्त्री ने चिकित्सा और शुश्रूषा का पहले से ही समुचित प्रबंध कर रखा था, परंतु डाक्टरों की लाख चेष्टा करने पर भी प्रसव के सत्तरहवें दिन उनकी पत्नी का प्रसूतिका-ज्वर से देहांत हो गया।

नरसिंह शास्त्री की विधवा बहन, जो उम्र में उनसे बड़ी थी, उनके घर आकर रहने लगी और बड़े प्यार से बच्ची का लालन-पालन करने लगी। उन्होंने अपने छोटे भाई पर दूसरा ब्याह करने के लिए बार-बार ज़ोर डाला; लेकिन उन्होंने ऐसा करने से दृढ़तापूर्वक इंकार कर दिया और एक संन्यासी की तरह जीवन बिताया। उनका सारा समय या तो दफ्तर के काम में बीतता या धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन में।

लेकिन उनके दुर्भाग्य का अंत यहीं नहीं हुआ। उनकी बड़ी बहन मना करने पर भी मार्गशीर्ष एकादशी के त्योहार पर श्रीरंग जाने की जिद करती रहीं। वहां जाने पर उन्हें हैजा हो गया और वह मर गईं। उस वक्त तक बच्ची पूरी दो वर्ष की भी नहीं हो पाई थी।

एक बार फिर शास्त्री के ये संबंधी, जिनके क्वारी कन्याएं थीं, उनके पास आये। उन्होंने उन पर दबाव डाला कि अगर और किसीके लिए नहीं तो बच्ची की खातिर ही शादी कर लो; परंतु शास्त्री ने न केवल ब्याह करने से इंकार कर दिया, बल्कि अपनी नौकरी भी छोड़ दी। चूंकि उन्हें पुराने और नये धार्मिक साहित्य का बहुत अच्छा ज्ञान था, इसलिए वह

बहुत जल्दी ही धार्मिक विषयों के एक सुंदर उपदेशक प्रसिद्ध हो गये। मद्रास में लोग उनका व्याख्यान सुनने के लिए इतनी ही बड़ी संख्या में इकट्ठे होते, जितनी कि संगीत-उत्सवों में। हर जाति के स्त्री-पुरुष—पढ़े-लिखे और अनपढ़ दोनों—उनके व्याख्यान बड़ी उत्सुकता से सुनते और उन्हें गीता-प्रसंग-शिरोमणि कहते, जिसका अर्थ था 'गीता के उपदेशकों में सबसे बड़े मणि।'

इस तरह कई महीने बीत गये, परंतु क्या पिछले जन्म का कर्म मिट सकता है ? वह व्यक्ति जो इतने समय में संन्यासियों-जैसा जीवन बिताता आया था, उस बुध की रात को मूर्ख बन गया !

वह लड़कियों के वीरेशलिंग होस्टल के पीछे की गली में एक छतदार मकान में रहते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि जिस समय लड़कियां अपनी छत पर आकर खड़ी हुईं, करीब-करीब उसी समय वह भी अपनी छत पर आये और उन्होंने लड़कियों की ओर देखने की धृष्टता की। दो या तीन दिन तक ऐसा ही संयोग हुआ। लड़कियों को यह बात अच्छी नहीं लगी और उन्होंने उनके पास ऊपर लिखा गुमनाम पत्र भेजा !

डाकिये ने दरवाजे पर खटखट की। शास्त्री ने खुद जाकर चिट्ठी ली। उसे पढ़कर उनका हृदय अचानक लांछन से क्षुब्ध हो उठा और उन्होंने पत्र को जलाकर राख कर देना चाहा; किंतु कुछ सोच-समझकर उन्होंने उसे होशियारी से मोड़कर अपने थैले में रख लिया।

क्षोभ के समुद्र में मानो वह डूब-से गये। उनकी प्रतिज्ञा झूठी पड़ गई थी, उनका ज्ञान निरर्थक सिद्ध हो गया था। उन्हें बहुत ही दुःख हुआ और उनकी समझ में नहीं आया कि वह इस अपमान को कैसे सहन करें।

उन्होंने योंही एक किताब उठा ली और पढ़ने की चेष्टा की, लेकिन मन नहीं लगा। बहुत प्रयत्न करने पर भी वह उस अपमान की बात को चित्त से नहीं हटा सके। "हे भगवन्, क्या मैं सचमुच पापी होता जा रहा हूं ? सीताराम !" इस तरह गिड़गिड़ाकर उन्होंने अपने मान्य देवता का स्मरण किया और दया की याचना की।

उस रात उन्हें नींद नहीं आई। उन्हें अपनी मृत पत्नी और बहन की

अलग याद आई और उन्होंने मद्रास छोड़कर अपने गांव चले जाने का निश्चय किया। लेकिन एकाएक उन्हें ध्यान आया कि अगले इतवार को चिताड्रिपेट में कपड़े के बड़े व्यापारी रामनाथ चेट्टियार के मकान पर गीता का उपदेश देना है। "इस वादे को मैं कैसे तोड़ सकता हूं? लेकिन मैं भाषण दूंगा कैसे?" इन्हीं उलझनों में पड़े-पड़े वह सारी रात जागते रहे।

शिरोमणि की छत पर छाते या चादर का कोई संकेत न देखकर लड़कियों को कुछ निराशा हुई। अगले दिन भी कुछ संकेत न मिला। लड़कियों को यह सोचकर बड़ा दुःख हुआ कि उनकी चाल चली नहीं।

"कामाक्षी, अभी हमें एक दिन और इंतजार करना चाहिए।" कमला ने कहा।

"वह हमारे धोखे में नहीं आ सकता, बड़ा चलता हुआ आदमी है।" कामाक्षी ने जवाब दिया।

"कितने की शर्त लगाती हो?"

"दो रुपये की।"

"अच्छा, दो दिन का वक्त दो।"

तीसरे दिन रात को शास्त्री खुली छत पर बैठे-बैठे आकाश की ओर देख रहे थे और उनके मस्तिष्क में ये बातें घूम रही थीं—"इस महान् ब्रह्मांड में मैं एक कण के बराबर हूं। मैं बड़ी तेजी से घुमाया जा रहा हूं, फिर भी मैं किसी तरह अपनी जगह पर टिका हूं। मैं किस तरह अपनी क्षुद्रता को पूरी तरह से समझ सकता हूं और किस तरह यथेष्ट निंदा कर सकता हूं? मेरे भगवान्, क्या मेरी चिंता और भय का तुम पर कोई असर नहीं पड़ता? मेरी रक्षा करो, मेरे स्वामी!' यह कहकर वह रोने लगे और बहुत देर तक इस प्रकार चिंता में पड़े रहे। अंत में उन्हें नींद आ गई। सपने में उन्हें अपनी मृत पत्नी दिखाई दीं; एकाएक तश्तरी में शास्त्री को पान-सुपारी देती हुई बोलीं, "निराश मत होओ।" और फिर गायब हो गईं। इस सपने के बाद शास्त्री का दिमाग कुछ हल्का हुआ। सपने में स्त्री दीखना शुभ लक्षण था। कोई साहसपूर्ण कार्य करने के लिए यह एक अच्छा शकुन था। उन्होंने अपने मन को यह समझाने की चेष्टा की कि मृत-पत्नी ने सपने

में आकर सलाह दी है कि मैं दूसरा ब्याह कर लूं। लड़कियों ने जो कहा वह ठीक ही है।" उन्होंने सोचा, "जबतक अपने में कठोर जीवन बिताने की क्षमता न आ जाय तबतक अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति को दबाने से कोई लाभ नहीं। जब मन ही पवित्र न हो तब सिर्फ़ इंदियों के बाहरी दमन से कोई लाभ नहीं। 'अहम्' के वश होकर मैंने शास्त्रों का अनादर किया है। मेरे लिए फिर से ब्याह कर लेना ठीक है, शास्त्री ने मन-ही-मन तय किया। लड़कियों की शरारत में उन्हें ईश्वर का हाथ दिखाई दिया।

अगले दिन सुबह उन्होंने छत की रस्सी पर अपनी रेशमी किनारेवाली चादर डाल दी और छाता भी लटका दिया।

होस्टल में आनंद की लहर दौड़ गई। कमला और कामू खुशी के मारे नाच उठीं!

कमला ने चिल्लाकर कहा, "लाओ मेरे दो रुपये।"

"अच्छा-अच्छा, अब तुम वंकीपुर के लिए चल दो।" कामाक्षी बोली। गोविंदार्य वंकीपुर के एक धनी व्यक्ति थे। उनका एक पढ़े-लिखे घराने में जन्म हुआ था और वह स्वयं भी बड़े विद्वान् थे। उनके कोई पुत्र न था, केवल सुंदरी नाम की एक कन्या थी, जिसको उन्होंने खूब संस्कृत पढ़ाई थी। जब वह बारह साल की थी और गोविंदार्य उसके लिए वर की तलाश में थे, तो उसे बड़ा बुरा बुखार आया, जिसके कारण वह लंगड़ी हो गई और उसकी कमर भी झुक गई। इलाज हर तरह का कराया गया; लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ। क्वारी पुत्री के इस दुःख से गोविंदार्य की पत्नी का हृदय टूट गया। वह बीमार पड़ गई और कुछ दिनों बाद इस संसार से चल बसी।

गोविंदार्य ने अपनी पुत्री का ब्याह कर शास्त्रों के आदेश का पालन करने की भरपूर चेष्टा की। उन्होंने दहेज में काफी धन देने का भी वादा किया; लेकिन कोई भी उनकी अपाहिज और अपंग लड़की से ब्याह करने को राजी नहीं हुआ। सुंदरी साहसी लड़की थी; उसने अपने दुर्भाग्य को शांतिपूर्वक सहन किया और अपने पिता को समझाने की भी पूरी कोशिश की। स्वयं वह तमिल और संस्कृत साहित्य का अध्ययन करने में मग्न रहती।

अपंग होने पर भी सुंदरी घर का पूरा काम-काज सम्हालती थी। उसका नाम सुंदरी था, पर उसकी मां समझ नहीं पाती थी कि किस घड़ी में उसका यह नाम रखा गया कि बाद में वह इतनी कुरूप हो गई। जब उसका यह नाम रखा गया था तब यह सचमुच ही सुंदरी थी। उसकी मां उसे अपने संबंधियों के सब बच्चों से अधिक सुंदर समझती थी। उसका रंग शायद बहुत काला था, लेकिन इससे क्या ? उसकी नाक, उसका माथा उसकी भौंहें तस्वीर के मानिंद थीं। अगर उसकी टांगों और पीठ की तरफ ध्यान न दिया जाता तो वह भी बहुत-सी दूसरी लड़कियों के बराबर सुंदरी लगती थी। अपंग होने के कारण उसका नाम तो नहीं बदला जा सकता था, परंतु बंकीपुर में उसका एक नया अर्थ लगाया जाने लगा था। उसका नाम कुब्जा का पर्यायवाची बन गया था।

कमला, जिसने गुमनाम पत्र लिखा था, बंकी के ही एक धनवान जमींदार की लाड़ली लड़की थी। वह सुंदरी की सहेली थी और अक्सर गोविंदार्य के घर आती-जाती रहती थी।

"क्या बात है, कमला ? अभी छुट्टियां तो हुई नहीं; फिर तुम घर कैसे चली आईं ?" गोविंदार्य ने कमला के एकाएक आने पर पूछा।

"चाचाजी, मैंने सुंदरी के लिए एक वर ढूंढा है। बस आप अपनी मंजूरी दे दीजिये।" कमला ने जवाब दिया।

गोविंदार्य ने समझा कि यह मेरी अभागिन लड़की का मजाक उड़ा रही है, इसलिए उन्हें कुछ क्रोध-सा आया; किंतु कमला ने जो कुछ सोच रखा था और जो कुछ हुआ था, सब बता दिया।

गोविंदार्य ने रंजीदा होते हुए कहा, "कैसे बच्चों की-सी बात करती है, कमला ! भला वह सुंदरी को कैसे अपना सकते हैं ? मेरा दुर्भाग्य इतनी आसानी से टल नहीं सकता।"

"नहीं चाचाजी, वह अब हमारी मुट्ठी में हैं। हम उन्हें राजी कर लेंगी।" कमला ने कहा।

"कमला, तुम साहसी हो; लेकिन मेरी मदद तो भगवान् ही कर सकते हैं।" यह कहकर गोविंदार्य फूट-फूटकर रोने लगे।

इसपर साहसी सुंदरी ने कहा, "पिताजी, मैं हाथ जोड़ती हूं, आप

मेरे कारण दुःखी न हों।"

दूसरे दिन उन्होंने अपने घर की ओर आती हुई एक गाड़ी की खड़खड़ाहट सुनी। नरसिंह शास्त्री उसमें से धीरे-से उतरकर बाहर आये। कमला ने उनका स्वागत किया और एक आधुनिक भारतीय कन्या की निर्भीकता के साथ वह उन्हें अंदर ले गई।

नरसिंह शास्त्री ने दरवाजे पर कमला को देखकर उसे अपनी प्रस्तावित पत्नी समझा और अपने सौभाग्य पर प्रसन्न होते हुए वह भीतर घुसे; लेकिन जब असली बात का पता चला और उन्होंने सुंदरी को देखा तो उन्हें बड़ी निराशा हुई। एक क्षण के लिए उन्हें घृणा-सी हुई और उनका यह भाव उनके चेहरे पर आने ही वाला था कि जल्दी से उन्होंने अपने को सम्हाल लिया। उनका ज्ञान उथला नहीं था, उस समय उसीने उनकी सहायता की।

मद्रास से चलते समय भी उनके मन में धार्मिक विरक्ति का भाव था और उन्होंने सोचा था कि मैं भगवान् के आदेश का पालन कर रहा हूं। इसलिए उन्होंने सुंदरी को देखकर अपने मन में सोचा था, "यह मेरी परीक्षा है, मुझे इसमें सच्चा उतरना चाहिए। मैंने शास्त्रों और विद्या को जो कलंकित किया है, उसका यही प्रायश्चित्त है। इस लड़की को, जिसके साथ भाग्य ने इतनी निष्ठुरता दिखलाई है, अगर मैं अपने यहां शरण दे सकूं तो मुझे इसे अपने लिए बड़े सौभाग्य की बात समझनी चाहिए।" इस तरह उन्होंने घृणा के पहले आवेश पर विजय पाई।

कमला ने बात यहीं नहीं छोड़ी। उसने बड़ी होशियारी के साथ सुंदरी के पठन-पाठन, विशेषतः उसके संस्कृत-ज्ञान की विस्तार के साथ चर्चा की। इससे शास्त्री को तसल्ली हुई और जब सुंदरी ने उनसे बातचीत की तो उसका शारीरिक रूप मानो लुप्त-सा हो गया और केवल उसकी आत्मा चमकती रही। उन्हें विश्वास हो गया कि यह मेरी पुत्री लक्ष्मी के लिए एक आदर्श मां बन सकेगी। उन्होंने अपने मन में कहा—"मेरी आत्मा पर जो मैल जमा हुआ है, वह साफ हो जायगा और उसकी हालत सुधर जायगी। मुझे अभी तक इस बात का बोध नहीं हुआ कि शरीर और आत्मा अलग-

अलग हैं। मैं अबतक अज्ञान और अंधकार में हूं। मुझे अभी सच्चा बोध प्राप्त करना है। आत्मा की सुंदरता पर बाह्य शरीर की कुरूपता का असर नहीं पड़ता। आत्मा की एक अलग सत्ता है, जो सुंदर होती है और हमें सुख देती है। हमारे शास्त्र हमें यही विश्वास दिलाते हैं।" एक-एक कर शास्त्री को अध्ययन किया हुआ सारा वेदांत-दर्शन याद आने लगा।

बातचीत खत्म हुई और ब्याह पक्का हो गया। गोविंदार्य के हर्ष का ठिकाना न रहा।

"आप मेरे दामाद नहीं, बल्कि एक देवता हैं और मेरी रक्षा करने आये हैं।" उन्होंने शास्त्री से कहा और उनके पैर पकड़ लिये, मानो वह सचमुच कोई महात्मा हों। उन्हें अपनी पत्नी की याद आ गई। वह आंसुओं की बाढ़ रोक नहीं सके और फूट-फूटकर रोने लगे।

तब कमला ने समझाया—"चाचाजी, इस शुभ अवसर पर आपको रोना नहीं चाहिए; यह तो खुशी मनाने का समय है।"

"तुम्हारी बड़ी उम्र हो बेटी, तुम हर तरह से सुखी रहो।" गोविंदार्य ने कमला से कहा और उसे एक तश्तरी में नारियल और पान रखकर दिया।

कॉलेज में पढ़नेवाली लड़की कमला की आंखों में भी आंसू छलछला आये।

होस्टल लौटकर उसने अपनी सहेली कामाक्षी से कहा, "कामाक्षी, हमारे गीता-शिरोमणि बहुत ही नेक आदमी हैं। हमने तो सिर्फ उनका मजाक उड़ाना चाहा था और उन्हें उनकी वासना के लिए शर्मिंदा करना चाहा था; लेकिन नतीजा यह हुआ कि उनका ब्याह सचमुच पक्का हो गया।"

उसने फिर कहा, "ब्याह तिरुपति के मंदिर में होगा और सारे संस्कार एक दिन में ही समाप्त कर दिये जायेंगे। मुझे भी जाना होगा। गोविंदार्य ने कहा है कि मेरे बिना उसका काम नहीं चलेगा।"

"लेकिन हमें छुट्टी नहीं मिल सकेगी?" कामाक्षी ने कहा।

"जरूर मिलेगी, हमें ब्याह में जाना ही होगा।" कमला ने उत्तर दिया।

"तुम जाओगी तो मैं भी चलूंगी।" कामाक्षी ने कहा।

दो और लड़कियां भी उनके साथ चलने को तैयार हो गईं और इस तरह नरसिंह शास्त्री के ब्याह में तिरुपति जाने के लिए यह छोटी-सी मजेदार टोली बन गई।

"बूढ़े का ब्याह होगा शानदार।" सब लड़कियों ने एक स्वर से कहा और वे चलने के दिन का इंतजार करने लगीं।

मद्रास में इस खबर के फैलते ही धार्मिक संस्थाओं में हलचल मच गई। किसी ने पूछा, "हमने सुना है कि शिरोमणि शास्त्री ब्याह कर रहे हैं। लड़की कहां की है और उसकी उम्र क्या है ?" किसी ने कहा, आठ वर्ष की है; किसी ने कहा, बारह की है और किसी ने बताया कि जवान है। क्या बस, क्या ट्राम, जहां सुनिये, यही चर्चा थी और समाज-सुधारकों में बड़ी खलबली मची हुई थी।

आल्वारपेट में 'महिला-समानाधिकार सभा' की एक बैठक हुई, जिसमें यह प्रस्ताव बड़े जोरों के साथ पारित किया गया कि ४५ वर्ष से अधिक उम्र वाले पुरुषों का ब्याह रोका जाय। लेकिन बाद में प्रस्ताव में संशोधन करके उम्र की हद ४५ वर्ष से बढ़ाकर ४६ कर दी गई और सभा इस बात के लिए भी तैयार हो गई कि अगर ब्याही जानेवाली स्त्री की उम्र ३५ वर्ष से अधिक होगी तो पुरुष की आयु पर कोई बंधन नहीं होगा।

दो साल बीत गये। कावेरी नदी के किनारे एक छोटे-से गांव की बात है। नरसिंह शास्त्री की छोटी-सी लड़की लक्ष्मी ने अपनी मां से पूछा, "सब लोग कहते हैं कि तुम सुंदर नहीं हो; लेकिन तुम तो इतनी सुंदर हो, फिर वे ऐसा क्यों कहते हैं, मां ?"

"बेटी, मेरी कमर को देखो। क्या वह कमान की तरह झुकी हुई नहीं है ? औरों की कमर सीधी होती है। मैं जमीन पर हाथ टेककर चलती हूं। इसलिए जो भी मुझे देखता है, वह मेरी हँसी उड़ाता है।" सौतेली मां सुंदरी ने समझाया।

"क्या तुम्हारी कमर में दर्द होता है, मां ?"

"नहीं बेटी, दर्द नहीं होता।"

"तो फिर इससे क्या कि तुम झुककर चलती हो? बछिया भी तो तुम्हारी तरह चलती है ? क्या वह सुंदर नहीं लगती ?"

"लक्ष्मी क्या कह रही है ?" नरसिंह शास्त्री ने घर में घुसते हुए पूछा।

"लक्ष्मी कहती है कि मैं बछिया की तरह सुंदर हूं और लोगों का यह कहना है कि मैं बदसूरत हूं, बिलकुल गलत है। आपकी क्या राय है ?" सुंदरी ने पूछा।

"मैं उससे सहमत हूं," शास्त्री ने जवाब दिया।

पिता के आ जाने से लक्ष्मी और भी बातें बनाने लगी। वह अपनी मां के सामने खड़ी हो गई और बोली, "देखो, जब मैं तुम्हें देखती हूं तो मुझे तुम्हारा बदन नहीं दिखाई देता।"

"अगर तू आंखें फाड़कर देखे तो तुझे बदन भी दीख जायगा।" सुंदरी ने जवाब दिया।

"नहीं मां," लक्ष्मी ने जवाब दिया, "जब मैं तुम्हारा बदन देखती हूं तो तुम नहीं दिखाई देतीं और तुम्हें देखती हूं तो तुम्हारा बदन नहीं दिखाई देता।"

"कुछ समझ में आ रहा है कि यह क्या कह रही है ?" शास्त्री ने सुंदरी से पूछा।

"बकवास कर रही है, जिसका सिर है न पैर।" सुंदरी ने कहा।

नरसिंह शास्त्री ने लक्ष्मी को छाती से चिपटा लिया और वह असीम आनंद के सागर में डूब गए। बोले, "सुंदरी, आज लक्ष्मी की बात सुनकर उपनिषदों के एक श्लोक का अर्थ समझ में आ गया। उपनिषदों में भी ऐसी बच्चों-जैसी बातें कही गई हैं।"

"वह श्लोक क्या है ?" सुंदरी ने पूछा।

"वह श्लोक यह है कि आंखों में जो वस्तु दिखाई देती है, वह आत्मा है। जब मैंने तुम्हें पाया तो समझा कि एक प्रकार से मैं उस श्लोक का अर्थ समझ गया; लेकिन आज इस बच्ची की बातों ने उसका मतलब और भी साफ कर दिया है। जब दो आदमी एक-दूसरे को पूरे प्रेम के साथ देखते हैं तो शरीर उनकी आंखों से ओझल हो जाता है। आत्मा आत्मा को देखती

है। यही बात लक्ष्मी की है और यही श्लोक में भी कहा गया है।"

"तुम्हारा मतलब यह है कि आत्मा और शरीर दो अलग-अलग चीजें हैं?" सुंदरी ने पूछा।

"नहीं, यह वात नहीं," शास्त्री ने कहा, "यह तो उस सत्य का एक अंश मात्र है। इधर देखो, इस समय मैं तुम्हें देख रहा हूं, तुम्हारे शरीर को नहीं। वह दृष्टि से ओझल हो गया है। तुम्हारी आंखें, नाक, कान, मुंह, सबकुछ ओझल हो गया है, सिर्फ तुम रह गई हो, यही वह चीज है, जो नेत्रों में दिखाई देती है।"

सुंदरी ने भी उपनिषद् पढ़े थे। वह बोली, "वे इसका दूसरा मतलब लगाते हैं। जब कोई संत या ज्ञानी अपनी आंखें बंदकर गहरी समाधि में होता है तो वह अपनी आत्मा, को अपने चित्त को, आंखों में देखता है। उपनिषदों का अर्थ बतानेवाले इस श्लोक का यही अर्थ लगाते हैं।"

"इसका यह अर्थ भी है," नरसिंह शास्त्री ने कहा, "लेकिन जो लक्ष्मी कहती है, वह ज्यादा ठीक और व्यावहारिक अर्थ है। मैं न तो साधु हूं और न संत, फिर भी जब मैं तुम्हें एकाग्र प्यार के साथ देखता हूं तो तुम्हारा शरीर दिखाई नहीं देता। उस समय तुम्हारी आत्मा दिखाई देती है और उसे देखकर मैं संतुष्ट हो जाता हूं। जब हमारी आंखें एक-दूसरे से मिलती हैं और हम उससे आनंदित हो उठते हैं तो उस समय केवल तुम्हारा मुंह नहीं, बल्कि तुम्हारा पूरा अस्तित्व मेरी आंखों के सामने प्रत्यक्ष हो जाता हैं। अगर मैं तुम्हारी नाक, माथा या उस पर लगा हुआ तिलक, या तुम्हारी भौंहें देखता हूं तो तुम्हारा केवल वही हिस्सा दिखाई देता है और तुम नजरों से ओझल हो जाती हो।"

संक्षेप में यह कि शास्त्री और सुंदरी ने परस्पर प्रेम और सम्मान का व्यवहार रखते हुए सच्चा दार्शनिक और उच्च जीवन बिताया। सच पूछिये तो सुंदरता और कुछ नहीं, प्रेम है। शरीर की सुंदरता और कुरूपता तो ब्याह से पहले देखी जाती है। जो स्थायी वस्तु है, वह है चरित्र। ब्याह के बाद जब आत्मा से आत्मा का बंधन हो तो शरीर और रूप ओझल हो जाते हैं। यह बात स्त्री और पुरुष, दोनों के लिए सत्य है। उसकी नाक तो

देखो, उसके दांत तो देखो, उसका मुंह तो देखो, ये सब बातें तो बाहरी आदमी कहते हैं और इन्हीं से उनका वास्ता भी होता है; परंतु प्रेम के बंधन में बंधे हुए जोड़े के लिए इन बातों का अस्तित्व मिट चुकता है और इनसे उसे न आनंद मिलता है, न दुःख। ○

अर्द्धनारी

□□

अर्द्धनारी एक हरिजन का लड़का था। वह सेलम जिले के कोक्कलई गांव में रहता था। हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री मलकानी जब दक्षिण भारत आये तो उससे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए और उसे अपने साथ दिल्ली ले गये। वहां उन्होंने उसे एक स्कूल में भरती करा दिया और उसकी देखरेख की। वहीं उन्होंने कह-सुनकर उसे एक मशहूर व्यापारी कंपनी के दफ्तर में ६०) महीने पर नौकरी भी दिलवा दी। अर्द्धनारी ईमानदार और मेहनती था और देखने में अच्छा लगता था; इसलिए मालिकों से उसकी अच्छी तरह निभती रही। चौबीस साल की उम्र से पहले-ही-पहले उसे १५०) महीना मिलने लगे और जब कुछ समय बाद बंगलूर में उसी कंपनी की एक बड़ी मिल में जगह खाली हुई तो वह वहां २००) महीना तनख्वाह पर भेज दिया गया।

अर्द्धनारी ने दो साल बंगलूर में बड़े आनंद के साथ बिताये। उसके ऊपर का अफसर गोविंद राव, जो दो साल तक मैनचेस्टर में काम सीख चुका था, क़रीब-क़रीब उसी की उम्र का था और उसके स्वभाव और व्यवहार को पसंद करता था; इसलिए दोनों पक्के दोस्त बन गये।

गोविंद राव के पंकजा नाम की एक बहन थी। दोनों एक-दूसरे को बहुत प्यार करते थे। जब पंकजा दस साल की थी तभी उसके मां-बाप का देहांत हो गया था। वह अब बीस साल की थी और अभी तक क्वारी थी। जब कभी गोविंद राव अर्द्धनारी के घर जाता तो पंकजा भी उसके साथ जाती थी। अर्द्धनारी भी गोविंद राव से मिलने आया करता था। इस तरह उसे और पंकजा को एक-दूसरे से मिलने का अक्सर मौका मिलता था। गोविंद

राव को भी यह देखकर खुशी होती थी कि ये एक-दूसरे को चाहते हैं। वह अक्सर अपने मन में सोचा करता—"क्यों न इन दोनों का ब्याह कर दिया जाय और ये यहीं बस जायं ?"

एक दिन गोविंद राव ने अपनी बहन से पूछा—"पंकजा, क्या तुमने कभी अपने ब्याह के बारे में भी सोचा है ?"

"इसके बारे में मेरी कोई खास दिलचस्पी नहीं।" पंकजा ने उत्तर दिया।

"तो क्यों न तुम्हारा ब्याह अर्द्धनारी से कर दिया जाय ?"

पंकजा ने इस प्रश्न पर कोई आपत्ति नहीं की, लेकिन उसने इधर-उधर की चर्चा छेड़कर बात टाल दी।

कुछ हफ्तों बाद जब अकस्मात् यही चर्चा उसके सामने फिर छिड़ी तो उसने अपने भाई से कहा, "तो क्या गोपू, तुम मुझसे ऊब गये हो ? क्या मैं तुम्हें भार मालूम होने लगी हूं ?" यह कहकर पहले तो वह हंसी, पर बाद में फूट-फूटकर रोने लगी। लड़कियां, खासकर वे जिनकी मां मर चुकी होती हैं, बड़ी भावुक होती हैं।

"पगली कहीं की ! जी ऊबने और भार मालूम होने की क्या बात है ? मुझे तो बस इतना बता दो कि तुम ब्याह करना चाहती हो या नहीं ? अगर तुम नहीं चाहती तो इससे मुझे बड़ी खुशी होगी, क्योंकि उस हालत में तुम हमेशा मेरे साथ रह सकोगी।" यह कहकर गोविंद राव ने पंकजा के आंसू पोंछ दिये। कुछ रुककर उसने फिर कहा, "मां तो अब रही नहीं, पंकजा ! इसलिए ब्याह के बारे में तुमसे पूछने और तुम्हारे मन की बातों का पता लगानेवाला अब मेरे सिवा और कौन है ?"

"जब ब्याह का वक्त आयगा तो कर लूंगी; अभी से बहस करने से क्या फायदा ?" पंकजा ने कहा।

"ऐसा लगता है कि तुम दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हो। जब हमने जात-पांत का विचार ही छोड़ दिया है तो क्यों न तुम उसके साथ शादी कर लो ?"

"हां, हमें जात-पांत से तो कुछ नहीं करना है, लेकिन अभी यह तो नहीं पता कि इस बारे में उनका क्या खयाल है।"

"इसकी चिंता न करो, तुम-जैसी पत्नी पाकर तो वह अपना अहो-भाग्य समझेगा !"

गोविंद राव को विश्वास था कि इस दुनिया में उसकी बहन की बराबरी करनेवाली और कोई स्त्री नहीं।

"चर्चा जब अर्द्धनारी से छिड़ी तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। लेकिन एक क्षण बाद ही उसका मुंह उतर गया और वह बोला, "यह कैसे हो सकता है, गोविंद राव ?"

"क्यों ? इसमें अड़चन क्या है !"

"कहां मेरी जाति और कहां तुम्हारी !"

"ओः, जाति का सवाल ! वाहियात !" गोविंद राव ने जोर से हँसकर कहा, "कौन ब्राह्मण है और कौन नहीं ? हमने तो ऐसी बातों के बारे में सोचना मुद्दत से छोड़ रखा है। अगर तुम दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हो और व्याह करने का पक्का इरादा रखते हो तो जात-पांत के बारे में चिंता करने की कोई जरूरत नहीं।"

अर्द्धनारी ने गोविंद राव और पंकजा से कह रखा था कि मैं कोयमुत्तूर जिले का एक शैव मुदलियार हूं। शैव मुदलियार ऊंची जाति के शाकाहारी अब्राह्मण होते हैं। एक बार भय से अपने को शैव कह चुकने के बाद अर्द्धनारी बात बदल नहीं सका। उसे अपनी जाति के बारे में सच बात बताते हुए लज्जा आती थी। दिल्ली में कुछ लोग उसके बारे में जानते थे, किंतु बंगलूर में किसी को पता नहीं था।

"पंकजा की क्या इच्छा है ?" अर्द्धनारी ने पूछा।

"मालूम होता है कि वह तुम्हें पसंद करती है। मेरे सवालों के उसने जो जवाब दिये, उनसे पता चलता है कि वह राजी है।"

"क्या यह अच्छा नहीं होगा कि मैं स्वयं उससे बातें करके उसका इरादा मालूम कर लूं ?"

"हां-हां, क्यों नहीं ?" गोविंद राव ने उत्तर दिया।

इस तरह बात टल गई। अर्द्धनारी ने निश्चय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो, वह पंकजा को सारी बातें ठीक-ठीक बता देगा; किंतु बाद में उसका यह निश्चय ढीला पड़ गया।

"मैं बेकार क्यों उसे ये बातें बताऊं ?" अर्द्धनारी ने मन में सोचा, "अगर मैं ऐसा करूंगा तो पंकजा और गोविंद राव दोनों मुझसे घृणा करने लगेंगे। वे कहते तो जरूर हैं कि वे जात-पांत का भेद-भाव नहीं मानते, लेकिन अगर उन्हें मालूम हो जाय कि मैं अछूत हूं तो वे कभी राजी नहीं होंगे। इसके अलावा वे मुझे झूठा समझेंगे।"

अगले दिन उसने इस विषय पर फिर विचार किया और सच्ची बात कह देने के इरादे से वह गोविंद राव के घर की ओर चल पड़ा ; परंतु रास्ते में उसने अपने मन में फिर सोचा, "जब हम दोनों एक-दूसरे को प्यार करते हैं तो क्यों जात-पांत के चक्कर में पड़ें ? इस सामाजिक अन्याय को हम प्रोत्साहन ही क्यों दें ? जाति किसने बनाई है ? क्या सब ढोंग नहीं है ? मैं क्यों इस बात को इतना महत्व दूं और पंकजा से इस बारे में बातचीत करूं ? उन्होंने मुझसे साफ-साफ कह दिया है कि उन्हें जात-पांत की चिंता नहीं। फिर मैं ही क्यों इसकी चर्चा करूं ?" अंत में अर्द्धनारी ने सत्य को दबा देने का संकल्प कर लिया।

"क्या तुम मुझे सचमुच पसंद करती हो ?" उसने जाकर पंकजा से पूछा, "क्या हम ब्याह कर लें और सुख के साथ रहें ?"

"लेकिन क्या तुम ऐसा चाहते हो ?" पंकजा ने पूछा।

अर्द्धनारी का पिता मुनियप, उसका भाई रंग और उसकी मां कुप्पयी सब कोक्कलई गांव में चेरी (अछूतों के मोहल्ले) में रहते थे। अर्द्धनारी पहले दिल्ली से और फिर बंगलूर से उन्हें हर महीने बीस रुपये भेजा करता था। उनके लिए यह एक राजसी रकम थी और वे बड़े मौज से गुजारा करते थे। उन्हें यह पता नहीं था कि अर्द्धनारी कितना कमा रहा है, लेकिन हर महीने बीस रुपये पाते रहना, वे अपने लिए बड़े सौभाग्य की बात समझते थे। दुर्भाग्य से मुनियप को शराब पीने की लत थी। जब उसे हर महीने रुपये मिलने लगे तो उसकी यह लत और भी बढ़ गई। रंग इस बात को पसंद नहीं करता था, लेकिन वह बाप को रोकने में असमर्थ था। जब उसकी मां उसे अपने लिए बहू ढूंढ़ने को कहतीं तो वह यह कहकर कि अभी कुछ दिन और ठहर जाओ, बात को टाल देता।

बंगलूर में बदली हो जाने के बाद से अर्द्धनारी साल में दो बार अपने

मां-बाप से मिलने जाता था। जबसे पता चला कि बाप को शराब पीने की लत पड़ गई है तो उसे बड़ी लज्जा आई। वह अपने घर का कूड़ा-करकट और मैलापन बरदाश्त नहीं कर पाता था, इसलिए जब वहां जाता था तो एक या दो दिन ठहरकर जल्दी-से-जल्दी वापस आ जाता था।

अर्द्धनारी जब बंगलूर लौटने को तैयार होता तो उसका पिता उससे कहता, "अर्द्धनारी, हम भी तुम्हारे साथ चलेंगे।"

इस पर अर्द्धनारी जवाब देता, "हरगिज नहीं, अगर वे तुम्हें मेरे साथ देख लेंगे तो मुझे भी नौकरी से अलग कर देंगे।"

और रंग भी कहता, "हां पिताजी, हमें नहीं जाना चाहिए।"

अर्द्धनारी उन्हें बराबर रुपये भेजता रहता था, इसलिए वे उससे ज्यादा बहस नहीं करते थे। कुछ दिनों तक बात इसी तरह चलती रही।

अर्द्धनारी ने सोचा कि ब्याह हो जाने के बाद मेरे लिए सबसे अच्छा यही होगा कि मैं कहीं दूर उत्तर में चला जाऊं। वह बराबर अपने मन में कहता, "इसमें तो कोई शक नहीं कि वे मुझपर बड़े दयालु हैं, लेकिन अगर उन्हें यह पता लग गया कि मैं अछूत हूं तो बात जरूर बिगड़ जायेगी। अगर यह मान भी लिया जाय कि वे परवा नहीं करेंगे तो भी जब वे मेरे पिता और दूसरे संबंधियों की आदतें और रहन-सहन का ढंग देखेंगे तो जरूर पंकजा का जी फट जायेगा और उसके बाद शायद वह मेरा मुंह भी नहीं देखेगी।" इस विचार के साथ-ही-साथ अर्द्धनारी का सत्य को छिपाने का संकल्प भी दृढ़ बनता गया और उसने जल्दी-से-जल्दी ब्याह कर कहीं उत्तर में चले जाने का निश्चय किया। उसने अपनी कंपनी के डाइरेक्टरों को पत्र लिखा और उनसे प्रार्थना की कि उसकी बदली भारत की किसी दूसरी मिल में कर दी जाय।

एक दिन पंकजा ने अचानक कहा, "अर्द्धनारी, मैं तुम्हारी मां से मिलना चाहती हूं। हमने तय किया है कि तुम एक हफ्ते की छुट्टी ले लो और हमारे साथ कोयमुत्तूर, उटकमंड और दूसरे स्थानों की सैर करने चलो। तुम्हारी क्या राय है?"

गोविंद राव ने भी कहा, "आजकल दफ्तर में काम ज्यादा नहीं है। अगले महीने के पहले हफ्ते में चलना सबके लिए ठीक रहेगा।"

अर्द्धनारी का हृदय धड़कने लगा। उसने कहा, "हां-हां, हम ऐसा कर सकते, लेकिन मेरे पास आज ही घर से चिट्ठी आई है, जिसमें लिखा है कि गांव में बड़े जोरों से हैजा फ़ैल रहा है।"

यह सुनकर पंकजा को बहुत चिंता हुई। "हैजा !" उसने घबराहट के साथ कहा, "क्या तुमने अपने संबंधियों को वहां से दूसरी जगह जाने को लिख दिया है ? उन्हें यहीं आने को क्यों नहीं लिख देते ?"

"मैं अभी-अभी यही लिखने की सोच रहा था।" अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

तीन दिन बाद अर्द्धनारी को रंग का एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था :

छोटे भाई अर्द्धनारी को आशीर्वाद !

यहां बड़े जोरों का हैजा फैल रहा है। बहुत-से लोग मर चुके हैं और हमें भी घबराहट हो रही है। पिताजी का पहले ही जैसा हाल है। वह हमारी सलाह नहीं मानते। इस महीने तुमने जो रुपया भेजा था वह सब खत्म हो चुका है। हम सोच रहे हैं कि अगर तुम ३०) और भेज सको तो हम मकान में ताला डालकर जबतक हैजे का खतरा दूर न हो जाय तबतक के लिए सेलम चले जायं।

तुम्हारा सस्नेह,

रंग

इस पत्र को पढ़कर अर्द्धनारी को बड़ा दुःख और आश्चर्य हुआ। "इसका क्या मतलब ?" उसने सोचा, "जो बात मैं झूठ बोलने के लिए कह रहा था, वह सच निकली ! शायद भगवान् मेरी परीक्षा ले रहे हैं।" एका-एक अर्द्धनारी निश्चय न कर सका कि उसे क्या करना चाहिए। बाद में उसने सोचा कि कल रुपये भेज दूंगा।

उस रात अर्द्धनारी को नींद नहीं आई। बुरे-बुरे और लज्जाजनक विचार उसके मस्तिष्क में चक्कर काटते रहे। जब कभी उसे अपने पिता का ध्यान आता, उसका हृदय ग्लानि से भर उठता। कई बार उसके मन में विचार आता, "बाप हैजे से मर जाय तो मुसीबत से छुटकारा मिले।" लेकिन दूसरे ही क्षण वह अपने को इस भावना के लिए कोसता। सारी रात

वहं इसी तरह अपनी खाट पर बेचैनी-से करवटें बदलता रहा और सुबह ही ठंडे पानी से नहाया। डाकिया चिट्ठियां लाया और, जैसी कि उसे आशा थी, उसके गांव से एक और पत्र आया। कांपते हुए हाथों से उसने उसे खोला और पढ़ा :

"पिताजी को हैजा हो गया है। हम बहुत घबराये हुए हैं। मारिआयी हम पर दया करे। हमारे पास एक पैसा भी नहीं है। —रंग"

पत्र को पढ़कर अर्द्धनारी का मुंह स्याह पड़ गया। वह बड़ी देर तक अपनी कुरसी पर ही बैठा रहा। उस दिन उसने रुपये नहीं भेजे। दूसरे दिन भी ऐसा ही हुआ।

"तुम्हारे गांव में हैजे का क्या हाल है ?" पंकजा ने पूछा।

"अभी बहुत बुरा है।" अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

"क्या काफी में चीनी ठीक है ?" गोविन्द राव ने बीच में पूछा।

"हां, काफी बहुत अच्छी बनी है।" अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

घर लौटकर उसने देखा कि एक और पत्र आया हुआ रखा है। उसमें लिखा था :

"मां को भी हैजे के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। तुमने रुपया नहीं भेजा; हम लाचार हैं। जल्दी आओ।"

अर्द्धनारी ने उस दिन भी रुपये नहीं भेजे। उसने अपना हृदय पत्थर का बना लिया था और सोचा, "मेरे जीवन का कलंक अब हमेशा के लिए छूट जायगा। इस छुटकारे में मुझे भगवान् की दया दिखाई देती है। उसकी इच्छा से बढ़कर और कोई भी धर्म या न्याय नहीं। मैं क्यों उसे बदलने की चेष्टा करूं ? यदि मां और पिताजी दोनों मर जायंगे तो फिर पंकजा के साथ व्याह होने में कोई भी रुकावट नहीं रह जायगी।"

"दुष्ट, कैसे पाप से भरे हुए विचार हैं तेरे !" मानो किसी ने एक-एक अर्द्धनारी को धिक्कारते हुए कहा। उसने पीछे घूमकर देखा तो पंकजा को खड़ा पाया। उसे डर लगा कि कहीं भेद खुल तो नहीं गया; लेकिन शीघ्र ही दिमाग का धुंधलापन दूर हो गया और, उसने समझ लिया कि किसी ने कुछ नहीं कहा था, सबकुछ उसके चित्त का भ्रम था।

"तुम बिना आवाज दिये अंदर कैसे चली आईं ?" उसने पंकजा से पूछा।

इस पर पंकजा हँसी और बोली, "घुसने से पहले मैंने दरवाजे पर तीन बार धक्का दिया। तुम किसी बात से परेशान मालूम होते हो, तभी तुम्हें मेरे आने का पता नहीं चला।"

"मुझे अपने गांव जाना चाहिए। ऐसा मालूम होता है कि वहां बीमारी पहले से बढ़ गई है। मेरे माता-पिता वहीं हैं। मुझे उनके लिए कुछ इंतजाम करना चाहिए," अर्द्धनारी ने कहा।

"बेशक ! यह तो बहुत पहले हो जाना चाहिए था। अब अगर तुम वहां जाओ तो बड़ी होशियारी से रहना और जबतक वहां ठहरो, कोई चीज खाना-पीना मत।" पंकजा ने समझाते हुए कहा।

उसी रात अर्द्धनारी सेलम के लिए चल पड़ा, लेकिन सीधा कोक्कलई न जाकर उसने रास्ते में देर कर दी और गांव चार दिन बाद पहुंचा। उस समय तक मां मर चुकी थी और बेचारा रंग भी उसका साथ दे चुका था। अलबत्ता, शराबी बाप मौत के मुंह से निकल आया था और अब चंगा था।

"मुझे बंगलूर ले चलो। अब मैं यहां क्या करूंगा ?" मुनियप ने अर्द्धनारी से गिड़गिड़ाकर कहा। परंतु अर्द्धनारी के कान पर जूं भी नहीं रेंगी, वह पत्थर-सा बना रहा और बोला, "मैं तुम्हें काफी रुपये भेजा करूंगा, तुम यहीं रहो। मेरे साथ चलने के लिए कहना बेकार है, क्योंकि मैं तुम्हें नहीं ले जा सकता।"

बेटे के सामने बाप एक असहाय बच्चे की तरह गिड़गिड़ाया। उसने सुबकियां लेते हुए कहा, "मैं यहां नहीं ठहर सकता।"

परंतु अर्द्धनारी पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसने सोचा कि मैं पंकजा को कैसे छोड़ सकता हूं और पिता के रोने-धोने पर कान नहीं दिया। अगले दिन उसके हाथ पर दस रुपये का नोट रख वह सेलम से चल दिया।

पर उसके मन ने धिक्कारा, "हाय, क्या कर डाला तूने ! तूने अपनी मां और भाई को मार डाला। तूने ऐसा क्यों किया ? क्या तेरे-जैसा दुष्ट

ही कोई होगा ? तू अपने पिता को इस प्रकार कैसे छोड़ सका ? पंकजा से तू क्या कहेगा ?"

इन विचारों ने उसे गाड़ी में सोने नहीं दिया। बंगलूर पहुंचकर उसने अपने घर तक का रास्ता पैदल ही तय किया। फिर भीतर से कुंडी बंद कर के पड़ रहा। न तो उसने अपने आने की सूचना गोविंद राव या पंकजा को दी और न वह दफ्तर ही गया।

उसी रात उसने अपना असबाब फिर बांधा और स्टेशन पर टिकट लेकर वह सेलम की गाड़ी में जा बैठा।

सेलम में उसने सुना कि कोक्कलई में एक आदि द्रविड़ (अछूत) ने कुएं में डूबकर आत्म-हत्या कर ली है। जब वह कोक्कलई में पहुंचा तो उसे मालूम हुआ कि वह उसका ही पिता था।

किसीने उसे ख़बर दी कि मुनियप शराबी के संबंध में पुलिस चौकी पर जांच की जा रही है; परंतु वह वहां नहीं गया और छिपकर सेलम चला आया और बंगलूर की गाड़ी में बैठ गया।

"पंकजा, तुम मुझे भूल जाने की कोशिश करो।" उसने जाकर पंकजा से कहा।

"वह मैं बाद में करूंगी। पहले मुझे सेलम के हाल बताओ।"

"वे सब मर गये। इसकी वजह यह है कि उसके लिए मुझे जो करना चाहिए था, वह मैंने नहीं किया। मुझे अब अपने जीवन में कोई दिलचस्पी नहीं रह गई। मैं अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा देने जा रहा हूं और उसके बाद मैं गांव चला जाऊंगा। मुझे भूल जाओ।"

पंकजा ने अर्द्धनारी की तरफ दो-तीन बार देखा; फिर चिंतित होकर वह सबकुछ अपने भाई को बताने भाग गई।

अर्द्धनारी को ज्वर चढ़ आया। पहले डॉक्टर ने टायफॉयड बताया और फिर दिमागी बुखार। करीब एक महीने तक वह खाट पर पड़ा रहा। गोविन्द राव और पंकजा बिना आराम किये लगातार उसके पास बैठे रहे। चौथे सप्ताह के अंत में बुखार टूटा।

"अब चिंता की कोई बात नहीं।" डाक्टर ने कहा और कुछ ही दिनों में अर्द्धनारी अपनी खाट पर उठने-बैठने लगा।

"मैं अछूत हूं, पापी हूं। मैं सचमुच छूने लायक नहीं हूं, मैं झूठा हूं। मैं ब्याह नहीं करूंगा। ईश्वर के लिए मुझे भूल जाओ।" अर्द्धनारी ने कहा।

पंकजा ने हँसकर उसे तसल्ली देते हुए कहा, "इससे क्या कि तुम किस जाति के हो ! हम एक-दूसरे से अलग क्यों हों ?"

परंतु अर्द्धनारी नहीं माना। उसने कहा, "मैं जानता हूं कि तुम्हें मेरी जाति की चिंता नहीं, परंतु मैंने अपने माता-पिता का खून किया है।" और फिर उसने अपनी सारी कहानी कह सुनाई।

जब वह बिलकुल अच्छा हो गया तो उसने अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया और कोयम्बटूर वापस चला गया। अब वह संन्यासी बन गया है और मारिअम्मा के मंदिर में एक स्कूल चलाता है। □

मनहूस गाड़ी

□□

करुप की गृहस्थी अलग कर दी गई। किसानों में यह प्रथा थी कि बेटे का व्याह हो जाने पर उसके लिए एक अलग झोंपड़ा बना दिया जाता था और उम्मीद की जाती थी कि वह खुद कमा-खायगा। सचमुच यह एक अच्छी प्रथा थी। करुप के माता-पिता बूढ़े हो गये थे और गांव में अपने पुरखों के मकान में रहते थे। करुप का बड़ा भाई खेत पर झोंपड़े में रहता था। अब जब करुप अलग रहने लगा तो जमीन के तीन हिस्से कर दिये गए और उनमें-से एक करुप को दे दिया गया। बड़ा भाई अपना और अपने पिता का खेत जोतता था। सबने मिलकर करुप के लिए भी एक मिट्टी का झोंपड़ा बना दिया। उन्होंने उसे एक जोड़ी बैल और दो बकरियां भी दे दीं। करुप तीस साल का हट्टाकट्टा नौजवान था। उसकी पत्नी पार्वती गांव की सबसे सुंदर और कमेरी लड़की थी। किसान की कन्या होकर भी वह रानी-जैसी लगती थी। चींटी और शहद की मक्खी चाहे कभी सुस्त बन जाय; लेकिन पार्वती कभी खाली नहीं बैठती थी। अब वह अपने नये घर में इस तरह काम करती, जैसे वहीं जन्मी और पली हो और बीच-बीच में करुप की ओर देखकर मुस्करा देती तो करुप निहाल हो जाता और सोचता, इस दुनिया में मुझे किसी चीज़ की कमी नहीं।

पार्वती अपने मायके से कुछ रुपये लाई थी। उससे उन्होंने एक दुधार भैंस खरीद ली। वर्षा समय पर हुई और करुप ने खूब मेहनत से काम किया, इसलिए फ़सल भी बहुत अच्छी हुई। पार्वती दिन-भर काम करती और माथे पर बल न लाती। करुप, बैल, भैंस और खेत—इन्हीं में उसकी

सारी दुनिया बसी हुई थी। अवकाश के समय वह अपनी मां के घर से लाये हुए चरखे पर सूत कातती। चांदनी रात में उसकी जिठानी भी उसके पास आ बैठती और दोनों देर तक सूत काततीं और बातें करती रहतीं।

पार्वती की भैंस अच्छी दुधार नस्ल की थी। पार्वती बड़े-तड़के उठकर दही बिलोती मकान झाड़ती-बुहारती और धोती, और फिर जुलाहों की बस्ती में मट्ठा बेचने निकल जाती। पैंठ के दिन मक्खन तपाकर घी बनाती और उसे बेच देती। इस तरह वह हर हफ्ते करीब तीन रुपये कमा लेती।

एक साल बाद करुप ने अपना कारबार बढ़ाने का निश्चय किया, उसने अपनी पत्नी से कहा, "हमारा खेत छोटा है, इसलिए हमारे पास बारहों महीने काम नहीं रहता। क्यों न हम एक बैलगाड़ी ख़रीद लें और उससे कुछ रुपये कमायें? फिर तो हम बैलों से भी पूरे साल काम ले सकेंगे। चाचा के लड़के राम को देखो, वह अपनी बैलगाड़ी से हर हफ्ते कम-से-कम दो-तीन रुपये कमा लेता है। कभी-कभी तो उसे चार रुपये भी मिल जाते हैं। वीर गांव छोड़कर उडुमलपेट जा रहा है। अपना कर्जा उतारने के लिए वह अपनी ज़मीन बेच रहा है। शायद अपनी गाड़ी हमें सस्ते दामों में दे दे।"

"नहीं-नहीं, हमें वीर की गाड़ी नहीं चाहिए। हम उस मनहूस गाड़ी को नहीं खरीदेंगे, उसके आने से हमारे ऊपर भी बुरे दिन आ जायेंगे। और फिर, रुपया उधार लेकर बैलगाड़ी खरीदने की ज़रूरत ही क्या है? हमें किस बात की कमी है?" पार्वती बोली।

"पगली! वीर तो शराब पीता था और इसी लत ने उसे तबाह किया। उसकी बरबादी से गाड़ी का क्या सरोकार? गाड़ी तो बड़ी अच्छी और मजबूत है। बीस रुपये कर्ज लेने से हमारा कुछ बिगड़ेगा नहीं। उसे उतार देना नामुमकिन थोड़े ही है।"

"लेकिन मैं तो अपने रुपयों से कान के बुंदे खरीदने को सोच रही थी।" पार्वती ने कहा।

"ऐसी बेवकूफी की बातें क्यों करती है? तू तो रानी-जैसी सुंदर है। गहनों से तेरा रूप बिगड़ जायेगा।" करुप ने कहा।

"औरतें जब कोई चीज चाहती हैं तो मर्द ऐसी बातें बना देते हैं। खैर, हम औरत व्यापार की बातें क्या जानें ?अपने बापू से सलाह कर लो और जैसा ठीक समझो, करो। मुझसे क्या पूछना ?" पार्वती ने कहा।

करुप गाड़ी खरीदने पर तुला हुआ था। इसलिए जब उसने अपने बाप से पूछा तो उसने भी उसकी मर्जी के खिलाफ कुछ नहीं कहा। एक हफ्ते के अंदर-ही-अंदर गाड़ी खरीद ली गई। उसके अपने पास के सारे रुपये खर्च हो गये और गांव के जमींदार से भी चालीस रुपये उधार लेकर लगाने पड़े।

करुप अक्सर गाड़ी भाड़े पर बाहर ले जाता था। जब कभी दूर जाना होता तो रात को वह वापस न लौटता और कभी अगले दिन सुबह भी न आता। ऐसे मौक़ों पर उसका चचेरा भाई राम भी गाड़ी में उसके साथ जाता। एक साल के भीतर-ही-भीतर करुप को ताड़ी की दुकान दिखाई दी। फिर क्या था ! हर फेरे में ताड़ी की दुकान पर जाना उसका नियम हो गया। गाड़ी की कमाई दिन-पर-दिन घटने लगी और बैलों के लिए अच्छा चारा लेना दूभर हो गया। एक दिन जब करुप नशे में घर पहुंचा तो पार्वती सन्न रह गई। उसे कुछ पता नहीं था कि अबतक क्या होता रहा है।

"तुमने मुझे बरबाद कर दिया।" उसने रोकर कहा।

"चुप रह, मैंने तेरी कोई चोरी थोड़े ही की है।" करुप ने कड़ककर कहा।

पार्वती को गुस्सा आ गया, बोली, "तुमने ताड़ी पी है ?"

"हां, पी है; तुझे इससे क्या ? तेरे बाप की कमाई तो नहीं खर्च की है ? तू पूछनेवाली कौन होती है ?"

"खबरदार, जो इस घर में घुसे। जाओ अपने बाप के घर। मैंने आज रोटी-वोटी नहीं बनाई है।" पार्वती ने कहा और गुस्से में उसका मुंह लाल हो गया।

"चल मुंहजली कहीं की; मैं तेरी सड़ी हुई रोटियों के बिना मर नहीं जाऊंगा।" यह सोचकर करुप ने पार्वती को पीटने के लिए हाथ उठाया।

ऐसे झगड़े अक्सर होते और कभी-कभी करुप पार्वती को पीट भी बैठता। तब पार्वती अपने बच्चों को लेकर जिठानी के घर चली जाती और वहां करुप की बिगड़ती हुई आदतों पर बातें होतीं। स्थिति दिन-पर-दिन बिगड़ती ही गई। बैल जल्दी बूढ़े हो गये और उनमें गाड़ी खींचने का बल न रह गया। करुप ने उन्हें घाटे से एक मेले में बेच दिया और उसके पास अब इतना रुपया नहीं था कि नई जोड़ी खरीद लेता।

उसने पार्वती से कसमें खाकर प्रतिज्ञा की कि अब मैं ताड़ी की दुकान के पास भी नहीं फटकूंगा और इस तरह बातों में फंसाकर उसने उससे वे सारे रुपये ले लिये, जो उसने मट्ठा-घी बेचकर और सूत कातकर बचाये थे। फिर कुछ रुपये अपनी बड़ी विधवा बहन से उधार लेकर वह बैलों की नई जोड़ी खरीद लाया।

तीन महीने बीत गये। ज़मींदार ने अपने पुराने कर्जे के तकाजे के लिए आदमी भेजा। करुप ने हाथ जोड़कर कुछ दिन और ठहरने को कहा। इस तरह मियाद तीन बार बढ़ाई गई। आख़िरकार जमींदार के नौकर उसका एक बैल खोलकर ले गये। करुप जमींदार के पास दौड़ा हुआ गया और एक महीना और ठहरने की दुहाई मांगने लगा।

"नहीं, अब मैं एक दिन भी नहीं ठहरूंगा। इस शराबी को जूतों से पीटो। कर्ज चुकाने के लिए तो पैसा नहीं और बैलों की जोड़ी ख़रीदने के लिए पैसा आ गया! किसके कहने से तूने ऐसा किया?" ज़मींदार ने गुस्से में भरकर कहा।

"ऐसा मत कहिये, सरकार। आप तो हमारे माई-बाप हैं। एक महीने की मोहलत और दे दीजिए। मैं खुद आऊंगा और आपका रुपया जरूर दे जाऊंगा।"

"यह सब बेकार की बात है। मैं अब एक मिनट नहीं ठहर सकता। बुध की पैंठ में मैं तुम्हारा बैल बेचने के लिए भेज दूंगा।"

"ऐसा मत करिए मालिक। मेरे बाल-बच्चे तबाह हो जायंगे।" करुप रोता हुआ बोला और अपने बैल के पास जाने लगा।

"बाहर निकाल दो, इसे। बैल मत जाने देना इसका। चोर कहीं का! जा, रुपये लेकर आ, नहीं तो बुध को बैल बिकवाये बिना नहीं रहूंगा।"

गुस्से में भरे जमींदार ने कहा।

करुप ने फिर खुशामद की, "मैं बदमाश नहीं हूं सरकार ! आप मुझे थोड़ा-सा वक्त और दे दें। आपका रुपया मारा नहीं जायगा।"

"नामुमकिन।" जमींदार ने आखिरी फैसला करते हुए कहा।

"मैं आपको ब्याज दूंगा, आप अपना रुपया ब्याज के साथ ले लीजिएगा।" करुप बोला।

"कुत्ता कहीं का ! इसे जूते से पीटो। ब्याज ! ब्याज तो जरूर देगा तू ! कहां से लायेगा ब्याज ? जा, कादिर खां से रुपये उधार लेकर मेरा कर्जा चुका दे। अगर कलतक रुपये नहीं मिले तो मैं बैल को औने-पौने मूल्य में बेच डालूंगा।" जमींदार क्रोध से लाल-पीली आंखें दिखाता हुआ बोला और अंदर चला गया।

"और कोई चारा ही नहीं है, करुप," जमींदार के कारिंदे ने कहा, "कादिर साहब के पास जा, वही तेरी मदद कर सकते हैं ?"

करुप ने अपने बाप के पास जाकर खुशामद की कि बड़े भाई से कहकर रुपया उधार दिलवा दो। बूढ़े के कहने से भाई मदद करने को तैयार हो गया, लेकिन उसकी औरत ने मना कर दिया। वह बोली, "अगर तुमने रुपये उधार दिये तो फिर वापस नहीं मिलेंगे। उसे मुसलमान महाजन से ही लेने दो। हमें तो अपने ही खाने-पीने के लाले पड़े हुए हैं। इस साल बारिश अच्छी होगी, इसका क्या ठिकाना ? अगर फसल अच्छी नहीं हुई तो हम भूखों मर जायेंगे। उस आड़ेवक्त में हमारी कौन मदद करेगा ?"

लाचार हो करुप को कादिर खां की शरण लेनी पड़ी। वह किस्त पर रुपये उधार दिया करता था और उसे गांव के हर आदमी, यहां तक कि जमींदार, की भी कच्ची-पक्की की खबर रहती थी।

"तुम्हें नहीं मालूम, भाई ! जमींदार ने मुझसे रुपये मांगे हैं।" कादिर खां ने कहा।

"बड़े आदमियों की मुश्किलें तो किसी तरह दूर हो ही जाती हैं, लेकिन मेरा बैल बिक गया तो मैं कहीं का न रहूंगा। अब तो सिर्फ आप ही

मुझे उबार सकते हैं।"

"मैं क्या करूं! मेरे पास जितना रुपया था, सब मैंने जमींदार को देने का वादा कर लिया है।"

"अरे साहब, ऐसा न कहिए ; मैं तो बरबाद हो जाऊंगा। आपको गरीबों की मदद करनी चाहिए। मुझसे जमींदार की बातें क्यों करते हैं ?"

"यह तो ठीक है कि गरीबों की मदद करनी चाहिए, लेकिन मैं तो पहले ही जबान दे चुका हूं।"

बहुत देर तक इसी तरह कहने-सुनने के बाद आखिर में कादिर खां राजी हो गया। पैंतालीस रुपये के लिए करुप को साठ रुपये के दस्तावेज पर दस्तखत करने पड़े। उसने पांच रुपये महीने की किस्त देकर एक साल में सारा रुपया लौटा देने का वादा किया। सूद नहीं लिया गया, लेकिन शर्त यह ठहरी कि अगर किसी महीने करुप किस्त नहीं अदा कर पायेगा तो उसके लिए एक रुपया जुर्माना देना पड़ेगा।

"करुप, तेरी ईमानदारी और मेहनत पर यकीन करके ही मैं रुपये दे रहा हूं। देखना कोई किस्त चूकने न पाये। तू नेक आदमी है, शराब पीना छोड़ दे। तेरी स्त्री है, एक बच्चा है और खुदा ने चाहा तो और भी बच्चे होंगे। अगर तू शराब पीता रहा तो बरबाद हो जायेगा।" कादिर खां ने उसे समझाया।

कर्जा चुकाकर करुप बैल अपने घर ले आया। बचा हुआ रुपया उसने पार्वती के हाथ पर रख दिया और कहा :

"सुन, मैं तेरे आगे कसम खाता हूं कि आज के बाद से शराब, ताड़ी या सुलफ़ा छूऊंगा भी नहीं। मैं अपने पास रुपये नहीं रखना चाहता। तू इनका जो चाहे, कर। मैं तो जो कमाया करूंगा, लाकर तुझे पकड़ा दिया करूंगा।"

पार्वती ने समझा कि भगवान् ने मेरे अच्छे दिन लौटा दिये। वह बहुत खुश हुई और उसके शरीर में नई शक्ति आ गई। वह अपना काम पहले से भी ज्यादा उत्साह से करने लगी।

खेत पर अब कोई काम नहीं था और पार्वती से घर पर बिना काम से रहा

नहीं जाता था। "मुझे किसी धंधे से लगना चाहिए," उसने सोचा, "जब मेरे पति पर कर्जा है तो मैं बिना कुछ काम किये कैसे रह सकती हूं ?"

कादिर खां ने अपने पुराने मकान के पास एक नया मकान बनवाना शुरू किया। ईंट पाथनेवाले काम पर जुटे हुए थे। वहीं तीन-चार लड़कियां भी मजदूरी पर काम करती थीं। पार्वती ने भी उनके साथ काम करना शुरू कर दिया।

वह बहुत सवेरे उठती, मकान झाड़ती-बुहारती, भैंस और बकरी दुहती, मट्ठा बिलोती और फिर फौरन मट्ठा बेचने गांव में चली जाती। गाहकों के कह-सुनकर वह जल्दी निबट लेती और वे भी उसे देर तक न रोकते, क्योंकि उसका सबसे हेल-मेल था। घर आकर वह लस्सी पीती, बच्चे को दूध पिलाती और उसे जिठानी के पास छोड़कर अपने काम पर चली जाती। दोपहर को उसे बस इतनी-भर छुट्टी मिलती कि किसी तरह दौड़ी-दौड़ी जाकर लस्सी पी ले, बच्चे को दूध पिला दे और फिर काम पर भाग जाय। ठेकेदार उसे सूरज छिपने के बाद छुट्टी देता, इसलिए जब वह घर लौटकर खाना बनाना शुरू करती तो अंधेरा हो जाता। सबकुछ वह खुशी-खुशी करती। काम बड़ी मेहनत का था और एक दिन में सिर्फ दो आने मजदूरी के मिलते थे। फिर भी मुसीबत के दिनों में यही बहुत था।

पार्वती को इस विश्वास से बड़ा ढाढ़स रहता कि मेरा पति अब शराब नहीं पियेगा और वह सुधर गया है। करुप ने एक-दो महीने तक अपना वचन निभाया भी, लेकिन फिर उसकी पुरानी आदतें उभर आईं और उसकी कमाई ताड़ी की दुकान में जाने लगी। पार्वती के पल्ले एक पैसा भी न पड़ता। करुप घर से लगातार दो-दो तीन-तीन दिन तक बाहर रहता और लौटता तो ढोरों के लिए थोड़ा-बहुत घास-दाना ले आता और बाकी आमदनी के लिए इधर-उधर की झूठी बातें बना देता। पार्वती सोचती कि भला थोड़े-से रुपयों के लिए वह झूठ क्या बोलेगा। लेकिन कुछ दिनों बाद करुप ने इसकी भी जरूरत नहीं समझी और हारकर पार्वती ने भी उससे पूछना बंद कर दिया। फिर भी पैसे कमाने के लिए वह दिन-रात घर पर और घर के बाहर भी काम करती रही।

करुप किस्त नहीं चुका पाया। एक दिन कादिर खां ने आकर रुपये

का तकाजा किया और बहुत खरी-खोटी सुनाई। यों तो पार्वती को भी मिस्त्री से ऐसी कड़वी बातें सुनने की आदत पड़ गई थी, लेकिन कादिर खां की गंदी बातें उससे सुनी न गईं। भीतर जाकर उसने जोड़े हुए सारे पैसे बटोरे और कादिर खां के सामने लाकर पटक दिये। करुप के बार-बार छीनते-झपटते रहने पर भी वह कुछ-न-कुछ बचाती ही रहती थी।

उस दिन पार्वती की आंखों के आंसू सूखे नहीं। जी ठीक नहीं था, फिर भी अगले दिन वह रोज की तरह काम पर चली गई। कादिर खां की गंदी बातें उसके मन से नहीं उतरीं। अबतक तो इस बात की परवा किये बिना ही कि मैं औरत हूं, वह मेहनत के साथ और खुशी-खुशी काम करती रही थी; लेकिन अब उसमें एकाएक परिवर्तन आ गया। उसे अपने साथ काम करनेवाले मर्दों की बातचीत से डर लगने लगा। जैसे-जैसे उसका यह डर बढ़ता गया वैसे-वैसे लफंगों की बदमाशियां भी बढ़ती गईं। कादिर खां का लड़का काम की देखभाल करता था। अब उसकी आंखों और बातों में पाप झलकने लगा।

जब से पार्वती ने मजदूरी का काम शुरू किया था, वह ठीक तरह से अपने बच्चे की देखभाल नहीं कर पा रही थी। नतीजा यह निकला कि बच्चा कमजोर हो गया और एक दिन उसे ज्वर चढ़ आया। बीमारों के लिए गांवों में न डाक्टर होते हैं, न दवाएं। दो-एक बार बच्चे को गरम लोहा छुआने का टोटका किया गया, लेकिन उससे कोई लाभ नहीं हुआ; एक हफ्ते बीमार रहकर उसने सदा के लिए आंखें मीच लीं।

करुप औरतों की तरह रोने लगा। उसके पिता ने उसे समझाते हुए कहा, "बेटा, भगवान् ने दिया था, उसीने ले लिया।"

"लेकिन चाचा, भगवान् मेरी ऐसी परीक्षा क्यों ले रहा है? मैंने तो कभी किसी को नहीं सताया।" पार्वती ने रोकर ससुर से कहा।

"पगली, रोती क्यों है? अभी तू बूढ़ी थोड़ी ही हुई है! अभी तो तेरे सात-आठ बच्चे हो सकते हैं। खेत में डाले हुए सारे बीज थोड़े ही फलते हैं और फिर भी हम उनके लिए रोते नहीं।"

"अब मुझे बाल-बच्चे नहीं चाहिए," पार्वती बोली, "मैंने इस दुनिया में काफी सुख-दुःख देख लिया है। अब तो बस यही चाहती हूं कि भगवान्

मुझे ऊठा ले।"

इस पर बूढ़े ने हँसकर कहा, "अपने आदमी को समझा कि वह जो थोड़ा-बहुत कमाता है, उसे ताड़ी में न फूंके। फिर तो तुम लोग जल्दी इस दुःख को भूल जाओगे और तुम्हारे और बच्चे होंगे और सुख के साथ जीवन बिताओगे।"

तब करुप ने प्रतिज्ञा की, "मैं अपनी जान की कसम खाकर कहता हूं कि इस जहर को अब छूऊंगा भी नहीं। अगर मैं इसे फिर छूऊं तो गोली से उड़ा देना।"

३

पार्वती की मुसीबतें यहीं खतम नहीं हुईं। उसके बुरे दिन चलते रहे। अगले ही बुध को जब करुप रामपुर की ताड़ी की दुकान के पास से गुजरा तो अपनी कसम-वसम सब भूल बैठा। वह अपनी गाड़ी पर कुछ बोरे लादकर तिरुपुर ले गया था। वहां से दूसरे गाड़ीवानों के साथ लौटते हुए वह ताड़ी की दुकान के सामने ठहर गया और चिल्लाकर बोला, "अरे, ताड़ी पीने के लिए कौन उतर रहा है ? मुझे तो पीनी नहीं है। मैं तो इस कम्बख्त चीज के पास भी नहीं जाऊंगा।"

"अगर तू नहीं पीना चाहता तो अपना रुपया सेंतकर रख। गला क्यों फाड़ता है ?" दूसरे गाड़ीवान ने जवाब दिया और वह गाड़ी से कूदकर ताड़ीखाने में घुस गया। थोड़ी देर बाद करुप भी उसके पीछे-पीछे पहुंचा। उसने अपने मन में कहा, "आज और सही। आज के बाद फिर कभी नहीं पिऊंगा।"

दूसरे बुध को भी ऐसा ही हुआ। उसने अपने साथी से कहा, "जब हमारे पास पैसा है तो क्यों न बेफिक्री से मौज उड़ायें ?"

"ऐसी की तैसी पैसे की !" उसके साथी ने कहा, "न यह हमारे साथ आया है, न मरने के बाद हमारे साथ जायगा। अपने गाढ़े पसीने की कमाई को हम जैसे चाहें, खर्च करें। हमें रोकनेवाला कौन है ?"

इस पर एक और पियक्कड़, जो इनकी बातें सुन रहा था, फिलासफी झाड़ता हुआ बोला, "तुम ठीक कहते हो दोस्त ! यह दुनिया दो दिन की है और यहां सब धोखा-ही-धोखा है। पता नहीं जो है वह कल रहे या न

रहे । कौन जीता है यहां हजार साल तक ? आंखें बंद हो जायंगी तो यह रुपया किसके काम आयेगा ? न मेरे, न तुम्हारे ।"

"किसी के नहीं, न मेरे, न तुम्हारे । यह तो उस आदमी का है, जो ताड़ी-खाने में बैठता है ।" चौथे ने कहा और सब खिल्ली मारकर हंस पड़े ।

"तुम सब गधे हो ! कैसी शास्त्रियों-जैसी बातें करते हो ! देखो तो यह चीज हलक से नीचे उतरते ही कैसी गरमी भर देती है ।" दूसरे ने कहा ।

"इन बनियों को ठोकर मारनी चाहिए । बदमाश हमें लूट रहे हैं । इन्होंने गाड़ियों का भाड़ा कम कर दिया है ।" करुप बोला ।

अंधेरा होने तक वे इसी तरह की बातें करते रहे और फिर अपनी-अपनी गाड़ियों में बैठकर चलते बने ।

क़ादिर खां को दूसरी किस्त देने की तारीख बिल्कुल पास आ गई । पार्वती ने करुप से कहा कि उसके तकाजा करने से पहले ही रुपये दे आओ । इस पर करुप बोला, "मरने दो कमबख्त को । अगर उसने अबके आकर बक-बक की तो मैं उसकी खोपड़ी फोड़ दूंगा ।"

शायद दूसरे कामों में लगे रहने की वजह से क़ादिर खां बहुत दिनों तक नहीं आया और करुप भी उस बात को भूल गया ।

एक दिन कादिर खां का बेटा इस्माइल आया, लेकिन रुपये मांगने की बजाय उसने करुप से पूछा, "मिर्चों की कुछ बोरियां रामपुर पहुंचा दोगे ?"

"मुझे कुमार कौंड का भूसा ले जाना है । एक हफ्ते पहले से ही उसने मुझसे कह रखा है ।" करुप बोला ।

"यह नहीं हो सकता । कुमार कौंड के भूसे की ऐसी जल्दी नहीं, लेकिन अगर हम आज बोरियां न भेज सके तो एक अच्छा सौदा हाथ से निकल जायेगा ।" इस्माइल ने कहा ।

आखिरकार करुप राजी हो गया । जब इस्माइल ने अपने रुपयों का तकाजा न करने की कृपा की थी तो वह ही कैसे मना कर सकता था !

उसी शाम को, जब पार्वती अपने घर में अकेली खाना बना रही थी, इस्माइल खां आया । बाहर ही रुककर उसने पूछा, "करुप अभी लौटा

या नहीं !"

"अभी नहीं।" पार्वती ने जवाब दिया।

"ठीक है, वह इतनी जल्दी कैसे आ सकता है ! रास्ते में ताड़ीखाना जो है !" यह कहता हुआ इस्माइल खां अंदर चला आया।

"हां, ये ताड़ीखाने इसलिए चलते हैं कि गरीब आदमी बरबाद हो जायं और नरक का दुःख भोगें।" पार्वती ने जवाब दिया।

पार्वती से बिना पूछे ही इस्माइल बैठ गया। पार्वती ने सोचा कि करुप के आने की इंतजार कर रहा है, इसलिए उसने कुछ चिंता नहीं की और अपने में काम में लगी रही।

इस्माइल कहता रहा, "क्या तुम अपने आदमी की आदतों से तंग नहीं आ गई हो।"

"यह कैसे हो सकता है, साहब ? अच्छे हों या बुरे, हमें तो अपने आदमियों के साथ निभाव करना ही पड़ता है।" मुंह फेरे-फेरे पार्वती ने कहा।

"ठीक है, वह तुम्हारा ब्याहता है। तुम उसे छोड़ कैसे सकती हो ?" इस्माइल ने कहा।

कुछ देर बाद उसने दया दिखाते हुए फिर कहा, "यह कैसी बदनसीबी की बात है कि तुम-जैसी खूबसूरत औरत का एक शराबी से पाला पड़ा है !"

पार्वती ने कोई उत्तर नहीं दिया। थोड़ी देर बाद करुप की इंतजार किये बिना ही इस्माइल चला गया।

दूसरे दिन इस्माइल ने फिर किसी काम के बहाने करुप को बाहर भेज दिया और शाम को वह पार्वती के घर आया। अपने साथ वह थोड़ा-सा खजूर का गुड़ लेता आया और पार्वती को जबरदस्ती देकर बोला कि यह मूप से एक आसामी ने ऐसे ही भेंट भेज दी थी।

"तुम्हें देखकर मुझे इतनी खुशी होती है कि क्या बताऊं !" इस्माइल बोला।

पार्वती ने मन-ही-मन में सोचा कि पता नहीं, इन सब बातों का क्या मतलब है और वह डर गई।

जब मैं तुम्हारे पास आता हूं तो तुम डर क्यों जाती हो ?" इस्माइल ने कहा, "क्या तुम सोचती हो कि मैं तुमसे रुपयों का तकाजा करूंगा ? मुझे रुपयों की परवा नहीं है। बस, तुम हँस-बोल लिया करो।"

बहुत दिनों तक पार्वती ने अपने को पतन के गड्ढे में गिरने से बचाया, लेकिन जब-जब वह करुप को ताड़ी पिये देखती तब-तब उसकी दृढ़ता कम होती जाती और एक दिन उसमें दुर्बलता आ ही गई।

कीरमबूर के ताड़ीखाने के बाहर, दीवार में बनी छोटी खिड़की के पास जहां से ताड़ी मिलती थी, बहुत-से चमारों, कोलियों और दूसरे अछूतों का जमघट लगा हुआ था और वे ऊटपटांग शोर मचा रहे थे। अंदर भी थूक, धूल और गंदगी के मारे नरक-सा दिखाई देता था। मक्खियां भिनक रही थीं और ताड़ी की बदबू से नाक सड़ी जा रही थी। चारों ओर पियक्कड़ों की टोली-की-टोली बैठी हुई ऊधम मचा रही थी।

"अगर तूने फिर ऐसी बात मुंह से निकाली तो दांत तोड़ डालूंगा।" करुप ने कहा।

"दांत तोड़ डालेगा! और तू! तू जो अपनी औरत तक को सीधा नहीं रख सकता! खूब! जरा इस दांत तोड़नेवाले की सूरत तो देखो।" पलनि ने जवाब दिया।

इस पर करुप ने ताड़ी का कुल्हड़ उठाकर तड़ाक से पलनि के मुंह पर दे मारा। पलनि की नाक से खून का फव्वारा छूट पड़ा।

एक ने चिल्लाकर कहा, "उल्लुओ, क्यों ताड़ी का नाश कर रहे हो! अरे, कहीं धोखेबाज औरतों के लिए ऐसी अच्छी चीज बरबाद की जाती है! तिरिया का क्या विश्वास! वे सब-की-सब बेवफा होती हैं।"

पलनि की नाक से खून बहता रहा। "अरे पलनि मर गया।" एक ने कहा और उसके पास जाकर उसके मुंह पर से खून पोंछा। पलनि को चोट नहीं लगी थी। उसने गुस्से में खड़े होकर एक ईंट करुप पर तानकर फेंकी। करुप कतराकर अपने को बचा गया।

दुकानवाले ने चिल्लाकर कहा, "दुकान के अंदर लड़ाई मत करो।"

करुप बाहर भागा। पलनि भी उसके पीछे दौड़ा, लेकिन चौखट पर

ठोकर खाकर गिर पड़ा। करुप गाड़ी में जा बैठा और बैलों को हांककर जोर-जोर से चिल्लाता और गालियां देता हुआ चला गया।

आज करुप रोज से जल्दी पहुंच गया। दरवाजा अंदर से बंद था। करुप ने चिल्लाकर आवाज दी, "अरी, दरवाजा बंद करके अंदर क्या कर रही है ? मैं बाहर इंतजार में कब तक खड़ा रहूं ? दरवाजा खोल और बैलों को पानी पिला।"

अंदर किसी के चलने की आहट सुनाई दी, लेकिन दरवाजा नहीं खुला। करुप आवाजें देता रहा। कुछ देर बाद पार्वती बाहर आई और करुप के सामने खड़ी होकर बोली, "मेरे साथ आकर जरा भैंस को तो देखो। इसे न जाने क्या हो गया है ! लातें मारती है और दूध नहीं निकालने देती।"

"भैंस जाय भाड़ में ! मुझे प्यास लगी है। थोड़ा पानी ला।" यह कहता हुआ करुप अंदर चला गया।

इस्माइल भीतर था। करुप को आते देख वह दीवार के सहारे-सहारे भाग निकलने की कोशिश करने लगा, लेकिन करुप की दृष्टि से बच न सका।

"बदमाश कहीं की !" करुप दहाड़ा और पास पड़ी हुई कुदाली उठाकर उसने पार्वती पर फेंकी।

फिर उसने दरांती उठाई और भागते हुए इस्माइल पर पूरी ताकत से तानकर मारी। इस्माइल घायल होकर गिर पड़ा और उसके सिर से खून की धारा बह निकली। इसके बाद करुप पार्वती की ओर झपटा, लेकिन वह भागकर जेठ के घर चली गई। थोड़ी दूर तक करुप ने उसका पीछा किया, लेकिन पड़ोसियों को अपनी ओर आते देख वापस चला गया। उसी वक्त उसने देखा कि इस्माइल फिर उठकर भागने की चेष्टा कर रहा है। वह उसकी ओर पागल की तरह लपका और बोला, "आज तुझे जान से मारकर ही रहूंगा।" लेकिन उस समय तक बहुत-से आदमी इकट्ठे हो गये थे। उन्होंने उसे पकड़कर उसके हाथ से दरांती छीन ली।

करुप और पार्वती रामपुर की पुलिस चौकी पर अलग-अलग कोठरियों में

बंद कर दिये गए।

बहुत-से सिपाही पार्वती के सींखचों के सामने घूम रहे थे और उसे देख-देखकर मुस्करा रहे थे। वे इस बात की ताक में थे कि किसी तरह पार्वती से बात करने का मौका मिले। लेकिन वह रंज में डूबी हुई थी। उसकी आत्मा को बड़ा कष्ट हो रहा था और उसकी दशा उस जानवर-जैसी हो रही थी, जो जंगलों की आज़ादी में पला हो और पकड़कर पहली बार कटघरे में बंद किया गया हो।

"सारी बातें सच-सच बता देगा, तभी हम तुझे छुड़ाने की तरकीब सोच सकेंगे।" दारोगा ने करुप से कहा।

"छिपाने की क्या बात है? मुझे तो कुछ खबर ही नहीं! करुमांडूर से मैं शुक्रवार को लौटा।" करुप ने जवाब दिया।

"इस तरह की गड़बड़ बातों से कोई फ़ायदा नहीं। तेरी औरत ने सब बता दिया है।"

"अच्छा! चुड़ैल ने सबकुछ कह दिया? उस कमबख्त की वजह से मैं बरबाद हो गया।"

"हां ठीक है, औरत ही सारी मुसीबत की जड़ होती है। अच्छा, अब सारा किस्सा बयान कर डालो।"

"अब मुझे क्या बताना रह गया। अभी तो आप कह रहे थे कि मेरी औरत ने सब भेद खोल दिया है।"

"यह तो ठीक है, लेकिन हमें तो तुमसे कबूलवाना है। अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो सात साल की सख्त सजा भुगतनी पड़ेगी। समझे?"

"भुगतने दो सात साल की सजा। मैं कुछ नहीं बताऊंगा।"

"नरमी से पूछने पर यह गंवार कभी ठीक-ठीक नहीं बतायेगा। इससे तो जबरदस्ती कबूलवाना पड़ेगा।" पास खड़े हुए एक सिपाही ने कहा। फिर उसने कुछ ऐसी बातें करने को कहीं, जो यहां लिखी नहीं जा सकतीं।

"हां-हां, इसकी अच्छी तरह से देखभाल करो।" दारोगा ने 'देखभाल' शब्द पर एक विशेष ढंग से जोर देते हुए कहा।

पार्वती से पूछताछ हुई।

"देख औरत, तू बेकसूर मालूम होती है। अगर तू सच-सच बता

देगी तो बच जायगी। क्या जुम्मे की शाम को कादिर खां अपने बेटे इस्माइल के साथ तेरे घर गया था ?" जमादार ने पूछा।

"बाप और बेटा दोनों? नहीं।" पार्वती ने कहा।

"हूं ! तो इस्माइल अकेला गया था ?" जमादार ने कहा और पास खड़े हुए सिपाहियों की तरफ आंख मारी।

"सरकार, मुझसे ऐसी बातें न करें। मेरे घर मुसलमान का क्या काम ? एक औरत से ऐसे गंदे सवाल आप कैसे पूछ सकते हैं ? मुझे घर भेज दीजिए। वहां मेरे सास-ससुर हैं। अगर आप उनसे पूछेंगे तो वे सब बता देंगे !"

"ओः, तो तू घर जाना चाहती है ! ऐसी जल्दी क्या है ! देख अगर तू सच बोलेगी तब तो घर जा सकेगी, नहीं तो तुझे यहीं रहना पड़ेगा।"

"ओ भगवान् !" पार्वती रोकर बोली।

"सीधे-सीधे पूछने से यह कुछ नहीं बतायेगी। बड़ी चालाक औरत है। इस कुतिया ने न जाने कितने नौजवानों को बरबाद किया है।" जमादार बोला।

"क्या आपके लड़कियां नहीं हैं ? एक बेगुनाह और गरीब औरत पर तरस खाइये और मुझे अपनी बहन समझिए।" पार्वती ने गिड़गिड़ाकर कहा।

"अरे, लाना तो गरम लोहा ज़रा।" जमादार चिल्लाकर बोला।

"हुजूर, मेरे आदमी से पूछ लें। वह सब बातें बता देगा। बेकार एक मासूम औरत को क्यों सताते हैं ?"

"तो तू क्या सोचती है कि हमने तेरे आदमी से नहीं पूछा ? हम उससे पूछ चुके हैं, उसने सबकुछ बता दिया है।" दारोगा ने कहा।

"क्या सचमुच उसने सबकुछ कह दिया है ?" पार्वती ने दुःखी होकर पूछा।

"हां-हां, सबकुछ बता दिया है। वह कहता है कि सबकुछ तेरी बदमाशी की वजह से हुआ है।"

"ओ मेरे राम !" पार्वती बिलख-बिलखकर रोने लगी और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

"देख औरत, रोने-धोने से काम नहीं चलेगा। इन बातों से तू हमें धोखा नहीं दे सकती। तू बनना तो खूब जानती है ! सच बता, कितनों को तबाह कर चुकी है तू ?"

"ऐसी बातें मत करिये, सरकार ! आप सब तो मेरे भाई के बराबर हैं। उस आदमी ने मुझसे अपना रुपया मांगा था।"

"अच्छा, तो अब आई ठीक रास्ते पर !" जमादार ने कहा।

"मैंने आपसे कहा न था, दारोगा साहब ?" वह दारोगा की ओर मुड़ता हुआ बोला और फिर पार्वती की तरफ देखकर कहने लगा ! "ऐ औरत ! इधर सुन। अगर तू सच बता देगी तो हम वादा करते हैं कि तुझे छोड़ देंगे और तेरा आदमी भी थोड़ी-सी सजा पाकर छूट जायगा। हम औरत-जाति को जेल भेजना नहीं चाहते।"

"हजूर, मुझे आज रात घर जाने दीजिये। फिर मैं सबकुछ बता दूंगी।" पार्वती ने कहा।

"अच्छी बात है, इसे घर जाने दो। ऐसा मालूम होता है कि यह सच्ची बातें बताने को तैयार है।" दारोगा ने कहा।

"अगर यह घर चली गई तो फिर सच बात कभी नहीं बतायगी।" जमादार ने दारोगा को सावधान करते हुए कहा।

इसपर दारोगा ने सिपाही के कान में कहा, "हमने इसे गिरफ्तार नहीं किया है, सारी रात हवालात में कैसे रख सकते हैं ?"

"बहुत अच्छा, तो हम इसे पहरे में घर भेज देते हैं और कल फिर पहरे में ही बुला लेंगे।" सिपाही बोला।

करुप के बाप ने अपने बड़े बेटे से एक वकील करने को कहा। खर्च के लिए उन्होंने करुप की गाड़ी बेच दी और उन रुपयों के निबट जाने पर दूसरे गांव में किसी संबंधी के पास उसकी भैंस गिरवी रखकर कुछ और रुपया उधार ले लिया। पार्वती को उन्होंने जी भरकर कोसा। उनकी समझ में वही सब मुसीबतों की जड़ थी।

करुप के वकील ने मजिस्ट्रेट के सामने गवाही पेशकर यह साबित करने की कोशिश की कि दुर्घटनाओं के समय करुप कुरुम डूर में था। उसने

पूरे तीन घंटे तक जिरह की, जिसे सुनकर करुप के भाई-बाप को बड़ी खुशी हुई।

क़ादिर खां ने भी हलफ उठाकर गवाही दी। उसने बयान में कहा, "मैं अपने बेटे के साथ करुप के घर रुपये का तक़ाजा करने गया था, वहां करुप ने मुझे गालियां दीं और जब हमने अपने रुपयों के लिए ज्यादा जोर दिया तो करुप ने हंसिया निकालकर मुझपर हमला किया, लेकिन मेरा लड़का इस्माइल बीच में आ गया और चोट उसको लगी। तकदीर से उसकी खोपड़ी बच गई और सिर्फ दाहिना कान ही कटकर रह गया, नहीं तो वह वहीं ढेर हो जाता।"

पार्वती की भी गवाही ली गई। वकील के सिखाने के मुताबिक उसने हर बात से इंकार कर दिया और कहा कि मैंने जो बयान पुलिस के सामने दिया था, वह मुझसे जबरदस्ती दिलवाया गया था।

मजिस्ट्रेट ने मुकदमा सेशन के सिपुर्द कर दिया।

अब करुप के बैल भी बेच डाले गये और सेशन की अदालत के लिए नया वकील किया गया। मुकदमा खत्म होने तक के लिए पार्वती भाई के पास रहने पीहर चली गई।

पार्वती का भाई बहुत गरीब था। खाने-पीने तक का गुजारा मुश्किल से होता था। उसकी स्त्री नल्लायी पार्वती को अपने साथ आकर रहते देखकर जल-भुनकर राख हो गई। एक दिन जब पार्वती दरवाजे के पास खड़ी अपने भाई से रो-रोकर बातें कर रही थी, नल्लायी बाहर आई और चिल्लाकर बोली, "हम ऐरे-गैरे को अपने घर में ठहरा नहीं सकते। यहां तो अपने ही रोटी के लाले पड़ रहे हैं।"

फिर बाहर से दरवाजा बंद कर वह खेत पर चली गई।

"पार्वती, गाय के छप्पर में से गोबर इकट्ठा करले और खेत पर ले जा।" उसके भाई ने कहा। पार्वती मुफ्त रोटियां नहीं तोड़ती थी। दिन-रात कड़ी मेहनत कर वह घर के काम में भावज का हाथ बंटाने की कोशिश करती थी, फिर भी भावज का हृदय नहीं पसीजता था। वह सदा पार्वती का अपमान करती रहती और बेचारी पार्वती सबकुछ सब्र के साथ सह लेती थी।

एक दिन सुबह ही एक सिपाही आया। सेशन की कचहरी में करुप्प का मुकदमा पेश होनेवाला था, इसलिए उसने पार्वती से गवाही देने चलने के लिए कहा। पार्वती भावज के ताने-तिशनों से इतनी दुःखी हो गई थी कि इस सम्मन तक से उसे कुछ तसल्ली हुई। सिपाही लंबे कद का बड़ी-बड़ी मूछोंवाला एक बूढ़ा मुसलमान था। देखने में वह बड़ा भयानक लगता था, लेकिन उसकी बातों में बाप की-सी ममता थी।

वे ईरोड की तरफ, जहां उन्हें ट्रेन पकड़नी थी, पैदल जा रहे थे। सिपाही ने पार्वती से कहा, "बहन, सारी बातें सच-सच बता देना। मुमकिन है कि इससे साहब को तुम पर रहम आ जाय और वह तुम्हारे आदमी को रिहा कर दें।"

"मैं सच बात कैसे बता सकती हूं, सिपाहीजी ? बड़ी बेइज्जती होगी।"

"बेइज्जती की क्या बात है ? आदमी से भूल हो ही जाती है। ऐसा तो शायद ही कोई हो, जिसने एक दफा भी इस तरह धोखा न खाया हो। खुदा हम सब पर निगाह रखता है, फिर भी वह कभी-कभी हमें गुनाह करने ही देता है। यह सब उसी की मर्जी से होता है।"

"तो तुम्हारी राय है कि मुझे सबकुछ बता देना चाहिए ? मैं बिरादरी से निकाल दी जाऊंगी और मेरा आदमी मुझे अपने घर में नहीं घुसने देगा। तब मैं क्या करूंगी ?"

"अगर तुम सच बोल दोगी तो तुम्हारा आदमी छः महीने की ही सजा पाकर छूट जायगा, नहीं तो छः साल के लिए जायगा। बिलकुल इसी तरह का मुकदमा पहले हो चुका है। अगर इस वक्त तुम अपने आदमी की मदद करोगी तो वह तुम्हारा एहसान मानेगा और मंदिर में कुछ भेंट-पूजा चढ़ाकर तुम्हें फिर जाति में मिला लेगा। चाहे जो कुछ हो, सच बोलना हमेशा अच्छा होता है।"

पार्वती चुप हो गई। आत्मा ने कहा कि सच बोल देना चाहिए; लेकिन दूसरे क्षण उसके मतिष्क में कुछ और विचार उठे, जिन्होंने इस सद्-भावना को दबा दिया। भय और घबराहट से उसका दिमाग चकराने लगा और वह मन-ही-मन में भगवान् को याद करने लगी।

ईरोड पहुंचकर सिपाही ने उसे रेल के डिब्बे में बैठा दिया। पार्वती

के लिए रेल में सफर करने का यह पहला अवसर था। स्टेशन की भीड़ और ट्रेन की रफ्तार से वह डर-सी गई। धीरे-धीरे सब बातें उसके विचारों की उलझन में मिल गईं और उसे हर चीज घूमती-सी दिखाई देने लगी।

ट्रेन तेजी से चल रही थी। एकाएक मुस्कराता हुआ एक लड़का न मालूम कहां से आ खड़ा हुआ और गाने लगा। वह अंधा था। चिथड़ा पहने हुए एक दूसरा लड़का भी उसके साथ ही खड़ा होकर गाने लगा।

"बदमाशो, कहां छिपे हुए थे अबतक ?" सिपाही बोला। लड़के बिना उत्तर दिये मुस्कराते और गाते रहे। वे बड़े प्रेम से गा रहे थे और उसके गाने में भावों की एक ऐसी सुकुमारता थी जो बड़े-बड़े संगीत-विद्यालयों में नहीं, बल्कि गलियों में सीखी जाती है। गाना खत्म हो जाने पर अंधे लड़के ने अपना हाथ फैलाया और दूसरे ने उसे पकड़कर गाड़ी में चारों तरफ घुमाया। सब लोगों ने उन्हें कुछ-न-कुछ दिया। पार्वती ने भी अपनी धोती के छोर से एक पैसा खोलकर उसे दे दिया। सारे दिन वह गीत उसके कानों में गूंजता रहा। उसके गूढ़ अर्थ को वह समझ तो न सकी; लेकिन कुछ कड़ियां और लड़के की वेदनाभरी आवाज उसे बार-बार याद आती रही।

गाने का अर्थ था—"मां और सगे-संबंधियों से छिपकर मैंने क्या-क्या पाप नहीं किये ? क्या मैंने मारकर खाया नहीं और खाकर मारा नहीं ? फिर भी क्या मैं इच्छा को रोकना सीख सकी ?—वह इच्छा, जो दिन-दिन अधिकाधिक उस वस्तु को चाहती है, जिसके लिए कभी इच्छा की ही नहीं जानी चाहिए। क्या जाति और धर्म का विरोध करके मेरे जन मुझे स्वीकार करेंगे ? क्या धर्मवाले मुझे अंगीकार करेंगे ?—मुझे, जिसने, ओ मेरी बहन, निर्लज्जता के साथ धूर्ततापूर्ण जीवन बिताया है।"

सेलम पहुंचकर सिपाही पार्वती को एक गरीबों के ढाबे में ले गया और ढाबेवाली से पार्वती को 'आधी खूराक' देने के लिए कहा। 'आधी खूराक' ढाबों का एक विशेष शब्द होता है।

ढाबेवाली ने पार्वती से सेलम आने का कारण पूछा और जब पार्वती ने यह बताया कि मैं एक सेशन के मुकदमे की गवाही देने आई हूं, तो उसके

चारों तरफ भीड़ इकट्ठी हो गई। वे सब आदमी लंका में चाय के बगीचों में काम करने के लिए ले जाये जा रहे थे।

उस दिन अदालत में खून का एक पुराना मुकदमा चल रहा था, इसलिए करुप का मुकदमा पेश नहीं हुआ। दूसरे दिन जब मुकदमे की सुनवाई हुई तो पार्वती गवाही देने के लिए नहीं बुलाई गई। सरकारी वकील ने कहा कि मुझे उसकी आवश्यकता नहीं है।

लेकिन करुप के वकील ने कहा कि मैं उससे मुजरिम के बारे में गवाही दिलवाना चाहता हूं, इसलिए उसे रोक लिया जाय। शाम को करुप का बड़ा भाई पार्वती को अपने वकील के पास ले गया। वकील ने भी उससे सब बातें सच-सच कह देने के लिए कहा; जैसा कि रास्ते में सिपाही ने कहा था।

पार्वती अपने पति को बचाना तो अवश्य चाहती थी, लेकिन अपने अपराध को स्वीकार करने के विचार से कांप उठती थी।

अंत में उसने कहा, "भगवान् जैसा कहलायेगा, वैसा कहूंगी।"

"कमबख्त, तू भी भगवान् का नाम ले सकती है ? मारो इसे पुरानी जूतियों से।" करुप के बड़े भाई ने डपट कर कहा।

इस पर पार्वती डर के मारे कांप उठी और बोली, "अच्छा तो जैसा तुम कहोगे, वैसा ही करूंगी। एक औरत कर ही क्या सकती है ?"

वकील यही चाहता था। उसने सबको चले जाने के लिए कहा और थोड़ी देर तक करुप के भाई से अकेले में बातचीत की।

दूसरे दिन पार्वती बहुत काफी देर तक और आदमियों के साथ अदालत के सामने एक वृक्ष के नीचे प्रतीक्षा करती रही। एकाएक किसी ने जोर से उसका नाम लेकर पुकारा। पार्वती चौंक पड़ी। तभी एक चपरासी ने आकर हाकिमाना ढंग से कहा, "इधर आओ।" और वह उसे गवाहों के कटघरे में ले गया। वहां उसने जो कुछ भी देखा, उससे उसका माथा चकरा गया। कमरे के पच्छिमी कोने में उसका पति सीखचों के पीछे एक जंगली जानवर की तरह खड़ा हुआ उसकी ओर घूर रहा था। उसके सिर के बाल और दाढ़ी-मूंछ बहुत बढ़ रही थी और वह इतना डरावना दिखाई पड़ता था कि पार्वती उसे पहचान भी मुश्किल से पाई। जब एक गरीब किसान

कैदखाने में बंद कर दिया जाता है और दो-तीन महीने तक उसे नहाने-धोने और हजामत बनाने नहीं दी जाती तो कुछ ही दिनों में वह हत्यारा-सा दिखाई देने लगता है।

"हाय, इस मुसीबत की जड़ मैं ही हूं।" पार्वती ने मन-ही-मन में कहा और उसे भयंकर मानसिक पीड़ा हुई। अपने सामने के सीखचों को पकड़कर वह बड़े प्रयत्न के साथ सीधी खड़ी रह सकी और जब पेशकार ने चिल्लाकर हलफ उठाने को कहा तो उसके सिर में चक्कर आ गया।

"मैं भगवान् को साक्षी देकर कहती हूं कि मैं सच कह रही हूं। उस शाम को जब मैं खाना बना रही थी..."

जज ने सरकारी वकील की तरफ देखा और कहा, "मालूम होता है कि इसने सारी बातें अच्छी तरह रट रखी हैं। पैरवी के गवाहों के साथ ये हमेशा ऐसा ही व्यवहार करते हैं।"

"कोई बात नहीं, अभी सब भूल जायगी।" जज ने फिर कहा।

जज के इस व्यंग्य पर इजलास में बैठे हुए लोगों ने खूब कहकहा लगाया। सरकारी वकील की हँसी सबसे तेज थी। दूसरे वकीलों ने भी जरा देर बाद उसका साथ दिया। करुप का वकील भी धीरे-से मुस्कराया।

"जो मैं कहूं, उसे दुहराती चलो।" पेशकार ने कठोरता के साथ कहा। इससे पार्वती की घबराहट और भी बढ़ गई। उसने सोचा, "तो क्या जो बात वकील और जेठजी ने सिखाई थी वह अब किसी काम नहीं आयेगी? क्या अब वही कहना पड़ेगा जो पेशकार कहेगा?"

हलफ उठाने के बाद जिरह शुरू हुई। कभी-कभी तो पार्वती अपने से पूछे गए सवाल समझ भी नहीं पाती। "जब मैं खाना बना रही थी तो इस्माइल आया और मुझसे अनुचित प्रस्ताव करने लगा। मैं मना कर ही रही थी कि अचानक मेरा आदमी आ गया और उसने मुझपर कुदाली फेंककर मारी। मैं डरकर बाहर भाग गई और फिर क्या हुआ, इसकी मुझे बिलकुल याद नहीं, सिवा इसके कि मैंने इस्माइल के सिर से खून की धारा बहते देखी।" यह थी वह कहानी, जो वकील ने पार्वती को बयान में बताने के लिए सिखाई थी।

"चुड़ैल!" करुप अपने कटघरे में से चिल्लाया। उसे अभी तक यही

उम्मीद थी कि उसके आदमी गवाही दिलाकर यह सिद्ध करा देंगे कि अपराध के समय वह करुमांडूर में था। उसके वकील ने उसके पास जाकर कान में कुछ कहा, जिससे उसे कुछ ढाढ़स-सा बंधा। जिरह के खतम हो जाने पर असेसरों ने राय दी कि गवाहों से यह सावित नहीं हो सका कि मुजरिम का इरादा खून करने का था। उसने अधिक उत्तेजित किये जाने के कारण ही इस्माइल को गहरी चोट पहुंचाई थी।

जज ने कारंवाई अगले दिन के लिए मुल्तवी कर दी। दूसरे दिन फैसला सुना दिया गया। जज ने असेसरों की राय ठीक नहीं समझी और कहा कि मुजरिम का खून करने का इरादा सावित हो गया है। उसने कादिर खां और इस्माइल के इस बयान को सच मान लिया कि हम दोनों करुप के यहां अपना रुपया मांगने गये थे, जबकि मुजरिम ने शराब के नशे में हमपर घातक हथियार से हमला किया; लेकिन हम भाग्यवश बच गये और बाद में गली में भीड़ इकट्ठी हो जाने से हमारी जान बच गई। जज ने यह भी कहा कि करुप की औरत का बयान विश्वसनीय नहीं है; क्योंकि एक तो वह स्वभावत: अपने पति को बचाना चाहती है और दूसरे, उसके पुलिस और मजिस्ट्रेट के सामने दिये हुए बयान एक-दूसरे से नहीं मिलते। इसलिए उसने करुप को छ: साल सख्त कैद की सजा दी और सरकारी वकील से यह भी कहा कि आप पार्वती पर झूठी गवाही देने के लिए मुकदमा चलाने का बंदोवस्त करें।

करुप फैसला सुनकर चिल्ला उठा, "इस चांडालिन ने मुझे धोखा दिया है। आप ही बताइये सरकार, कि जब अपनी औरत ही धोखा दे तो कोई कैसे चुप बैठ सकता है ?"

"ले जाओ इसको।" जज ने कहा और सिपाही उसको लेकर चल दिये। उन्होंने उसे ढाढ़स बंधाने के लिए कहा, "तुम जो कुछ कहना चाहते हो, लिखकर हाईकोर्ट में अपील करो।"

मुकदमा खत्म हो गया। पार्वती के किसी भी रिश्तेदार ने उसकी खोज-खबर नहीं ली। बड़ी कठिनाई से बेचारी रामपुर तक पहुंची। वही पुराना सिपाही, जो उसे सेलम लाया था, उसे वापस भी ले गया।

"तुम्हें शुरू से ही सच बोलना चाहिए था ।" सिपाही ने कहा । चूंकि तुम पहली अदालत में सच नहीं बोली थीं, इसलिए जज ने तुम्हारी बात का यकीन नहीं किया। सारी सच्ची बात तो तुमने यहां भी नहीं कही ।"

ये शब्द पार्वती के कानों में पड़े अवश्य, लेकिन जैसे उसकी कुछ समझ में नहीं आया। काफी रात हो जाने पर वे रामपुर पहुंचे । मुसलमान सिपाही ने कहा कि आज रात यहीं मेरे बरामदे में सो जाओ, कल सवेरे अपने भाई के घर चली जाना ।

उसके कहने से वह पड़ तो गई, लेकिन उसे नींद नहीं आई । "हाय, अब भाभी को मैं कैसे मुंह दिखाऊंगी!" उसने सोचा। उसकी सारी आशाएं टूट चुकी थीं। भगवान् तक ने उसे भुला दिया था। उसे अब अपने कष्टमय जीवन का अंत करने के अलावा कोई चारा नहीं रह गया था। भगवान् को धन्यवाद कि अब भी एक ऐसी युक्ति थी, जिससे सारे दुःखों का अंत हो सकता था। इस युक्ति को पार्वती से कोई दूसरा छीन नहीं सकता था।

बहुत देर तक जागते रहने के बाद सुबह होते थकावट के कारण पार्वती को नींद आ गई। मुसलमान सिपाही जब सुबह छः बजे बाहर निकला तो उसने पार्वती को गहरी नींद में सोते पाया । "अपने आदमी को जेल में भिजवाकर कैसे मजे में सो रही है ।" उसने सोचा, "इन बेवफा औरतों का यकीन करना कितनी बेवकूफी है !"

पार्वती एक बच्चे के रोने की आवाज सुनकर उठ बैठी। वह सपना देख रही थी कि मेरा बच्चा रो रहा है। नींद खुलने पर भी उसे कुछ देर बाद तक यह खयाल नहीं आया कि मेरे बच्चे को मरे एक जमाना हो गया है और अब मैं एक असहाय औरत हूं, जिसका पति और घर-द्वार सबकुछ छिन चुका है।

जब वह उठकर बैठी तो उसने अपने सामने एक काले-कलूटे लड़के को देखा। उसने दोनों हाथों से अपना मुंह ढक रखा था और कभी वह बच्चे के रोने की-सी आवाज निकालता था तो कभी मां की-सी। पार्वती के बैठते ही वह चुप हो गया और पैसा मांगने लगा।

"घर कहां है ?" पार्वती ने पूछा ।

"मां, मुझे एक पैसा दे दो ।" लड़के ने चिल्लाकर कहा।

"तेरा बाप कौन है ?" पार्वती ने फिर पूछा।

"मैं नहीं जानता।" लड़के ने जवाब दिया।

"क्या तेरे मां भी नहीं है ?"

"मां तो है, लेकिन वह मुझे सूअरवाले के यहां छोड़ गई है।"

"तुझे खाना कौन देता है ?"

"मैं खुद कमाता हूं। जितने पैसे मुझे मिलते हैं, मैं सूअरवाले को दे देता हूं और वह मुझे खाना खिला देता है। कभी-कभी वह मुझे खाना खिला देता है और बाद में जब मेरे पास पैसे बचते हैं तो मैं उसे दे देता हूं।"

"ये अजीब तरह की आवाजें बनानी तूने कहां सीखीं ?"

"इन्हें मैंने तंजावूर में सीखा था। मां मुझे कुछ दे दो। मुझे सूअरवाले के पास जाना है।"

इतने में एक सिपाही बाहर आ गया और उसने लड़के को धमकाकर भगा दिया। "ये सब बादमाश होते हैं। इस तरह दिन में आकर सब भेद ले जाते हैं और रात को चोरों को लाकर चोरी करा देते हैं। रात को तुम अच्छी तरह सोई मालूम होती हो ?" सिपाही ने पूछा।

"भगवान् तुम्हारा भला करेगा ! तुमने मेरे साथ बाप-जैसा बर्ताव किया है।" यह कहकर पार्वती फूट-फूटकर रोने लगी।

उस आदमी के मन में अब पार्वती के लिए दया नहीं थी। उसने सोचा कि वह बन रही है। वह बोला, "तुम अब अपने भाई के घर जा सकती हो। अगर अभी चल दोगी तो दोपहर होने से पहले ही वहां पहुंच जाओगी।"

भूखी-प्यासी और बेहद थकी हुई पार्वती दोपहर को अपने भाई के घर पहुंची। उसे आशा थी कि उसके भाई का हृदय कुछ पिघल गया होगा, परंतु उसके आने से पहले ही उसकी खबर गांव में पहुंच चुकी थी। भाई खेत पर चला गया था और भाभी द्वार पर खड़ी थी। पार्वती को आते देखकर बोली, "तू फिर आ गई! यहां अपना काला मुंह मत दिखा। यहां ऐसी औरतों के लिए जगह नहीं है, जो अपने आदमी का सत्यानाश करके मुसलमानों के साथ भाग जाती हैं ! अब तू चाहती है कि मेरे घर में बैठकर मेरे आदमी का खून चूसे ? मेरे बाल-बच्चे हैं और मेरे जिम्मे उनकी निगरानी है। मैं नहीं चाहती कि तेरा उनका साथ हो। उसी आदमी के

पास जा, जिसके लिए तूने अपने आदमी को धोखा दिया। यहां तेरे लिए जगह नहीं है।"

"भइया, भइया !" पार्वती ने रोकर पुकारा। वह समझी कि भाई अंदर है।

"क्या तुम मुझसे बोलोगे नहीं ? क्या तुमने भी मुझे छोड़ दिया ? हे भगवान्, अब तू ही रक्षा कर।" पार्वती नें सिसकते हुए कहा और भूखी-प्यासी, थकी-मांदी रोती हुई वहां से चल दी।

सूरज तप रहा था, परंतु पार्वती को अब न गरमी सता रही थी, न भूख। उसका गला और उसके होंठ प्यास के मारे सूख रहे थे और जिन-जिन देवी देवताओं के नाम वह जानती थी, उन्हें वह बड़ी कठिनाई से याद कर पा रही थी। दूसरे गांव में पहाड़ी पर एक मंदिर था। वह उसी ओर मुड़ गई।

पहाड़ी पर थोड़ी ही दूर चढ़ने के बाद उसे लगा कि मैं अब एक पग भी आगे नहीं रख सकती। उसे मूर्च्छा-सी आने लगी और वह एक चट्टान की छाया में बैठ गई।

कुछ देर बाद वह उठी और फिर पहाड़ी पर चढ़ने लगी। वह मंदिर तक पहुंच गई, परंतु भीतर नहीं गई। बाहर खड़े-खड़े ही उसने प्रार्थना की। फिर वह मंदिर से भी ऊंची एक चट्टान पर पहुंची और उसकी चोटी पर चढ़ने लगी। रास्ता मुश्किल था, लेकिन पार्वती में एक नई शक्ति आ गई थी। चोटी पर पहुंचकर वह उसके पश्चिमी छोर पर गई और वहां से नीचे की तरफ झांकने लगी। नीचे से लेकर चोटी तक पहाड़ सीधा खड़ा था। उसे चक्कर आ गया और वह बैठ गई; लेकिन फिर वह उठी और "काली माई, मेरे पापों को क्षमा करके मुझे अपनी गोद में शरण दो," कहती हुई नीचे कूद पड़ी।

अहा, एक ही क्षण में कितना सुख और आनंद ! पृथ्वी और आकाश घूम उठे। कितना शीतल ! कितना सुखकर ! कितना आनंदमय ! उसे अपने सिर में एक इतनी जोर का धमाका मालूम हुआ, जैसा उसे पहले कभी मालूम नहीं हुआ और वह सदा के लिए अनंत शांति में लीन हो गई। उसकी आत्मा अपने दुःख के पिंजरे को छोड़कर उड़ गई। □

पुनर्जन्म

□□

जब बालक और बंदर मिल जायं तो फिर खेल-तमाशे की क्या कमी? वेलमपट्टी गांव के सब लड़के इमली की बगिया में इकट्ठे हो गये थे। कभी वे दरख्तों पर चढ़ते थे, कभी नीचे कूदते थे और जोर-जोर से चिल्लाकर डालों पर बैठे हुए बंदरों को भगाने की कोशिश करते थे। कभी-कभी बंदर बाज़ी मार लेते थे। जब उनमें-से सबसे बड़ा बंदर खड़ा होकर गुस्से से खों-खों करता था तो छोटे-छोटे लड़के सारी छकड़ी भूल जाते थे और कुछ-कुछ डर भी जाते थे। हां, बंदरों के छोटे-छोटे बच्चे जरूर बुरी तरह डरे हुए थे और उन्हें यह तमाशा बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा था। लड़कों से बचने के लिए वे एक डाल से दूसरी डाल पर कूद रहे थे, लेकिन लड़कों को इसमें बड़ा मज़ा आ रहा था। उनकी चिल्ल-पों और बन्दरों की किलकिलाहट गांव तक में सुनाई दे रही थी।

एकाएक बगिया के पूर्वी किनारे से एक लड़के के जोर से चीखने की आवाज सुनाई दी। सब-के-सब उधर भागे। उन्होंने देखा कि एक बंदरिया ने मुकुंद पर हमला कर रखा है और वह उसे नाखूनों से खसोट और उसकी गर्दन पर काट रही है और मुकुंद के बड़े जोरों से खून बह रहा है। मुकुंद ने बंदरिया के बच्चे को खदेड़ा था और वह उससे बचकर भागने की कोशिश करते वक्त डाल पर से फिसलकर गिर पड़ा था। मुकुंद उसे उठाकर भाग खड़ा हुआ। इस पर बंदरिया उस पर झपटी और उसे गिरा-कर बुरी तरह काटने-खसोटने लगी। मुकुंद घबरा गया और उसकी समझ में नहीं आया कि क्या करूं। घबराहट में उसने बच्चे को और कसकर

पकड़ लिया। इससे बंदरिया और भी चिढ़ गई और मुकुंद को बुरी तरह से काटने लगी। लड़कों ने चिल्लाकर कहा, "बच्चे को छोड़ दे, बच्चे को छोड़ दे।" लेकिन मुकुंद के समझ में नहीं आया कि ये क्या कह रहे हैं। बंदरिया बहुत बड़ी थी और क्रोध में भर रही थी, इसलिए किसी लड़के को उसके पास जाने का साहस नहीं हुआ।

मारि नाम का एक छोटा लड़का दूर खड़ा-खड़ा सबकुछ देख रहा था। "अरे, यह मर जायगा"—चिल्लाता हुआ वह दौड़कर मुकुंद के पास गया और बंदरिया के बच्चे को छीनकर भाग खड़ा हुआ। बंदरिया मुकुंद को छोड़कर मारि के ऊपर झपटी। मारि ने बच्चे को नीचे फेंक दिया और पास ही पड़ी हुई एक छड़ी उठाकर वह क्रोध में भरी बंदरिया का सामना करने को खड़ा हो गया। बंदरिया अपने बच्चे को भागते देखकर उसकी ओर दौड़ी। बच्चा मां से चिपट गया और दोनों पास के एक वृक्ष की सबसे ऊंची टहनी पर चढ़कर शांति के साथ बैठ गये, मानो कुछ हुआ ही न हो।

मुकुंद पृथ्वी पर बेहोश पड़ा था। लड़के यह चिल्लाते हुए कि "मुकुंद मर गया, उसे बंदरिया ने मार डाला", गांव की ओर भागे। लेकिन मारि चिन्ना के साथ वहीं रह गया। उसने कहा, "चिन्ना, जा, मां से मांगकर एक बर्तन में जल्दी पानी ले आ", और मुकुंद के पास बैठकर उसका मुंह पोंछा और उसे आराम पहुंचाया। चिन्ना भागकर मोहल्ले में से मिट्टी के एक बर्तन में पानी ले आया। मारि ने पानी लेकर मुकुंद के मुंह पर छिड़का। इससे उसे होश तो आ गया, लेकिन उसके घावों से खून बहता रहा।

"चिन्ना, इसे एक ओर से तू पकड़ और दूसरी ओर से मैं पकड़ता हूं; इसे इसके घर ले चलना चाहिए।" मारि ने कहा और दोनों ने मिलकर उसे उठा लिया। मारि और चिन्ना थे तो अभी छोटे, लेकिन गरीब होने के कारण मेहनत के काम से घबराते नहीं थे।

मुकुंद की मां विधवा थी, और ईश्वर से डरती थी। उसने कभी हिम्मत नहीं हारी और बड़े अच्छे ढंग से अपने बेटे का लालन-पालन किया। उसने

अपने पति के देनदारों से सारा कर्ज़ा वसूल किया और चार एकड़ सूखी ज़मीन, जो वह छोड़कर मरा था, एक क़िसान को लगान पर उठा दी। उससे जो कुछ भी आमदनी होती उससे वह अपनी गृहस्थी का क़ाम चलाती थी। मुकुंद को उसने गांव के छोटे-से स्कूल में दाखिल करा दिया था और घर पर उसे रामायण, महाभारत और भागवत की कहानियां सुनाया करती थी। इस तरह बाहर से तो वह साहसी दिखाई देती, लेकिन अंदर से उसके जीवन में थकावट आ गई थी, फिर भी परमेश्वर में विश्वास रखने और परंपरा के अनुसार जीवन बिताने से उसके दिन कटते रहे।

स्नान और दैनिक पूजा-पाठ के बाद वह चौके में खाना बना रही थी कि मारि और चिन्ना "माजी, माजी" चिल्लाते हुए अंदर आये और खून से लथपथ मुकुंद को उन्होंने उसके सामने लिटा दिया। "मेरे बच्चे," कहकर घबराई हुई मां उसकी तरफ झपटी और उसका सिर पकड़कर चीख उठी, "अरे शैतानो, तुमने मेरे बच्चे को क्या कर दिया?" उस समय उसका व्यवहार वैसा ही था जैसा बगिया की उस बंदरिया का, जिसने समझा था कि उसका बच्चा खतरे में है। बंदरिया हो या सीता, मां का हृदय एक-सा ही होता है।

मारि ने सारा किस्सा कह सुनाया। सुनकर सीता का हृदय कृतज्ञता से भर उठा। उसने उन बच्चों की ओर, जो मुकुंद को घर लाये थे, प्यार से मुस्कराकर देखा और पूछा, "तुम कौन हो, बच्चो?"

"हम अछूत के लड़के हैं, माजी।" मारि ने कहा।

सुनते ही सीता का चेहरा उतर गया और वह चिल्लाकर बोली, "अरे, तुम अछूत के लड़के हो! दुष्ट कहीं के! मेरे घर में घुस आये! अरे राम, अब मैं क्या करूं? अरे, तुम तो मेरी रसोई के पास आ गये, कमीनो!" वह सबकुछ भूल गई और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते हुए उसने एक लकड़ी उठाकर बड़े ज़ोर से चिन्ना पर फेंकी। मारि बीच में आ गया और लकड़ी उसकी टांग में लगी। चोट खाकर वह जमीन पर गिर पड़ा। चिन्ना चिल्लाता हुआ गली में भाग गया।

"मेरे घर में अछूत घुस आया!" सीता ने चिल्लाते हुए कहा, "हाय,

मेरा जीवन नष्ट हो गया और उसे इतने पर भी सब्र न आया और अब वह सारे गांव में मेरा नाम लेता फिर रहा है।"

मारि, जो गिर गया था, उठकर बैठा और अपनी घायल टांग को धीरे-धीरे सहलाते हुए बोला: "माजी, मैंने तो तुम्हारे बेटे को बंदरिया से बचाया और तुमने उसका बदला टांग तोड़कर चुकाया !" गरीबों के बच्चे बातें करने में बड़े चतुर होते हैं।

"भाड़ में पड़े तू और तेरी बंदरिया !" सीता ने चिल्लाकर कहा, "इस पाप से मेरा कैसे छुटकारा होगा ? अछूतों की तो परछाईं से पाप लगता है और ये तो मेरे घर में पूजा की जगह चले आये ! हे भगवान्, मेरे ऊपर दया करो, मेरी रक्षा करो।"

मारि अब भी वहीं खड़ा-खड़ा अपनी टांग सहला रहा था। "चंडाल कहीं का भाग यहां से !" मुकुंद की मां ने कहा और गुस्से में भरकर उसपर दूसरी लकड़ी फेंककर मारी। इससे उसे पहले से भी अधिक चोट आई। दर्द सह न सकने के कारण वह बिलबिलाता हुआ भाग गया।

गली में भीड़ इकट्ठी हो गई थी। कोई पूछ रहा था, "अरे, क्या हुआ है ?" और कोई उसका जवाब दे रहा था। बड़ा हो-हल्ला मचा हुआ था। अछूतों के पुरवे से मारि और चिन्ना की मां भी आकर गली के मोड़ पर खड़ी हो गई थी और शोर मचा रही थी।

इस घटना को दो साल बीत गये। मुकुंद अब बड़ा हो गया था और कमालपुर के हाई स्कूल में पढ़ता था। उसे रोज दो मील जाना और दो मील आना पड़ता था; लेकिन चूंकि उसके साथ दो लड़के और आते-जाते थे, इसलिए उसे चलना अखरता नहीं था। बंदरवाली दुर्घटना सब भूल चुके थे, सिर्फ मुकुंद के माथे पर का बड़ा निशान उसकी यादगार-सा रह गया था।

लेकिन मारि की मां कुप्पायी के हृदय में शांति नहीं थी। "हम लोग ब्राह्मण के घर में कैसे पैर रख सकते हैं ? यह पाप जरूर हमें खाकर रहेगा। तुम दूसरे लड़कों के साथ खेलने गये क्यों ? भगवान् हमें माफ नहीं करेगा। इसीलिए तो आजकल हमें इतनी मुसीबत उठानी पड़ रही है। अबके तो पानी भी नहीं पड़ा है और हम सब भूखों मर रहे हैं। यह सब उस ब्राह्मणी

के श्राप का फल है।" इसी तरह वह अक्सर अपने लड़के के मत्थे दोष मढ़ा करती और अपनी सारी कठिनाइयों का कारण उसी दुर्घटना को समझती। गांव के मंदिर में जाकर वह देवी के सामने हाथ जोड़कर कहती, "देवी मैया, मेरे बच्चे का कसूर माफ करो, वह नासमझ था।" उसने पोंगल के लगातार तीन त्योहारों पर मुर्गा चढ़ाया। लेकिन उसकी इतनी श्रद्धा के साथ विनय करने और बलि चढ़ाने पर भी मारिअम्मा (देवी) प्रसन्न होती दिखाई नहीं दीं। मुसीबतें एक के बाद दूसरी आती ही गईं। पहले उसका पति केवल पैंठ के दिन ही ताड़ीखाने जाया करता था, लेकिन अब वह रोज़ जाने लगा। नशे में चूर होकर वह घर लौटता और डपटकर खाना मांगता। कुप्पायी जब कहती, "खाना कहां से आये, सारे पैसे तो तुमने ताड़ी में बहा दिये," तो उसकी लात-घूसों से मरम्मत करता। बेचारी सारे दिन जंगल से मेहनत कर कुछ लकड़ियां बटोरती और उन्हें बेचकर दो आने पैसे लेकर घर आती, लेकिन उसका आदमी लड़-झगड़कर पैसे छीन लेता और ताड़ीखाने चला जाता। इस तरह जब जीवन का भार असह्य हो उठता तो कुप्पायी अपने लड़कों को दोष देती और कहती, "यह सब ब्राह्मणी के श्राप का फल है।" इसी तरह जब उसका पति नशे में घर आता और उसे पीटता तो वह चुपचाप मार सह लेती और कहती, "रोओ मत बच्चे! हम इस मनहूस घर और गांव को छोड़कर कंडी चले जायेंगे। मरे यह आदमी इसी ताड़ीखाने में!"

उस साल एक बूंद भी पानी नहीं पड़ा। सारे खेत सूख गये और मज-दूरों की कहीं मांग नहीं रह गई। जब खुद छोटे किसानों की हालत खराब थी तो मजदूरी पर काम करनेवालों की दशा का दयनीय होना स्वाभाविक ही था। अछूतों और चमारों की हालत तो बयान से बाहर थी।

इसीलिए जब एजेंट लंका के लिए कुलियों की भरती करने आया तो सबने उसका ऐसा स्वागत किया, मानो कोई देवता उन्हें दुःख से छुड़ाने आया हो। इस पर गांव के बड़े क़िसानों ने कहा, "एजेंट गरीबों को धोखा दे रहा है और उनकी नासमझी से फायदा उठाकर उन्हें बहकाकर ले जा रहा है। अफसोस कि क़ोई इस अन्याय को रोकनेवाला नहीं।" लेकिन अछूतों और चमारों ने सोचा कि जितना कष्ट हम उठा रहे हैं उससे तो, कहीं भी

रहेंगे, कम ही उठाना पड़ेगा। वे गांव छोड़कर एजेंट के साथ लंका चले गये। कुप्पायी ने भी सोचा कि कष्ट से छुटकारा पाने का वस यही एक उपाय रह गया है और अपना नाम उन लोगों में लिखवा दिया, जो अपने बच्चों के साथ जाने को तैयार थे। उसके पति ने पहले तो जाने को मना किया और कुप्पायी ने तय किया कि इसका जहां जी करे, वहां जाय, लेकिन बाद में वह बोला, "मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा। यहां मुझे खाना कौन देगा ?" और वह साथ ले चलने के लिए गिड़गिड़ाया। अंत में वे सब चले गये।

तीन वर्ष और बीत गये। स्कूल में मुकुंद बड़ी मेहनत के साथ पढ़ता था। अंतिम परीक्षा में वह प्रथम श्रेणी में पास हुआ। स्कूल में नतीजा सुनते ही मुकुंद को फौरन घर जाकर मां को खबर सुनाने की उत्सुकता हुई, लेकिन उसके स्कूल के साथियों ने उसे अपने साथ मंदिरवाली पहाड़ी पर चलने के लिए आग्रह करते हुए कहा, "चलो, पहाड़ी पर चलें। वहां थोड़ी देर मेला देखकर आयेंगे।"

"पहाड़ी से तो लौटने में देर हो जायगी और मां इंतजार में बैठी रहेंगी।" मुकुंद ने जवाब दिया।

"बेवक़ूफी की बातें मत करो, तुम लड़की थोड़े ही हो ! अरे, देर हो जायगी तो मैं तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ आऊंगा। चिंता क्यों करते हो ? क्लास में अव्वल आने का घमंड हो गया है क्या ? तुम्हें हमारे साथ चलना ही पड़ेगा।" एक दबंग-से बड़े लड़के ने हठ करते हुए कहा। "हां-हां, चलना ही पड़ेगा।" चारों ओर से लड़कों ने घेरकर कहा। मुकुंद को सब पसंद करते थे।

मुकुंद को कहना मानना ही पड़ा। बड़ा सुंदर दृश्य था ! भीड़-की-भीड़ मेले की ओर जा रही थी। लड़कों को बड़ा मजा आया। वे मंदिर में चक्कर काटते फिरे और बाजार में जी भरकर घूमे। उनमें से एक लड़का लाड़-प्यार से पला हुआ, एक अमीर का बेटा था। उसके पिता ने उसे अपनी इच्छा के अनुसार खर्च करने के लिए पांच रुपये दिये थे। वे एक मिठाई की दुकान पर गये। वहां उन्होंने बहुत-सी मिठाई खरीदी और

सबने मिल-जुलकर खाई। फिर वे सारे दिन धूप में घूमते फिरे और शाम को घर लौटने के लिए नीचे उतरे। अभी वे आधी दूर भी नहीं गये थे कि मुकुंद ने कहा, "रामकिशन, मुझे बड़े जोर की प्यास लगी है।"

"यहां पानी कहां ! घर पहुंचने तक इंतजार करना पड़ेगा।" दूसरे लड़कों ने जवाब दिया।

"मूर्खो, तुम्हें इतना भी नहीं पता कि यहां हनुमान-कुंड है ?" अगुआ लड़के ने कहा। वह उन्हें एक पगडंडी के रास्ते ले गया और एक बड़ी चट्टान के पीछे जाकर, जिस पर हनुमानजी की मूर्ति खुदी हुई थी, उसने एक कुंड दिखलाया। मुकुंद ने नीचे उतरकर खूब छककर पानी पिया और फिर "कितना मीठा पानी है !" कहता हुआ वह ऊपर आया। प्यासे मनुष्य को गंदा पानी भी मीठा लगता है।

कमलापुर लौटते-लौटते बहुत अंधेरा हो गया और जिस समय मुकुंद ने घर पहुंचकर द्वार पर धक्का देते हुए मां को पुकारा, उस समय बहुत रात हो चुकी थी।

"मुकुंद बेटे, तुम्हें इतनी देर कैसे हो गई ? मैं तो बहुत घबरा रही थी। तुमने तो कहा कि नतीजा सुनते ही लौट आऊंगा।" मां ने कहा।

"हम सब मंदिरवाली पहाड़ी पर चले गये थे, मां ! मैंने तो जाने को मना किया था, लेकिन लड़के नहीं माने। हमने मेला देखा, बड़ा शानदार था।"

"खैर, अच्छा है कि तुम राजी-खुशी आ गये। पास हुए या नहीं ?"

"मैं अपने क्लास में अव्वल आया हूं।"

"यह तो बड़ी खुशी की खबर है, बेटे ! मुझे तुम पर बड़ा अभिमान है !" यह कहकर सीता ने मुकुंद को हृदय से लगा लिया और उसकी आँखों से आंसू बरस पड़े। उसके इस रुदन में उस नारी के हृदय की करुणा भरी हुई थी, जिसने अपने पति को खोकर पुत्र को बड़े स्नेह और सावधानी से पाला था।

हृदय को हर्ष और अभिमान से भर देनेवाले इस समाचार को सुने अभी चार दिन भी नहीं बीते थे; लेकिन कैसा संसार है यह ! एकाएक मुकुंद

का घर उजाड़ हो गया। जिस रात को वह पहाड़ी से लौटा, उसके पेट में बड़े जोरों का दर्द उठा और उसे दस्त आने लगे। किसी की समझ में नहीं आया कि इसे हैजा हो गया है। सबको यह ख्याल हुआ कि मेले की दुकान से खरीदी हुई मिठाई खाने से अपच हो गया है।

मुकुंद को बड़ा सख्त दर्द था। जब किसी गरीब देहाती के घर में किसीको हैजा या छूत की कोई दूसरी बीमारी हो जाती है तो उस घर में एक भी ऐसा आदमी नहीं मिलता, जिसे उसे रोकने या फैलने न देने का उपाय मालूम हो और अगर किसीको मालूम भी होता है तो न पास पैसा होता है, न साधन। सिद्धांत की बात बतानेवालों की कमी नहीं होती और किताबें भी बहुत-सी मिल जाती हैं, लेकिन इस तरह की कही या लिखी बातों का हमारे दरिद्र गांवों में अनुकरण नहीं हो सकता।

मुकुंद बच गया, जैसे किसीने कोई कमाल कर दिखाया हो; लेकिन बेटे की छूत मां को लग गई। दो दिन तक वह अपनी बीमारी छिपाये मुकुंद की देखभाल करती रही, लेकिन जब बदन बिल्कुल न चला तो पड़ गई। "पता नहीं, मेरा लड़का अब भी खतरे से बाहर हुआ या नहीं। मैं तो अब मर रही हूं, उसकी देखभाल कौन करेगा?" वह बड़े दुःख के साथ बोली और उठकर बैठ गई। लेकिन वह बैठी न रह सकी और गिरकर बेहोश हो गई। उसके बाद उसे होश नहीं आया। हाथ-पैरों में कुछ अकड़न-सी हुई और फिर प्राण-पखेरू उड़ गये।

पंद्रह वर्ष बीत गये। अब सारी चीजें बदल गई थीं। वेलमपाली में ब्राह्मणों के सारे घर खंडहर बन गये थे। केवल मंदिर का पुरोहित कृष्णभट्ट अपने घर में रह गया था। दूसरे नौकरी की तलाश में गांव छोड़कर शहर चले गये थे। अछूतों के मोहल्ले में भी बिल्कुल सुनसान हो गया था। मजदूरी करने के लिए कुछ लोग कंडी, कुछ पेनैंग, कुछ शेरवराय पहाड़ी, कुछ बंगलूर और कुछ दूसरी जगह चले गये थे। हां, किसानों के मोहल्ले में अभी उतना सुनसान नहीं था। अपने खेतों और ढोर-डंगरों को न छोड़ सकने के कारण, अनेक कठिनाइयों के होते हुए भी, ये वहीं रह गये थे।

मारि और चिन्ना अपनी मां के साथ लंका के चाय के बागान में काम

कर रहे थे। उसके बाप ने वहां पहुंचते ही ताड़ीखाने में जाना शुरू कर दिया था। वह अपना काम ठीक-ठीक नहीं करता था। इसलिए उसके मालिकों ने उसे काहिल शराबी समझकर थोड़े ही दिनों में नौकरी से अलग कर दिया? उसने चाय के एक दूसरे बाग में काम किया, लेकिन वहां भी उसकी यही दशा हुई। इसके बाद वह जगह-जगह मारा-मारा फिरता, भीख मांगता और ताड़ी पीता रहा। थोड़े दिनों बाद वह लापता हो गया और किसी को पता न चला कि उसका क्या हुआ।

मारि और चिन्ना बागों में काम करते थे और हाथ रोककर खर्च करते थे। मारि अब पच्चीस साल का हो गया था। जिस बाग में वह काम करता, उसी के कुलियों के क्वाटरों में एक लड़की थी। उसका वहीं जन्म हुआ था और वहीं पली थी। एक दिन मारि की मां ने कहा, "मारि, तुझे अपने गांव में इससे अच्छी लड़की नहीं मिलेगी, तू इसी से ब्याह कर ले।" मारि ने उसका कहना मान लिया।

ब्याह से कुछ दिनों बाद मारि ने गांव वापस जाकर बसने का विचार किया। वह मां से बोला, "मां, यहां रहते हमें पंद्रह साल हो चुके हैं। बाबू अबतक वापस नहीं आये। उनका इंतजार करने से कोई फायदा नहीं। अब हमारे गांव लौट चलने में क्या रुकावट है? ठेकेदार के पास हमारे करीब दो सौ रुपये हैं। चलो, इन्हें लेकर हम वेलमपट्टी चलें और एक जोड़ी बैल और गाड़ी खरीदकर इज्जत के साथ जिंदगी बितावें। यह जगह तो मुझे बिल्कुल अच्छी नहीं लगती। यहां हम गुलामों की तरह रहते हैं और हमसे जानवरों की तरह व्यवहार किया जाता है। यहां कोई देवी-देवता नहीं मानता और किसीको अपनी औरत पर जोर नहीं। हम यहां और क्यों ठहरें?"

"हां, बेटा, मैं भी यही चाहती हूं कि वेलमपट्टी वापस चली जाऊं और वहीं तेरे बाप की झोंपड़ी में मेरी मिट्टी सकरे।" कुप्पायी ने कहा।

सब-के-सब वेलमपट्टी लौट आये। मारि और चिन्ना अछूतों के मेले में जाकर एक जोड़ी बैल खरीद लाये। इसके बाद वे सेलम गये और वहां से गाड़ी भी खरीद लाये। मारि अब आनंद के साथ जीवन बिताने लगा।

किसानों को उससे ईर्ष्या होने लगी और वे आपस में कहने लगे, "इस कंडी के चमार को देखो, गाड़ी और बैल खरीदकर कैसे मजे में है !"

लेकिन खुशी के दिन ज्यादा नहीं ठहरे। भाग्य ने पलटा खाया। एकाएक बैल लंगड़ा हो गया। कारण कुछ समझ में नहीं आया और बहुत दौड़-धूप करने पर भी वह अच्छा न हो सका। मारि ने कौंडलपट्टी के एक डाक्टर को पांच रुपये दिये। पहले उसने बैल के पैर में दवाइयां लगाईं, फिर झाड़-फूंक की और आखिर में लोहे से दाग़ा भी, लेकिन कुछ फायदा नहीं हुआ और बैल मर गया। मारि ने एक किसान के पास अपनी गाड़ी गिरवी रखकर चालीस रुपये उधार लिये। उनमें अपने बचाये हुए कुछ रुपये जोड़कर दूसरा बैल खरीद लिया और कुछ दिन तक उसका काम चलता रहा।

एकाएक आसपास के गांव में मवेशियों की एक छूत की बीमारी फैली और सैकड़ों मवेशी मर गये। मारि के नये बैल को भी बीमारी हुई और वह एक ही दिन में मर गया।

दोनों भाई एक किसान के पास रोजाना मजदूरी पर काम करने लगे। उनका मालिक उनसे कसकर काम लेता था और मजदूरी बहुत कम देता था। इतने से वे खुद अपना पेट नहीं भर पाते थे, इसलिए बूढ़ी और कमजोर मां को पालना कठिन होने लगा। इसके अलावा, चिन्ना मारि से झगड़ा भी करने लगा। इन्हीं दिनों पेनैंग से एक एजेंट कुलियों की भरती करने आया। चिन्ना अपने बड़े भाई से कुछ कहे बिना ही उसके साथ चला गया। नेगापट पहुंचकर उसने किसीसे मारि को एक पत्र लिखवाया, "भइया, तुमसे बिना कहे चले आकर मैंने बड़ा पाप किया है। यह काम मैंने अपने को भूख से बचाने के लिए किया है। भूख सही नहीं जाती थी, इसलिए मैंने सोचा कि चलूं, बाहर चलकर कुछ कमा लाऊं। मैं तुमसे माफी की भीख मांगता हूं और यहीं से अम्मा और बड़े भाई के चरण छूता हूं और प्रणाम करता हूं।" किसीको विश्वास नहीं हुआ कि ये सब बातें चिन्ना ने लिखी होंगी। असल में यह उस आदमी के लिखने की खूबी थी, जिससे चिन्ना ने चिट्ठी लिखवाई थी। फिर भी यह एक बड़ी बात थी कि चिन्ना ने दो आने पैसे खर्च किये और किसी से कह-सुनकर अपने भाई को

आदर का पत्र लिखवाया। एक गरीब अनपढ़ आदमी इससे ज्यादा और क्या कर सकता है ?

बुढ़िया कुप्पायी दिन-रात रोती रहती और आप-ही-आप बड़बड़ाया करती, "अरे, यह सब इनके ब्राह्मणों की रसोई के पास जाने का फल है। अभी वह श्राप मिटा नहीं है। मारिअम्मा, तुम्हारा क्रोध कब शांत होगा? हमारे ये दुःख के दिन कब टलेंगे ? हमारे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। अगर मेरे पास पैसा होता तो अगले त्योहार पर मैं तुम्हें मुर्गा चढ़ाती। हे वलमपट्टी की देवी माता, मुझे मौत दे दो तो मैं अपने कष्टों से छूट जाऊं। बस, मेरे बेटे को उम्र लगाओ और उसे अपना आशीर्वाद दो। उसे और उसकी बहू को सुखी रखो।"

मारि की स्त्री पूवायी थी तो पंद्रह साल की, लेकिन बड़ी फुर्तीली और मेहनती थी। वह जंगल में बेधड़क चली जाती और लकड़ियां बटोरकर घर ले आती। वह एक मिनट भी बेकार न बैठती। जब घर का काम निबट जाता और वह खाली होती तो घास काटने चली जाती या कहीं हाथ-पैर जोड़कर कुछ मजदूरी कर लेती और जो पैसे मिलते, घर ले आती। वह जहां-कहीं भी घास या लकड़ी बेचती, उसे औरों से अधिक पैसे मिलते। इस तरह वह हर हफ्ते कम-से-कम दो या तीन दिन में एक-एक दुअन्नी कमा लेती और उसे लाकर मुस्कराते हुए, अपने पति को दे देती।

उस साल एक बूंद भी बारिश नहीं हुई। वैसे तो पिछले चार वर्ष से पानी कम गिरा था, लेकिन उस साल जैसा सूखा पड़ा, वैसा पहले कभी नहीं पड़ा था। सारे कुएं सूख गए। हरी घास की कहीं एक पत्ती भी दिखाई नहीं देती थी। पीने तक को पानी मिलना मुश्किल हो गया था। इसलिए बहुत-से और आदमी भी उस खंडहर गांव को छोड़कर चले गये।

मारि ने भी सोचा कि कहीं और चलकर पेट पाला जाय, लेकिन उसकी मां ने कहा, "हम यहीं मर मिट जायंगे। कहीं भी रहें, बात तो एक ही है; जो भगवान् और जगह है, वही हमारी यहां भी रक्षा करेगा।" बूढ़ी मां की इच्छा का विरोध करना उचित न समझ मारि चुप हो गया।

अछूतों के मोहल्ले में अब सिर्फ पांच घर आबाद थे। बाकी लोग अपना-अपना घर छोड़कर पहले ही कहीं चले गये थे। जिस तालाब से

अछूत पीने को पानी लेते थे, वह कभी का सूख गया था। उससे मिली हुई जमीन कुट्टि कौंड की थी। उसमें एक कुआं था, जिसमें अब भी थोड़ा पानी था। कुट्टि कौंड अपनी फसल के कुछ हिस्से को इसी कुएं से पानी दे-देकर सूखने से बचा सका था। जब वह अपने खेतों में पानी दे लेता और बैलों को खोलकर नहला लेता तो खेत की ओर बहती हुई नाली में से अछूतों को पानी लेने देता। उन्हें कुएं में अपना बर्तन डालने की छूट नहीं थी, क्योंकि ऐसा करने से कुआं अपवित्र हो जाता। इसलिए वे बेचारे नाली से ही पानी लेते थे। दूसरे किसान तो उनपर इतनी भी दया नहीं दिखाते थे। सूखे के कारण पानी वेलमपट्टी में एक अनमोल वस्तु बन गया था; इसलिए इसमें ताज्जुब ही क्या कि किसान एक बूंद भी पानी अपने खेतों से बाहर नहीं जाने देना चाहते थे! लेकिन कुट्टि कौंड दयालु था; उसने यह सोचकर कि बेचारे अछूत पानी बिना तड़प रहे हैं, उन्हें अपनी नाली से पानी लेने की छूट दे दी।

औरतें वहां सुबह से ही प्रतीक्षा में खड़ी हो जातीं और इस बात पर झगड़तीं कि पहले अपना बर्तन मैं भरूंगी। नाली गहरी नहीं थी, इसलिए उसमें खुदे हुए गड्ढों में बहुत ही कम पानी ठहरता था। कभी-कभी तो उनके झगड़ने से सारा पानी गदला हो जाता था और तब वे एक-दूसरी की शिकायत करती हुईं किसान से कहती थीं, "इसे देखिए, सरकार, इसने मिट्टी घचोलकर सारा पानी गदला कर दिया।" किसान जो खड़े-खड़े यह दुःखद दृश्य देखा करते, कहते, "ये गधे अछूत होते ही ऐसे हैं।" तब औरतें अपना-अपना घड़ा गदले पानी से ही भरकर चली जातीं। थोड़ी देर बाद जब बर्तन में मिट्टी नीचे बैठ जाती तो पानी साफ हो जाता और वे उसे पीने के काम में लातीं।

कुट्टि कौंड रोज की तरह अपने खेत के छप्पर में अपने बेटों के साथ सो रहा था। खेत में कोई फसल रखाने को नहीं थी, मगर चार बैल और चार-पांच बकरियां थीं, जो बहुत दिनों से कम चारा मिलने के कारण हड्डियों का ढांचा-भर रह गई थीं। रस्सी और चमड़े का डोल भी था। अकाल के दिनों में तो जो हाथ लग जाता है, लोग वही चुरा लेते हैं। इस-

लिए रात के समय खेत के छप्पर में कोई-न-कोई सोता अवश्य था।

पूर्णिमा की रात थी। रीते खेत चांदनी में सफेद दूध-जैसे चमक रहे थे। अकाल की क्रूर वास्तविकता दिन के समय दिखाई पड़ती थी। रात में तो प्रत्येक वस्तु थकी और सोती रहती। अकाल तक सोता जान पड़ता था। इस भूतल पर मनुष्य को जो विपदाएं भुगनी पड़ती हैं, उन्हें देखते हुए यह कहा जा सकता है कि नींद में थोड़ी देर के लिए भी सारी बातों को भूल सकना मनुष्य के लिए एक वरदान है।

एकाएक एक कुत्ते के भूंकने ने आधी रात की निस्तब्धता भंग कर दी। दूसरे कुत्तों ने भी भूंकना शुरू किया। "कौन है ? चोर ! चोर !" कुट्टि कौंड का छोटा लड़का चिल्लाया और उठकर बैठ गया। उसे ऐसा दिखाई दिया, जैसे कोई आदमी चमड़े का डोल लिये चुपके-चुपके पीले फूलोंवाले दरख्त की छाया में कुएं के किनारे-किनारे बचकर निकलना चाह रहा है।

"भइया उठो, उठो; चोर हमारा चमड़े का डोल, लिये भागा जा रहा है।" शेन्गोड उठ बैठा और आंखें मलकर अपने चाचा और पड़ोस के दूसरे आदमियों को पुकारता हुआ चोर की तरफ लपका।

उस समय तक कुत्ते जोर-जोर से भूंकने लगे थे और बड़ा शोर मच रहा था। चारों तरफ से लोग चिल्ला रहे थे, "खेत में चोर है। पकड़ो, पकड़ो उसे !" आसपास के छप्परों में से उठकर लोग उधर की ओर भागे और आखिरकार चोर पकड़ लिया गया। वह एक औरत थी। उसके हाथ में अपनी एक रस्सी और अपना ही एक मिट्टी का बर्तन था। उसने चोरी केवल पानी की की थी। उसने अपना बर्तन कुएं में डालकर पानी खींच लिया था। "एक अछूत औरत ने हमारे कुएं में अपना बर्तन डाल दिया !" लोग चारों ओर से चिल्लाए और फिर "मारो इसे," "ठोकरें लगाओ," "मार डालो," "बर्तन फोड़ दो" की आवाजें आने लगीं। उसका बर्तन फोड़ दिया गया और उसे इतना पीटा गया, इतनी ठोकरें लगाई गईं, कि वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी।

"अरे, मर गई। अब मत मारो इसे।" राकिया कौंड ने कहा।

"गड्ढा खोदकर कुतिया को यहीं दबा दो।" दूसरा बोला।

"और क्या ! हम एक बला से बच जायंगे।" तीसरे ने कहा।

जब गड्ढा खोदने और दबाने की बातें कही जाने लगीं तो लोग कुछ शांत हुए। कोई किसी को कबतक पीट सकता है ? कभी तो उसका अंत होता ही है !

"देखो तो, यह है कौन ? कोई पहचानता है क्या ?" एक बूढ़े आदमी ने पूछा।

"यह तो कंडी मारि की औरत है। अरे, अरे ! यह तो बड़ी अच्छी औरत थी। इसने ऐसा काम क्यों किया !" कुट्टि कौंड के बड़े लड़के ने कहा।

"कल मैंने इसे पानी लिये बिना ही भगा दिया था, इसीलिए इसने ऐसा किया है।" छोटा भाई बोला।

"इस अकाल में भला कौन जाति और धर्म की परवा करता है ! आजकल तो सारी बातें गड़बड़ और बेढंगी हो गई हैं; भले-बुरे तक की कोई पहचान नहीं रह गई।" एक लंबे-से किसान ने जमीन पर पड़ी हुई औरत की ओर देखते हुए कहा।

"अरे, यह मरी नहीं है, मक्कारी साधे पड़ी है। इसे ठोकर लगाओ, फिर देखो, कैसी उठकर घर भागती है।" एक दूसरे आदमी ने कहा और पूवायी को दो ठोकरें जमाईं भी। औरों ने भी ऐसा ही किया; लेकिन वह थोड़ी-सी हिलकर ही रह गई, न उठी और न बोली।

"भाइयो, चलो इस कुतिया को उठा ले चलें और अछूतों के पुरवे में गाड़ आयें।" राकिया कौंड ने कहा। वह कुछ-कुछ अनुभवी था, सेशन की अदालत में एक मुकदमा देख चुका था और जानता था कि हत्या करने पर क्या-क्या परेशानियां उठानी पड़ती हैं।

उसकी सलाहं को मानकर तीन-चार आदमी पूवायी को उठाकर अछूतों के मोहल्ले की ओर ले चले।

अगर असहाय अनाथों की सारी बातें सच-सच लिखी जायं तो उनसे सबको लाभ हो। हम चाहे अनाथ हों या न हों, उनके अनुभवों से बहुत-सी बातें सीख सकते हैं और उनसे लाभ ही उठा सकते हैं। मुकुंद के अनुभव भी ऐसे ही थे। जबसे उसकी मां ने उसे इस दुनिया में बिलकुल

असहाय छोड़ा, अगर तबसे अवतक की उसके इधर-उधर भटकने और जीवन से लड़ने की कथा लिखी जाय तो पूरा महाभारत तैयार हो जाय। उसने अपने अनुभव लिखे नहीं और उन्हें सुन-सुनकर लिखने में कोई मजा नहीं।

अनाथ को चाहे और कोई लाभ हो या न हो, उन्हें अक्सर दूर-दूर तक सफर करने का लाभ अवश्य होता है। भूगोल का ज्ञान वे अपने निजी अनुभव से प्राप्त करते हैं। मुकुंद सारे भारत में मारा-मारा फिरा, उसने बड़े-बड़े कष्ट उठाये और अंत में किसी-न-किसी तरह अपने लिए जीवन-निर्वाह का एक अच्छा रास्ता निकाल ही लिया। उसने डॉक्टरी की परीक्षा पास की और एक-दो जगह डॉक्टर रहने के वाद वह अपने ही गांव के अस्पताल में आ गया।

कमलापुर के अस्पताल में डॉक्टर मुकुंद हिसाव जांच रहे थे और सालाना लेखा तैयार करने के लिए अपने सामने की मेज पर पड़ी हुई माल-वही देख रहे थे। उसी समय चार आदमी वान की एक खाट लिये हुए आये और उसे जमीन पर रखकर अपनी आदत के मुताविक गला फाड़कर चिल्लाये, "मालिक !"

डॉक्टर मुकुंद ने कंपाउंडर से कहा, "अछूत मालूम होते हैं। मैं समझता हूं कि कोई खून का मामला है; जाकर देखो तो।"

गांव के स्कूल के हेडमास्टर उनके पास बैठे थे। वह रोज सवेरे घूमने निकलते, अस्पताल के डॉक्टर से आध घंटे गप्प लड़ाते और फिर चले जाते।

"यहां तो हर हफ्ते एक-न-एक खून होता रहता है और मुझे मुर्दे की चीर-फाड़ कर परीक्षा करनी पड़ती है। यह बड़ी बुरी जगह मालूम होती है। ऐसी हालत मैंने किसी भी दूसरे अस्पताल में नहीं देखी।" मुकुंद ने कहा।

"यहां सब अनपढ़ आदमी रहते हैं। इस जिले के लोग जरा-जरा-सी बात पर लड़ने लगते हैं। उनमें जब कभी कहा-सुनी होती है तो बढ़ते-बढ़ते अकसर मार-पीट और खून की नौबत आ जाती है। शिक्षा के फैलने से ये बातें ठीक हो जायंगी।" हेडमास्टर ने कहा।

इतने में कंपाउंडर ने लौटकर कहा, "मुर्दा नहीं है, साहब ! एक लड़की है, जिसे लोगों ने बुरी तरह पीटा है और उसे ही खाट पर लादकर लाये हैं।"

"उसकी क्या उम्र है ?" हेडमास्टर ने पूछा।

मुकुंद ने इस सवाल पर ध्यान न देते हुए कहा, "उसे अंदर लाने को कहो और मेज पर लिटाओ।"

"यह कोई प्रेम का मामला मालूम पड़ता है।" हेडमास्टर बोले और जाने के लिए उठकर खड़े हो गये।

"बहुत मुमकिन है। चलिए देखें।" मुकुंद ने कहा। उठकर वह मेज के पास चले गये और जो आदमी उस औरत को लाये थे, उन्होंने उसे धीरे से खाट पर से उठाकर मेज पर लिटा दिया।

मुकुंद ने उसके घावों को देखकर कहा, "लोगों ने इसे बहुत बुरी तरह पीटा है।" ध्यानपूर्वक परीक्षा करने के बाद पता चला कि उसकी बांहों की दो हड्डियां टूट गई हैं और बाकी चोटें साधारण और ऊपरी हैं।

उसे लानेवाले लोगों में एक मारि भी था। उसने पूछा, "यह बच जायगी न, मालिक ?"

"क्या तुम्हारी कोई रिश्तेदार है ?"

"मेरी औरत है, सरकार ! बच जायगी न ?" उसकी आंखों में आंसू भर रहे थे।

"हां-हां, फिक्र न करो, अच्छी हो जायगी। लेकिन इसे यहां एक महीना रखना पड़ेगा।"

यह सुनकर मारि रोने लगा, "हाय, मैं खाने को कहां से लाऊंगा ?"

"बेवकूफ कहीं के ! हम खाना भी देंगे और इसकी देखभाल भी करेंगे।" मुकुंद ने कहा।

इस पर एक दूसरे ने कहा, "तुम्हें नहीं पता मारि, यह हमारे पुराने मालिक के लड़के हैं—वही मालिक जो नीम के पेड़वाले मकान में रहते थे। यह जरूर हमारी रक्षा करेंगे और इसे अच्छा कर देंगे।"

तीसरा बोला, "अरे, यह इसे तो रोटी देंगे और चंगा कर ही देंगे,

साथ-ही-साथ तेरा भी पेट पालेंगे। रोता क्यों है ?"

"हमारे मालिक हैं, हमारी रक्षा करेंगे।" सबने मिलकर कहा।

"हां-हां।" मुकुंद ने घायल औरत के टूटे हुए हाथों की परीक्षा जारी रखते हुए कहा।

"अच्छा, मैं तो चला डॉक्टर !" हेडमास्टर ने नमस्कार करते हुए कहा।

"अच्छा, नमस्कार।" मुकुंद ने हेडमास्टर से कहा और मारि की ओर घूमते हुए पूछा, "किस बात पर झगड़ा हुआ था ? इसे इतनी चोट कैसे आई ? मुझे बताओ तो, भाई !"

जो कुछ हुआ था, उन्होंने कह सुनाया; लेकिन सबके एक साथ बोलने के कारण मुकुंद सारी बातें ठीक से न समझ सका।

"मुत्तु पिल्लै, क्या तुमने यहां कुछ फूल रखे हैं ?" डॉक्टर मुकुंद ने पूछा।

"नहीं साहब, फूल कहां से आते, सारे पौधे तो मुरझा गये।" कंपाउंडर बोला।

"अजीब बात है," मुकुंद ने मन में कहा, "जब मैं इस औरत के पास जाता हूं तो मुझे चमेली के फूलों की महक आती है, बिलकुल वैसे ही फूलों की महक, जिन्हें इकट्ठा करने का मां को इतना शौक था।" इस तरह मरी हुई मां का ध्यान करते हुए मुकुंद ने पूवायी के घावों पर धीरे-धीरे दवा लगाई। फिर उन्होंने टूटी हुई हड्डियों पर तख्तियां बैठाईं और पट्टी बांधी।

"अब जी कैसा है ?" उन्होंने पूवायी से पूछा।

"अब तो दर्द कुछ कम है, मालिक ! भगवान् आपको बढ़ती दे और हमेशा खुश रखे।" पूवायी ने आह भरते हुए कहा।

इन शब्दों के मुख से निकलते समय उसकी दृष्टि और मुस्कराहट में उस मां का-सा भाव था, जो अपने बच्चे को प्रेमपूर्वक खिलाते समय वात्सल्य-सुख का अमृत पिया करती है। मुकुंद को अपनी मां की और भी अधिक याद आने लगी।

"पता नहीं क्यों, जब मैं इस औरत के पास जाता हूं तो मुझे अपनी मां की याद आये बिना नहीं रहती।" मन में यह सोचते हुए डॉक्टर मुकुंद

हाथ धोने चले गये। वह जहां भी जाते, उन्हें ऐसा लगता जैसे चमेली की सुगंध बस रही है। पति के मरने के बाद उनकी मां फूल पहन तो सकती नहीं थीं, लेकिन वह प्रतिदिन कहीं-न-कहीं से फूल लाकर देवी को अवश्य चढ़ाती थीं ! उन फूलों की सुगंध से सारा घर भर जाता था। वही सुगंध अब मुकुंद को एक बार फिर आई।

यह अक्सर होता है कि कभी एकाएक और अनायास ही बचपन की सुनी हुई किसी गीत की धुन या किसी फूल की सुगंध याद आ जाती है और उसके साथ-ही-साथ उस समय की किसी घटना का भी स्मरण हो आता है। कभी-कभी तो ऐसा लगता है, जैसे हमने इस गीत की धुन कभी सुनी है या इस फूल की सुगंध कभी सूंघी है, लेकिन यह नहीं याद आता कि कब और कैसे ? कुछ लोग इसे पिछले जन्म की याद बताते हैं। उस दिन मुकुंद के मस्तिष्क में भी उन आनंदमय दिनों की याद नदी की तरह उमड़ आई, जो उन्होंने वेलमपट्टी में अपनी मां के साथ बिताये थे।

"कितने आश्चर्य की बात है ! यह सुगंध तो मेरे दिमाग में से निकलती ही नहीं। कहते हैं कि मरे हुए आदमी फिर से जन्म लेते हैं। शायद मेरी मां ने इस स्त्री के रूप में फिर से जन्म लिया है। कौन कह सकता है कि यह बात सत्य नहीं हो सकती ?" यह सोचकर डॉक्टर मुकुंद एक बार फिर पूवायी की खाट के पास गये। पूवायी ने आंखें खोलकर उनकी ओर देखा। उसकी दृष्टि ने उन्हें फिर अपनी मां की याद दिला दी और उन्हें ऐसा मालूम हुआ, जैसे चमेली की महक का एक झोंका-सा आ गया हो।

मुकुंद बिस्तर पर पड़ते ही सो जाया करते थे। यह युक्ति उन्होंने उत्तर में एक योगी से सीखी थी, जहां वह कभी घूमते-घामते पहुंच गये थे। लेटने के बाद करीब-करीब सभी लोग इधर-उधर की बातें सोचते और जागते रहते हैं; लेकिन मुकुंद ने अपने को ऐसा साध लिया था कि वह उस तरह के विचारों को हटाकर अपने चित्त को वश में कर लेते थे और लेटते ही सो जाते थे। लेकिन आज वह तरकीब काम न दे सकी। उन्होंने कोशिश बहुत की, लेकिन नींद न आई। थोड़ी देर तक बिस्तर पर करवटें बदलते रहने के बाद वह उठकर बैठ गये और बत्ती जलाकर एक किताब पढ़ने लगे।

वह भगवद्-गीता थी, जो उन्हें एक मित्र ने दी थी। उनकी आंखें दूसरे अध्याय के २२ वें श्लोक पर ठहर गईं। उन्हें अपनी मां की याद आई और वह सोचने लगे, "यह तो ठीक है, लेकिन पहला शरीर त्यागने के बाद जीवात्मा किस तरह नये शरीर में प्रवेश करेगी ? क्या वह जिस शरीर में चाहे, उसी में प्रवेश कर सकता है ? नहीं, यह तो संभव नहीं; यह तो पिछले जन्म में किये गए अच्छे-बुरे कर्मों पर निर्भर है। हम अक्सर किसी मनुष्य या पशु को कष्ट में देखते हैं। हो सकता है कि उस शरीर में हमारी मां, बाप, भाई या किसी मित्र की आत्मा हो, जो हमें दुःख के सागर में छोड़कर चल बसा है। इसलिए हमें चाहिए कि हम प्रत्येक दुःखी मनुष्य और पशु के प्रति दया का भाव रखें और उसे सहारा या आराम देने की चेष्टा करें। हम अक्सर लोगों को सुखी और समृद्धिशाली देखकर उनसे ईर्ष्या करते हैं। कितनी मूर्खता की बात है यह ! कौन जाने कि हमारे किसी प्यारे ने, जिसकी अकाल मृत्यु हुई हो, उस शरीर में फिर से जन्म लिया हो और अपने पिछले कर्मों के फलस्वरूप वह अब अधिकार और ऐश्वर्य का भोग कर रहा हो ! कैसी मूढ़ता है ईर्ष्या करना।"

मुकुंद इस श्लोक को पहले भी कई बार पढ़ चुके थे। हम जो कविता या गीत पढ़ चुके होते हैं, उसकी पंक्तियां कभी-कभी अचानक शीशे की तरह साफ हो जाती हैं और उनमें हमें एक ऐसा अर्थ दिखाई दे जाता है, जो पहले कभी नहीं दिखाई दिया था। गीता की इन पंक्तियों में भी उस दिन मुकुंद को कुछ नई और ताजी बात जान पड़ी।

मुकुंद ने सोचा, "शरीर बीमारी या आयु के कारण नष्ट हो जाता है, परंतु आत्मा की न कोई आयु है, न उसे कोई बीमारी होती है; इसलिए वह कभी मरती नहीं। मेरी मां का शरीर नष्ट हो चुका है, परंतु उसकी आत्मा ने निश्चय ही किसी दूसरे शरीर में जन्म ले लिया होगा।" इसी भांति वह सोचते और पढ़ते रहे।

"मुकुंद, मेरे बेटे ! उठो, आकर खाना खा लो।" मां ने रसोई में से पुकारा। निस्सदेह, यह उसकी आवाज है। लेकिन कितने आश्चर्य की बात है ! मैं तो बराबर यह सोचता रहा हूं कि मां मर चुकी। अरे, यह तो उसी

की आवाज है, यह तो वही है ! मेरा जगह-जगह भटकते फिरना और कष्ट उठाना केवल सपना था। मेरी मां मरी नहीं है, वह तो जिंदा है। अब स्कूल जाने का समय है। अब मैं कभी गंदा पानी नहीं छुऊंगा और अगर मुझे हैजा हो ही गया तो मैं मां को अपने पास नहीं आने दूंगा। मैं उसे छूत नहीं लगने दूंगा। ओह, कैसे हर्ष की बात है यह ! मेरी मां जिंदा और भली-चंगी है ! मां, मेरे पास आओ।

"वह हाथ में घड़ा लिये कहीं जल्दी-जल्दी जा रही है और ऐसा मालूम होता है कि मुझे अपने पीछे-पीछे आने का संकेत कर रही है। ठहरो मां, ठहरो ! तुम दौड़ क्यों रही हो ? अरे, वह तो अछूतों के मोहल्ले में घुस रही है। अछूतों ने उसे घेर लिया है। वे उसे पीट रहे हैं और कह रहे हैं, 'तू यहां क्यों आई ? एक ब्राह्मणी का यहां क्या काम ? वे उस पर जंगली जानवरों की तरह टूटे पड़ रहे हैं। लकड़ी से मार-मारकर उसकी हड्डियां तोड़ रहे हैं। वे उसे खाट पर डालकर अस्पताल ले आये हैं। हाय, बेचारी मां ! उसे हैजा हो गया है और पेट में बड़े जोर का दर्द है। अरे, लोग तो उसे लिये जा रहे हैं और कह रहे हैं, 'मर गई।' अफसोस, मैं उठकर उन्हें रोक भी नहीं सकता ! क्या वह मर गई ? क्या वह चली गई ? अब मैं क्या करूं ?"

सपने से चौंककर मुकुंद जाग गये। वह कुरसी पर बैठे-बैठे ही सो गये थे और भगवद्गीता उनके हाथों से छूटकर धरती पर गिर गई थी। नींद टूटने पर उन्हें ध्यान आया कि मैं इसी कमलापुर के अस्पताल में हूं और शेष सबकुछ सपना था। वह कुरसी से उठकर बिस्तर पर आ लेटे और जल्दी ही गहरी नींद में सो गये।

मुकुंद पूवायी के घावों की मरहमपट्टी बड़े प्रेम और सावधानी के साथ करते थे। घावों के भरने और हड्डियों के जुड़ने में एक महीने से अधिक लग गया।

एक दिन उन्होंने मारि से कहा, "भाई, मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं। मानोगे ?"

"कहिए, मालिक !"

"जब मैं छोटा था तब तुमने मुझे बंदरिया के हाथों से मरने से बचाया

था और बदले में मेरी मां ने तुम्हें पीटा था और घर से बाहर निकाल दिया था। ठीक है न ?"

"इन बातों को एक जमाना बीत गया। मालिक, आपने मेरी औरत की जान बचाकर मेरे जीवन में प्रकाश भर दिया।"

"मारि, तुम जानते हो कि मरे हुए आदमी अपने पिछले जन्म के अच्छे या बुरे कर्मों का फल भोगने के लिए फिर से जन्म लेते हैं ?"

"हां, मालिक, कहते तो ऐसा ही हैं। भगवान् सबको देखता है और किसी को दंड दिये बिना नहीं छोड़ता। उससे बड़ा कोई नहीं।"

"मेरी मां ने तुम्हारे साथ बड़ी बुराई की थी। मुझे विश्वास है कि उसने फिर से जन्म लिया है और वह अपने पापों के कारण कष्ट उठा रही है। मैं उसके लिए प्रायश्चित्त करना चाहता हूं।" मुकुंद ने कहा।

"मैं आपकी बातें समझ नहीं पाया, मालिक।"

"तुम लोग आजकल जबरदस्त अकाल के चंगुल में हो और बड़ी तकलीफें उठा रहे हो। तुम अपनी औरत के साथ मेरे घर में आकर रहो। मेरे कोई संबंधी नहीं हैं। तुम और पूवायी मेरे घर में मेरे भाई-बहन की तरह रह सकते हो।"

मारि सचमुच कुछ नहीं समझ सका और बोला, "यह कैसे हो सकता है ? यह बिलकुल नामुमकिन है, साहब।"

मुकुंद ने समझाया, "मारि, तुम लोगों को ऐसा दुखी जीवन बिताने देना पाप है। मैं इस बात के लिए भी प्रायश्चित्त करना चाहता हूं। तुम मना मत करो।"

"ओह, मालिक !" आश्चर्य से भरे हुए अछूतों ने यंत्र की भांति कहा।

"मैंने तुमसे कहा था कि मृत्यु के बाद फिर जन्म होता है। मैं नहीं जानता क्यों, लेकिन जबसे मैंने तुम्हारी औरत को देखा है, मुझे ऐसा लगता है कि वह मेरी मां है।"

"मालिक, आप क्या कह रहे हैं, मेरी बिलकुल समझ में नहीं आ रहा है।"

"कोई बात नहीं, भाई। तुम्हारी समझ में नहीं आता, न सही। मैं जो कह रहा हूं उसे मना मत करो। तुम्हें मेरे साथ रहना पड़ेगा।"

"मेरी मां नहीं मानेगी।"

"उसे मैं राजी कर लूंगा।"

"अगर वह मान जाय तो ठीक है।"

मुकुंद ने कह-सुनकर कुप्पायी को राजी कर लिया। उस दिन से वह वहां के लोगों की नजरों में अछूत बन गये, परंतु उनके हृदय को शांति मिल गई। □

स्पर्धा

किसी समय सबेश की कॉफी का सारे देश में नाम था। अंगरेज तक उसे पसंद करते थे; फिर हम लोगों का तो कहना ही क्या! मद्रासी समाज के ऊंचे घराने की स्त्रियां कहती थीं कि बीज चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों और उन्हें चाहे कितनी ही सावधानी से क्यों न भूना जाय, घर पर तैयार की हुई कॉफी सबेश की टीनबंद कॉफी की बराबरी नहीं कर सकती।

सबेश ने कॉफी का कारबार सन् १९२५ में आरंभ किया। दो वर्ष तक उसके जीवन में शायद ही ऐसी कोई घड़ी आई हो, जो सुख और चैन से कटी हो, लेकिन सन् १९२८ में सुब्बु कुट्टि उसके यहां क्लर्क होकर आया और तबसे सबेश का भाग्य-सूर्य दिन-पर-दिन ऊंचा उठता गया। छः महीने के भीतर-ही-भीतर उसका व्यापार तिगुना हो गया और बाद में भी इसी तरह तेजी से बढ़ता रहा। स्वयं सबेश को इसपर आश्चर्य होता था। वह समझता था कि सुब्बु कुट्टि भाग्यवान् है और इसलिए उसके साथ बड़े स्नेह का बरताव करता था। उसके बिना कहे ही वह उसे हर तरह की सहायता देता था। उसने उसकी बहन का ब्याह एक अच्छे और धनी परिवार में करा दिया था और सारा खर्चा भी अपने पास से किया था। वह सुब्बु कुट्टि को अपना क्लर्क ही नहीं, बल्कि साझीदार भी मानता था।

सुब्बु कुट्टि की मां ने उसे कॉफी का एक ऐसा गुप्त ढंग सिखा दिया था कि उससे कॉफी में एक विशेष सुगंध आ जाती थी। जब सुब्बु कुट्टि सबेश की कंपनी में क्लर्क हुआ तो एक दिन सबेश को उसके घर बनी हुई कॉफी का एक प्याला पीने का मौका पड़ा। "इतनी अच्छी कॉफी मैंने कभी

नहीं पी।" उसने कहा और सुब्बु कुट्टि की मां से ढेर-सारे सवाल पूछ डाले। "क्या इसके पीसने का कोई खास तरीका है या इसके बीज में कोई विशेषता है? या इसे साफ करने की कोई खूबी है?" आदि-आदि। सुब्बु कुट्टि की मां ने कुछ और न बताकर सिर्फ इतना कहा, "इसका रहस्य सुब्बु कुट्टि से पूछिए।"

इसपर सवेश बोला, "कुछ भी सही, क्या यह बात हमारी कंपनी में कॉफी पीसते समय नहीं की जा सकती?"

"हां-हां, क्यों नहीं?" सुब्बु कुट्टि की मां ने उत्तर दिया।

उसके बाद जब बीज पीसे जाते तो सवेश कुट्टि को कारखाने भेज देता। वहां वह जो कुछ करता, सबसे छिपाकर करता, यहां तक कि सवेश भी भेद न जान पाया। उसे सिर्फ इतना ही पता था कि सुब्बु कुट्टि अपने घर से टीन में कोई चीज लाता है और पीसते समय बीजों में मिला देता है। यह बात निजी तौर पर पहले ही तय हो ली थी कि इस रहस्य के बारे में सवेश उससे कुछ पूछेगा नहीं।

कारबार खूब बढ़ा और बड़ा लाभ हुआ। सवेश मद्रास के व्यापारी राजकुमारों में गिना जाने लगा। वह बहुत-से व्यापार-मंडलों और क्लबों का सदस्य भी चुन लिया गया।

दो-चार बार सवेश ने सुब्बु कुट्टि से जानने की चेष्टा की, लेकिन उसकी मां ने उससे शपथ ले ली थी कि वह किसी को, यहां तक कि सवेश को भी, अपना भेद नहीं बतायेगा। सवेश ने भी बाद में जिद नहीं की।

सन् १९३६ में सवेश को चौबीस हजार रुपये की बचत हुई। सुब्बु कुट्टि को ढाई सौ रुपये तनख्वाह मिलती थी। वह हर रोज सवेश की मोटर में घर जाया करता था। इससे उसके वे मित्र, जो पहले बड़ा स्नेह दिखाते थे, अब ईर्ष्या करने लगे। उन्हें उसमें ऐसी बुराइयां दिखाई देने लगीं, जैसी पहले कभी नहीं दिखाई दी थीं और वे उसकी सवेश से शत्रुता कराने की चेष्टा करने लगे। लेकिन वे सफल नहीं हो सके, उलटा उन दोनों का एक-दूसरे के प्रति विश्वास और स्नेह बढ़ता गया।

इसी प्रकार दो वर्ष बीत गये। एक दिन सवेश लकड़ी के एक व्यापारी से बातें कर रहा था।

"तुम्हारा कारबार अच्छा चल रहा है; लेकिन सुना है कि तुम्हारा मैनेजर सुब्बु कुट्टि ऐयर कॉफी का अपना अलग काम शुरू करने जा रहा है।" लकड़ी के व्यापारी ने कहा।

"ऐसी तो कोई बात नहीं है। तुमसे किसने कहा ?" सबेश ने पूछा।

"मुझे पता है; इसके बारे में वह खुद कुछ आदमियों से बातें कर रहा था।" लकड़ी का व्यापारी जयराम नाडार बोला।

"मुझे इस बात का यकीन है कि तुम्हें गलत खबर मिली है। अगर ऐसी कोई बात होती तो वह मुझे जरूर बताता।"

"मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि यह कोरी अफवाह नहीं है। तुम खुद सबकुछ सुन लोगे।"

कुछ ही दिनों बाद एक दूसरे मित्र ने सबेश से कहा, "सुनते हैं कि सुब्बु कुट्टि विश्वनाथ साहूकार से कॉफी पीसने वाली मशीनों की बाबत पूछ-ताछ कर रहा है।" इससे सबेश की शंका पक्की हो गई, किंतु उसने सोचा, "व्यापार की उन्नति और मेरी अपनी मर्यादा और प्रतिष्ठा सब-कुछ सुब्बु कुट्टि के हाथ में है। कॉफी के चूर्ण का भेद भी वही जानता है। इस विषय में मैं कर क्या सकता हूं ?" उसी समय से उसके मन में सुब्बु कुट्टि के प्रति घृणा और क्रोध का भाव उत्पन्न हो गया और वह भाव दिन-पर-दिन बढ़ता गया। उसे ऐसा मालूम होने लगा कि मेरे सब नौकर-चाकर सुब्बु कुट्टि को ही अपना मालिक समझते हैं और मेरा ठीक से अदब नहीं करते। इस तरह मालिक को अपने क्लर्क से ईर्ष्या होने लगी।

"देखो, सुब्बु कुट्टि ! अगर कारीगरों को कुछ कहना हुआ करे तो उन्हें मुझसे कहना चाहिए, तुमसे नहीं। ऐसे मामलों में मैं तुम्हारी सिफारिशें नहीं मान सकता।" यह बात सबेश ने सुब्बु कुट्टि से उस समय कही, जब वह उसके पास एक मजदूर की शिकायत के बारे में बात-चीत करने आया।

इस तरह की कई बातें कई बार हुईं।

एक दिन सुब्बु कुट्टि ने सबेश से कहा, "मैं एक महीने की छुट्टी लेने की सोच रहा हूं। अप्पुस्वामी ऐयर ने मुझे अपने साथ तिरुवारूर में रहने के लिए बुलाया है। मेहरबानी करके छुट्टी दे दीजिए।"

"छुट्टी नहीं मिल सकती।" सवेश ने कहा।

सुब्बु कुट्टि की समझ में न आया कि जो व्यक्ति मुझपर अबतक इतना दयालु रहा है, वह अकारण ही मुझसे इतनी कठोरता और शुष्कता का व्यवहार कैसे करने लगा। यह सोचकर कि यह किसी बुरे ग्रह के कारण हो रहा है, वह अपना काम तो पहले की ही भांति अच्छी तरह करता रहा, लेकिन अब उसके हृदय में शांति नहीं थी। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य गिरने लगा; दवाओं से कोई लाभ न हुआ और डाक्टरों ने उसे दो महीने तक आराम करने की सलाह दी। लेकिन सवेश ने साफ-साफ कह दिया कि जबतक कॉफी का पाउडर बनाने का भेद नहीं बता दिया जायगा तबतक छुट्टी नहीं मिलेगी।

"नौकरी छोड़ दो, बेटा। अबतक हमारे दिन अच्छे थे। जब वे दिन फिर वापस आयेंगे तब हम अपना एक छोटा-सा व्यापार अलग कर लेंगे। भगवान् जो चाहता है, "वही होता है।" सुब्बु कुट्टि की मां ने अपने बेटे से कहा और उसे सवेश से भेद न खोलने की सलाह दी। सवेश ने सुब्बु कुट्टि का इस्तीफा मंजूर कर लिया और उसे नौकरी से हटा दिया।

इस घटनाचक्र के कारण कुछ समय तक सवेश के कारबार को हानि नहीं पहुंची। टीन पर नटराज की सुंदर मूर्ति, सब तरह की कॉफी के प्राकृतिक गुण और सवेश की पुरानी ख्याति के कारण व्यापार चलता रहा। लेकिन फिर समय ने पलटा खाया। किसीने कहा, "आज की कॉफी उतनी अच्छी नहीं।"

"ऐसा मालूम होता है कि छन्ना खराब था या कॉफी का टीन खुला रह गया था, इसीलिए इसकी सुगंध उड़ गई है।" घर के लोगों ने कहा।

"सुब्बु यह काम पुराने मालिक के विरुद्ध प्रचार करने के लिए कर रहा है। एक क्लर्क के हटा दिये जाने पर कॉफी में खराबी नहीं आ सकती।" सवेश के मित्र बोले।

लेकिन दूसरे ग्राहक यह कहकर कि घर की बनी कॉफी का मुकाबला कोई नहीं कर सकता, घर पर भूनने के लिए कॉफी के बीज खरीदने लगे। संक्षेप यह है कि सुब्बु कुट्टि के हटाये जाने के पांच-छः महीने के भीतर-ही-भीतर सवेश का कारोबार घटने लगा।

सुब्बु कुट्टि के मित्र विश्वनाथ साहूकार ने उससे अपने साथ साझे में काम करने को कहा। "सारा रुपया मैं लगाऊंगा और मुनाफे का आधा तुम ले लेना।" वह बोला। पहले तो सुब्बु कुट्टि दो-एक महीने तक इस प्रतीक्षा में रहा कि शायद सबेश मुझे फिर बुला ले, लेकिन बाद में उसने विश्वनाथ की योजना मान ली और काम शुरू कर दिया।

सुब्बु कुट्टि में अब फिर से उत्साह आ गया। उसके सिर पर सबेश को मजा चखाने का भूत सवार हुआ। उसने अपनी तैयार की हुई कॉफी का नाम नटेश रखा, जो सबेश से मिलता-जुलता था। जो वस्तु सबेश की कॉफी में छिपाकर मिलाई जाती थी, उसकी मात्रा डेढ़ गुनी कर दी गई। लेबिल पर छपे हुए नटराज के चित्र में टांगों का ढंग उलट दिया गया। नई कॉफी बाजार में आई। मेहनती एजेंट नियुक्त किये गए और बिक्री एकदम बढ़ने लगी। विश्वनाथ ने खूब रुपया खर्च करके इश्तहारबाजी की। उसने सुब्बु कुट्टि की उमंग को खूब बढ़ावा दिया और सबेश के प्रति उसके क्रोध को हर प्रकार के उपायों से जाग्रत रखा।

सबेश ने हाईकोर्ट में मुकदमा दायर कर दिया कि सुब्बु कुट्टि ने अपनी कॉफी के टीन का आकार और लेबिल मेरी कॉफी के टीन से मिलता-जुलता रखा है, जिससे ग्राहकों को धोखा हो जाता है और मेरे व्यापार में घाटा हो रहा है। मुकदमा एक साल तक चलता रहा और अंत में सबेश की जीत हुई।

जिस दिन अदालत में फैसला सुनाया गया, सबेश को तेज बुखार था। फैसला सुनकर वह हर्ष से फूला न समाया और खाट से उठकर, ड्राइवर के न होने के कारण, स्वयं मोटर ले अपने वकील के घर जा पहुंचा। उसने हुक्म दिया कि सुब्बु कुट्टि के कारखाने के माल को जब्त करने और बेचने का इंतजाम फौरन किया जाय। चिदंबर के बड़े मंदिर में उसने विशेष रूप से प्रसाद चढ़ाने का भी प्रबंध किया।

सुब्बु कुट्टि की मां के दुःख का पारावार न रहा; उसे ऐसा लगा, मानो प्रलय हो रहा है। "भगवान्, क्या तुम सबेश को दंड नहीं दोगे ? उसने मेरे बेटे के साथ जो अन्याय किया है, उसका फल क्या उसे नहीं

मिलेगा ?" इस प्रकार उसने अपने देवता से प्रार्थना की और मानो उसकी प्रार्थना में फैसले के आठवें दिन डॉक्टरों की आशाओं के विपरीत सवेश हृदय की गति बंद हो जाने के कारण संसार से चल बसा।

सवेश की मृत्यु के बाद हाईकोर्ट की डिग्री बेकार हो गई। विश्वनाथ के वकीलों ने उसे कानून समझाते हुए सलाह दी कि तुम्हारी कंपनी अब बिना किसी रुकावट के अपनी कॉफी बेच सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि नटराज के चित्र के बदले काले नाग पर नाचते हुए कृष्ण की तस्वीर बना दी जाय तो किसी भी आपत्ति की संभावना नहीं रह जायगी।

सवेश का भूत हवा में विरोध कर रहा था, "हाय-हाय, मेरे अनुकूल डिग्री मिल जाने का कुछ भी लाभ नहीं हुआ।" घृणा और बुरी नीयत का हठ ऐसा ही होता है।

"दुःख करने से कोई लाभ नहीं।" एक साधु की आत्मा ने कहा और यह गीत गाया :

उसने अपनी स्त्री से कहा, "मैं बढ़िया भोजन चाहता हूं।"
स्त्री ने परोसा और उसने बड़े स्वाद से खाया।
अपनी प्रेमिका के संग वह सोने चला गया।
"मेरी बाईं ओर कुछ दर्द है", उसने कहा।
यह बात कहकर वह खाट पर लेट गया।
परंतु वह वहां सदा के लिए लेटा रहा, क्योंकि वह मर गया था, मर गया था।"

वकील की सलाह ने विश्वनाथ और कुट्टि में फिर से स्फूर्ति भर दी। उन्हें लगा, मानो उन्होंने फिर से संसार पर विजय प्राप्त कर ली है, परंतु दुर्भाग्यवश कॉफी के चूर्ण का भेद खुल चुका था।

सारे नगर में चर्चा होने लगी, "इस कॉफी के चूर्ण में रीठे का मेल होता है।" किसी-किसीने कहा, "कॉफी के टीन में एक-चौथाई हिस्सा रीठे का चूरा होता है।" और तब सवेश नटेश दोनों की कॉफियों से लोगों को अरुचि हो गई। जो लोग इन दोनों में से एक भी कॉफी पीते थे, उन्हें अपने स्वास्थ्य में गड़बड़ी मालूम होने लगी। किसी को कब्ज हो गया, किसी

को दस्त आने लगे और किसी-किसी को तो उसे पीने के बाद उलटी तक होने लगी। फल यह हुआ कि सभी बड़े आदमी अपनी कॉफी आप भूनने लगे। सुब्बु कुट्टि सचमुच अपनी कॉफी में रीठे का चूर्ण एक टीन में एक चाय के चम्मच के हिसाब से मिलाया करता था। वे ही लोग, जिन्हें पहले उसकी कॉफी को पीने में मजा आता था, अब उसे असह्य रूप से बुरा समझने लगे। □

भविष्यवाणी

□ □

श्री स्वामीनाथ ऐयर टोंडामंडल हाई स्कूल में बारह साल हेडमास्टर थे। उनका और उनकी पत्नी अखिला का दांपत्य-जीवन बड़ा सुखपूर्ण था, लेकिन अखिला को एक रंज था। उसके कोई बच्चा नहीं हुआ था।

"तो क्या बात है, अखिला ! स्कूल में दो सौ लड़के हैं। वे सब भी तो मेरे बच्चे हैं।" हेडमास्टर कहते।

"तुम्हारे लिए कोई बात न हो। तुम उन्हें अपने बच्चे समझ सकते हो, लेकिन मैं तो घर में सारे दिन अकेली पड़ी रहती हूं। एक स्त्री के लिए बिना अपने बच्चे के जीवन बिताना बड़ा मुश्किल होता है।" उनकी पत्नी उत्तर देती।

समय के साथ-साथ अपनी पत्नी की पुत्र-लालसा को बढ़ते देखकर स्वामीनाथ ऐयर ने तीर्थयात्रा करने का निश्चय किया। उन्होंने दो महीने की छुट्टी ले ली और दक्षिण में पलनि और रामेश्वर-जैसे पवित्र स्थानों की यात्रा करते, वह मैसूर पहुंचे। वहां उन्होंने पवित्र मन से एक-दो अश्वत्थ (पीपल) वृक्षों की परिक्रमा की, जो बांझ स्त्रियों को पुत्र का सौभाग्य प्रदान करने के लिए प्रसिद्ध थे। इसके बाद वह घर लौट आये और, जैसी कि अखिला की जन्मपत्री बनानेवाले एक तेलुगु ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की थी, वह समयानुसार गर्भवती हो गई।

"ज्योतिष गलत नहीं हो सकती।" स्वामीनाथ ऐयर ने हर्ष से फूलकर कहा। अखिला ने कहा कि यह अश्वत्थ वृक्षों की भक्तिपूर्वक पूजा करने का फल है। जो हो, उन्होंने निश्चय किया कि बच्चा होने के बाद

हम एक बार फिर पलनि चलेंगे। उन्होंने अपना समय यह अनुमान करने में भी लगाया कि वह शुभ अवसर कब आयगा।

स्वामीनाथ ऐयर के कुछ मित्रों ने उन्हें सलाह दी कि चूंकि शादी के बहुत साल बाद गर्भ रहा है, इसलिए आपकी पत्नी की विशेष रूप से देख-भाल होनी चाहिए। उन्होंने अपनी पत्नी को ऐगमोर जच्चा-अस्पताल में भरती कराने की भी सलाह दी। अखिला की मां बहुत पहले मर चुकी थी और औरतों में सिर्फ उसकी बुआ बची थी। उम्मीद थी कि वह अखिला की देखभाल करने के लिए आ जायेगी, लेकिन किसी कारण से वह न आ सकी। तब यही तय हुआ कि घर पर बच्चा कराने के बजाय अखिला को अस्पताल में भरती करा दिया जाय।

प्रसव में कोई कष्ट नहीं हुआ। स्वामीनाथ की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उन्होंने अस्पताल के डॉक्टर और नर्सों को बड़े-बड़े उपहार देने का विचार किया।

बच्चा रात को नौ बजे हुआ था। नियमानुसार नर्स उसे फौरन नहलाकर दूसरे दफ्तर में तोलने के लिए ले गई। उस दिन लगभग एक ही समय तीन बच्चे पैदा हुए थे। नर्सें इतने उत्साह और उतावली में थीं, मानो वे ही उन बच्चों की मा हों।

अस्पताल के नियमानुसार जो कुछ हुआ करता है, वही इन तीनों बच्चों के साथ भी हुआ और इस डर से कि वे मिल न जायं, उनके कूल्हों पर नंबर के कार्ड बांध दिये गए।

इन तीनों बच्चों में से एक का रंग सांवला था, लेकिन दो गोरे थे और उनका रंग और वजन करीब-करीब एक-सा था।

अखिला के बच्चे को जो नर्स लाई थी, वह उसे दूसरी नर्सों को सौंपकर चली गई। वैसे तो प्रत्येक बच्चे के आते ही, उसपर उसके नंबर का कार्ड लगा दिया जाता था, लेकिन उस वक्त नर्सें गप्प लड़ा रही थीं, इसलिए वे कार्ड लगाना भूल गईं और बाद में उनकी समझ में न आया कि अखिला का बच्चा कौन-सा है। सांवले बच्चे का तो कोई सवाल था ही नहीं, दूसरे दोनों बच्चों पर उन्होंने अपनी समझ के अनुसार कार्ड बांध दिये। अखिला का बच्चा कुछ ज्यादा गोरा था। आठवें वार्ड में जो

मुसलमान औरत थी, उसका रंग सांवला था, इसलिए उन्होंने सोचा कि सांवला बच्चा उसीका होगा। जो बच्चा कुछ ज्यादा गोरा था, उसे उन्होंने अखिला के पास जाकर लिटा दिया, इससे कुछ गड़बड़ी नहीं हुई।

"तुम्हारा बच्चा बड़ा सुंदर है।" एक फ्रांसीसी नर्स ने कहा। "इसका वजन सात पौंड है। क्या तुम्हारा पहला ही बच्चा है ?"

"जीहां," स्वामीनाथ ने जवाब दिया। बच्चे की मां खाट पर थकी हुई पड़ी थी। उसके भीतर की खुशी उसकी मुस्कराहट में फूटकर निकल पड़ी। उसके आनंद का कोई ठिकाना नहीं था। अब उसे पुत्रवती कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हो गया था और उसके जीवन का उद्देश्य भी बन गया था।

"क्या बच्चा तंदुरुस्त और हट्टा-कट्टा है ?" पिता ने पूछा। पिता सदा व्यावहारिक और वैज्ञानिक प्रकृति के होते हैं।

"आज के जन्मे हुए तीनों बच्चों में यह सबसे अच्छा है।" नर्स ने अंगरेजी में कहा, जिसका अर्थ स्वामीनाथ ने अखिला को तमिल में समझा दिया।

इसी बीच वह नर्स, जो पहले-पहल बच्चे को ले गई थी, वार्ड में आई। उसने बच्चे को उठा लिया और कुछ देर तक वह उसे खिलाती रही; फिर दोनों नर्सें बाहर चली गईं।

इस बच्चे की टूंडी के पास एक तिल था, वह इतनी जल्दी कैसे गायब हो गया ?" पहली नर्स ने पूछा।

"क्या तिलवाला बच्चा इस औरत का था ? हमने तो उसपर मुसलमान बच्चे का नंबर बांधकर वार्ड नम्बर आठ में भेज दिया।" दूसरी नर्स ने जवाब दिया।

"या भगवान् ! अब हमें इस बारे में चुप रहना चाहिए।" पहली नर्स बोली।

"नहीं, यह बहुत बुरी बात है। अगर तुम्हें यकीन तो हमें बच्चे बदलकर अपनी गलती सुधार लेनी चाहिए।" दूसरी नर्स ने आपत्ति करते हुए कहा।

"तुम तो पागल हो गई हो," पहली नर्स बोली, "अब ऐसा करने से गड़बड़ी होगी और हमें अपनी नौकरियों से हाथ धोना पड़ेगा। मांओं के दिल में शुबहा तो फिर भी बना ही रहेगा। दोनों दुखी होंगी। अब तो चुप रहने में ही भलाई है।"

बारह दिन बाद अब्दुल तैयबजी की पत्नी और अखिला अपने-अपने घर क्रमशः एंडर्सन स्ट्रीट और तिरुवल्लिकेण वापस चली गईं। दोनों घरों में दोनों बच्चों का खूब लाड़-प्यार से लालन-पालन हुआ। सेठ तैयबजी के घर धन और आराम बहुत था और स्वामीनाथ के घर प्यार और संतोष अनंत था। दोनों बच्चों की देखरेख में किसीने कोई कसर नहीं की।

जब स्वामीनाथ का बच्चा एक साल का था तो उसकी मौसी आई। "बच्चे की आंखें तो हमारे भाई मुत्तुस्वामी जैसी हैं, सिर्फ इसकी नाक स्वामीनाथ के घरवालों से मिलती-जुलती है।" उसने बच्चे को देखकर कहा। इससे स्वामीनाथ को बड़ा संतोष हुआ और मां को दुहरी खुशी हुई।

सेठ तैयबजी के घर में भी ऐसा ही हुआ।

... ...

सेठ तैयबजी को मरे २२ वर्ष हो गये हैं। अब उनका बेटा सुलेमान, जो जन्म से ही बड़ा चतुर था, अपने पिता की बड़ी तिजारत को खूब होशियारी के साथ चला रहा है।

स्वामीनाथ ऐयर का लड़का अश्वत्थ नारायण बेहद कोशिश करने पर भी स्कूल लीविंग परीक्षा से आगे नहीं बढ़ सका। वह बंबई अपने मित्रों के यहां गया और वहां ठहरकर उसने इधर-उधर सिफारिशें कराने और नौकरी ढूंढ़ने की चेष्टा की, लेकिन अंत में वह असफल होकर लौट आया। इन सब बातों का स्वामीनाथ पर गहरा असर पड़ा। ज्योतिषी ने जो कागज उन्हें लिखकर दिया था, उसमें लिखा था, "तुम्हारा बेटा बहुत बड़ा सौदागर होगा। वह भाग्यशाली होगा, लेकिन अपने माता-पिता के किसी काम न आ सकेगा।"

"इसकी तो कोई बात नहीं कि वह हमारे किसी काम आयगा या नहीं। वह खुश रहे, यह काफी है। लेकिन उसे तो कहीं सफलता मिलती

ही नहीं। ज्योतिष एक ढकोसला है।" स्वामीनाथ ने बिगड़ते हुए कहा।

"यह तुम कैसे कह सकते हो कि ज्योतिष झूठी है ? क्या बच्चे का जन्म ठीक भविष्यवाणी के ही अनुसार नहीं हुआ ? विधाता का लिखा कोई नहीं मेट सकता। कौन जाने, अभी क्या होगा और क्या नहीं ! उसे किसी चेट्टिया (बनिये) के यहां काम सीखने को भेज दो। मुमकिन है कि वह तिजारत में होशियार निकले।" अखिला ने कहा। □

पश्चात्ताप

अशोक वाटिका में कितनी रातें जागते बिता देने के बाद एक रात अनजाने ही दुखी सीता को गहरी नींद आ गई।

वहां के अपने दुःखपूर्ण कारावास में उन्हें अक्सर लक्ष्मण की याद आती थी। राम का ध्यान करते समय भी उन्हें ऐसा लगता था, मानो लक्ष्मण उनके सामने खड़े-खड़े आंसूभरे नेत्रों से मौन भाषा में कह रहे हैं, "बहन, तुमने मुझसे ऐसी बातें कैसे कहीं ?" यह विचार सीता के लिए असह्य था। इससे उन्हें अपने कारावास से भी अधिक कष्ट होता है।

"हाय, मैंने उनके निर्दोष हृदय को न कहने योग्य बातें कहकर चोट पहुंचाई। मेरा पाप तो रावण से भी बढ़कर है, जो मुझे यहां उठा लाया है।" ऐसी बातें वह बार-बार सोचतीं और अपनी नासमझी के लिए अपने-आपको कोसतीं।

ऐसे ही विचारों से थककर सीता सो गईं। स्वप्न में लक्ष्मण सामने खड़े दिखाइ दिये। उन्हें वहां देखकर आनंद से नाच उठीं और हर्ष के आंसू बहाती हुई बोलीं, "तो तुम आ ही गये भइया ! क्या अबतक के मेरे सारे कष्ट स्वप्न थे ?"

"हां, मैं सचमुच आ गया हूं, बहन ! अब भय और शोक की कोई बात नहीं। मुझे कभी आपको अकेले नहीं छोड़ना चाहिए था। क्या इसके लिए आप मुझे क्षमा कर देंगी ?" लक्ष्मण ने पूछा।

फिर वह हँसते हुए बोले, "ओह, आपने भी कैसा हठ किया और उसके कारण हम कितने भयानक संकट में पड़ गये !"

लक्ष्मण की हँसी में सवेरे की ओस पर पड़नेवाली सूर्य की किरणों जैसी चमक थी। दुःख, आँसू और आनंद से मिली हुई उस हँसी की सुंदरता का शब्दों द्वारा कैसे वर्णन किया जाय !

"सचमुच मेरा सिर फिर गया था। लेकिन क्या तुम्हारा मुझे इस तरह अकेले छोड़ जाना ठीक था ? मैंने तुमसे चाहे कितनी ही कड़वी बातें क्यों न कही हों, तुमने अपने बड़े भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा कैसे तोड़ी ? मुझे तो क्रोध आ गया था और मैंने तुमसे ऐसी बातें कह दी थीं, जो मुझे नहीं कहनी चाहिए थीं। लेकिन तुम्हें तो उसके कारण अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा नहीं तोड़नी चाहिए थी।" सीता ने कहा।

"कैसी प्रतिज्ञा ! क्या तुमने राम से कोई प्रतिज्ञा की थी ? मैंने तो इसके विषय में कुछ नहीं सुना।" नारद मुनि बोले। वह वहां न मालूम कैसे आ पहुंचे थे। वह ऐसा ही करते थे और सपनों में ऐसा ही होता भी है।

"क्या लक्ष्मण ने प्रतिज्ञा नहीं की थी ?" सीता बोलीं, "आप-जैसे पूजनीय पुरुष को ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए।" स्पष्टतः जगत-जननी सीता को नारद से कोई भय नहीं था।

नारद ने उत्तर दिया, "तुम्हारी प्रार्थना पर राम लक्ष्मण से यह कहकर कि जहां खड़े हो वहीं रहना, शीघ्रता से हिरन के पीछे भाग गये। उस समय वह लक्ष्मण की बात सुनने के लिए रुके नहीं। लक्ष्मण ने अपने मुंह से कोई प्रतिज्ञा नहीं की।"

यह सुनकर लक्ष्मण हँसे और बोले, "मुझे इस प्रकार वाद-विवाद अच्छे नहीं लगते। संभव है, ऋषियों में ऐसी वाचालता निषिद्ध न हो। मैं एक सिपाही हूं। जब राम ने कहा 'यहां रहो' और मैं कुटिया के द्वार पर खड़ा हो गया तो वह मेरी ओर से प्रतिज्ञा ही हुई।"

"जाने से पहले मेरे पति मुझे अपने इस भाई को सौंप गये थे।" सीता ने कहा।

"अरे, जब तुम दोनों ही एक-दूसरे की हां-में-हां मिलाने लगे तो मुझे क्या पड़ी है ? है तो यह तुम्हारा ही आपस का झगड़ा।" नारद बोले।

"यदि मैंने कोई बात कह दी थी तो उससे तुम्हारा बिगड़ ही क्या सकता था ?" सीता ने कहा, "हमने अपना नगर, अपना महल, केवल

वचन निभाने के लिए ही तो छोड़ा था ! हमने भरत और प्रजा की प्रार्थनाएं इसी कारण तो नहीं मानीं कि हम समझते हैं कि एक बार वचन दे देने पर, उसे चाहे कुछ भी हो जाय, निभाना ही चाहिए !"

"अपनी कही हुई असहनीय बातें याद दिलाकर मेरा हृदय मत दुखाइए।" लक्ष्मण ने कहा।

"चाहे सारा संसार तुम्हें लांछित क्यों न करता, तब भी क्या तुम्हारे लिए मुझे इस भांति अकेले छोड़कर चला जाना उचित था ?" सीता ने पूछा।

"मैं मानता हूं कि आपका कहना यथार्थ है। जब मैं आपको छोड़कर आधी दूर चला गया तो मेरे मन में भी ऐसे ही विचार उठे, 'भाभी की गालियों से मेरा क्या बिगड़ेगा ? मुझे तो केवल अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा निभानी चाहिए,' मैंने मन-ही-मन सोचा और घूमकर दस डग पीछे लौटा।"

तभी साधु के वेष में छिपा हुआ रावण, जो सीता का दिया हुआ फल खा रहा था, एकाएक भय से कांप उठा। यह उस समय की बात है जब लक्ष्मण वापस मुड़े थे। रावण को बुरे शकुन होने लगे और उसका बायां हाथ और बांई आंख फड़कने लगी। उसने फल को पत्ते पर रख दिया और द्वार की ओर देखा। उसे भय हुआ कि कहीं लक्ष्मण न आ जायं और मुझे भागना न पड़े।

"डरो मत।" नारद ने राक्षस से कहा।

झगड़ा करानेवाले यह ऋषि न मालूम कहां से और कैसे टपक पड़े और झट बीच में बोल उठे !

यह कहानी आश्चर्यजनक, अशुद्ध और असंबद्ध-सी मालूम होती है। कहां अशोक वाटिका और कहां पंचवटी ! किंतु विस्मय की कोई बात नहीं। यह स्वप्न था और वह भी एक दुखी नारी का। ऐसे स्वप्नों में न कोई नियम होता है, न कारण।

"मैं कुटिया की ओर दस डग बढ़ा," लक्ष्मण ने कहा," परंतु तभी आपकी लाल-लाल आंखें और चढ़ी हुई भौंहें मेरे नेत्रों के सामने घूम गईं। ऐसा लगा, मानो आपने कहा, 'दुष्ट ! तू फिर आ गया' और मेरी ओर

फुफकार मारकर काली की तरह झपटीं। बस मैं वापस चला गया और मुझे अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा की सुध नहीं रही। केवल मेरा अभिमान और आपके शब्द मेरा मस्तिष्क विचलित बनाते रहे। 'होने दो, जो कुछ भी होना है, मैं अपना मान नहीं खोऊंगा।' मैंने दांत पीसते हुए कहा और उधर चल दिया, जिधर हिरन के रोने का शब्द सुनाई दिया था।"

"यदि तुम उस समय आ जाते तो मैं बच जाती।" सीता ने रो-रोकर कहा।

"जो हो गया, सो हो गया। उठिए, अब चलें। पिछले दुःख को क्यों याद करती हैं? अब तो मैं यहां हूं।" लक्ष्मण बोले।

"भइया, मैंने बड़ा अन्याय किया है। क्या ऐसा कोई भी प्रायश्चित्त नहीं, जो मैं इस पाप के लिए कर सकूं?" सीता ने पूछा।

"उठिए, खड़ी होइए।" लक्ष्मण ने कहा और सीता को हिलाकर जगा दिया।

सीता उठकर बैठ गईं। वहां न लक्ष्मण थे, न नारद; केवल राक्षसियां उन्हें घेरे खड़ी थीं। उनमें से एक ने कहा, "उठो, उठो, अबतक क्यों सो रही हो? महाराज रावण आ रहे हैं। तुरही की आवाज नहीं सुनाई दे रही है? और देखो, जैसा राजा कहें, वैसा करना, बेकार जिद न करना। राम-लक्ष्मण तो समुद्र-पार हैं, वे यहां किसी तरह भी नहीं पहुंच सकते। अब तुम रावण की स्त्री हो, उन्हें कृतज्ञता के साथ स्वीकार कर लो। सुख और सौभाग्य को ठुकराकर व्यर्थ ही विरोध में जीवन क्यों नष्ट करती हो?"

सीता ने ठंडी सांस ली और वृक्षों और झाड़ियों ने भी उनका साथ दिया।

इसके दूसरे दिन सागर लांघकर हनुमान सचमुच लंका जा पहुंचे। सीता का सपना हनुमान के पहुंचने की पूर्व-सूचना मात्र था। जो कुछ होनेवाला था, वही उन्हें सामने दिखाई दिया था। चूंकि वह हनुमान को नहीं जानती थीं, इसलिए हनुमान के बदले लक्ष्मण दिखाई दिये थे।

इसके बाद अशोक वाटिका में क्या हुआ, इसे कौन नहीं जानता? जब सीता को पता लग गया कि हनुमान कौन हैं तो उन्होंने पहले लक्ष्मण

की ही कुशल-क्षेम की बात पूछी और अपने पति राम के विषय में बाद में बातचीत की।

लक्ष्मण को अपमानित करने का दुःख उनके हृदय में कांटे की तरह चुभता रहता था। जो दुःख किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा बंटाया नहीं जा सकता, वह सबसे अधिक कष्टदायक होता है।

यदि हम सीता के कष्ट और दुःख का स्मरण करें तो कुछ हद तक अपने कष्टों को भूल सकते हैं। कहा जाता है कि हनुमान अमर हैं, वह सदा हमारे पास हमारी सहायता करने को तत्पर रहते हैं। कष्ट आने पर हमें 'राम राम' कहकर उसका डटकर सामना करना चाहिए। हनुमान अवश्य हमारी रक्षा को आयेंगे। □

मां

रॉयप हमारे यहां अखबार बेचने का काम करता था। था तो वह ईसाई का लड़का, लेकिन उसे इस बात की आदत थी कि रात के समय वह किसी विनायक की मूर्ति के सामने जाकर दंडवत करता और फिर उसके पीछे लेटकर सो जाता। वह कभी यह मानने को तैयार न होता कि सोने के लिए इससे भी कोई अच्छी जगह हो सकती है।

अगर कोई उससे पूछता कि तू ऐसी जगह क्यों सोया करता है तो वह केवल मुस्करा देता और ज्यादा पूछने पर कहता, "इससे मेरे मन को शांति मिलती है।"

"तेरा बाप ईसाई था या तू ही ईसाई हो गया है?" कुछ लोग उससे पूछते। इसका वह गर्व के साथ उत्तर देता, "मैं ही ईसाई हो गया हूं," और फिर अखबार बेचने चल देता।

कंदस्वामी ऐयर कृष्णगिरि तालुका के पंजपट्टी गांव के एकाउंटेंट थे। एक दिन उसकी पत्नी शैतान-कुंड से नहाकर ऊपर आते समय फिसलकर पानी में गिर पड़ी। डूबते समय तक वह लगातार यही चिल्लाती रही, "हाय, मेरे बच्चे का क्या होगा? उस समय वेंकटराय केवल छः महीने का था। कुछ साल बाद कंदस्वामी ऐयर ने दूसरा व्याह कर लिया। कुछ दिनों तक तो सबकुछ ठीक ढंग से चलता रहा, लेकिन बाद में बालक वेंकटराय को यह महसूस होने लगा कि मेरे पिता और सौतेली मां दोनों ही मुझे नहीं चाहते। धीरे-धीरे उन्हें उससे अकारण ही घृणा भी हो गई। सौतेली मां उसे यह कहकर पीटती कि यह जानबूझकर मेरा कहना नहीं मानता

और जब वह रोता हुआ पिता के पास पहुंचता तो वह भी उसे पीटते। यह बात अभागे बच्चे की समझ में न आती। अगर कोई कुत्ते को पीटता या उसपर पत्थर फेंककर मारता और वह दर्द से चीखता हुआ भागता तो उसे देखकर वेंकटराय के हृदय में भ्रातृत्व की भावना जाग उठती और वह देर तक उस बेचारे जानवर को खड़ा-खड़ा देखता रहता। अब वह सात साल का था और स्कूल जाने लगा था। लेकिन पढ़ाई में उसका मन नहीं लगता था। उसके मास्टरों ने पहले उसे डांटा-धमकाया और फिर मारा-पीटा भी, लेकिन अंत में उसे गधा समझकर छोड़ दिया।

एक दिन उसके स्कूल का एक मित्र शौरिमुत्तु उसे अपने घर ले गया। उसकी मां द्वार पर खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी। उसके पहुंचते ही उसने उसे छाती से लगाकर प्यार किया और फिर हाथ पकड़कर भीतर ले गई।

"तुम्हारे साथ कौन आया है ?" उसकी मां ने पूछा।

"वह मेरी क्लास में पढ़ता है और गांव के एकाउंटेंट का लड़का है। मैं उसे अपने साथ खेलने के लिए बुला लाया हूं। क्या उसे कुछ खाने को दे सकती हो ?"

शौरिमुत्तु के घर की हर चीज वेंकटराय को बड़ी अच्छी लगी। वह उसके साथ दो-तीन दिन तक उसके घर गया।

'मेरी मां मुझसे इतनी मुहब्बत क्यों नहीं करती, जितनी शौरि की मां उससे करती है ?" उसने मन में सोचा। एक दिन उसने शौरि को अलग ले जाकर पूछा, "मां कैसे बनाई जाती है ? तुम्हें अपनी मां कैसे मिली ?"

शौरिमुत्तु इसका जवाब नहीं दे सका। उसकी समझ में नहीं आया कि बच्चों को अपनी माताएं कैसे मिलती हैं। आखिरकार उसने कहा, "हमें मां भगवान देता है। पता नहीं क्यों, उसने तुम्हें अच्छी मां नहीं दी। शायद वह तुमसे नाराज है।"

अपनी मां के आने पर उसने कहा, "मां, जाने क्यों, वेंकटराय की मां उसे हमेशा मारा करती है। क्या उसे तुम-जैसी अच्छी मां नहीं मिल सकती ?"

मेरी ने मुस्कराकर कहा, "अगर तुम अच्छे होगे तो तुम्हारी मां तुम्हें नहीं पीटेगी।" यह कहते हुए उसने शौरि के मुंह को थपथपाया और उसका

सिर चूम लिया।

"मुझे मेरी मां कब मिली ? तुम शौरि की मां कब बनीं ?" वेंकटराय ने पूछा।

मेरी लड़के के भोलेपन पर दया दिखाते हुए मुस्कराई और बोली, "क्या यह बात तुम्हें किसीने नहीं बताई ? जब तुम नन्हें-से थे तभी तुम्हारी मां शैतान-कुंड में गिरकर डूब गई ? उसके बाद तुम्हारे बाप ने दूसरा ब्याह किया। ब्याह के समय मैं वहां थी और मुझे पान-सुपारी मिली थी। जो तुम्हें पीटती है, वह तुम्हारी अपनी मां नहीं है। वह तो बेचारी मर गई !"

"तो मेरी मां अब कहां है ?" वेंकटराय ने आंखें फाड़कर पूछा।

"बेटे, अगर तुम भगवान् से प्रार्थना करोगे तो तुम्हारी मां मिल जायगी।"

"भगवान् कहां है ? मैं उसकी प्रार्थना कहां करूं ?"

"उधर देखो।" शौरि की मां ने दीवार पर लटकती हुई वर्जिन मेरी की तस्वीर दिखाते हुए कहा। वेंकटराय बहुत देर तक खड़ा-खड़ा तस्वीर देखता रहा। इससे उसमें एक नया जीवन आ गया। वह घर को चल दिया। रास्ते में एक गिरजा पड़ता था। एक खिड़की में से उसने भीतर झांककर देखा। वहां भी उसे दीवार पर एक बड़ी तस्वीर दिखाई दी। वह उसे टकटकी बांधकर देखता रहा। धीरे-धीरे ऐसा मालूम हुआ मानो, तस्वीर में जान आ गई और वह दीवार से उतर आई। वह एक स्त्री थी, प्रेम की साक्षात् मूर्ति। वह आई और वेंकटराव के पास खड़ी हो गई। उसे लगा जैसे उसकी प्रार्थना सुनकर सचमुच उसकी मां उसके पास आ गई। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।

"मेरे बच्चे, मेरे प्यारे वेंकटराय," उसने उसे कहते हुए सुना। कितनी प्यारी आवाज थी ! उसे अपने मुंह पर उसके हाथ का स्पर्श अनुभव हुआ और रोमांच हो आया। आखिर उसे अपनी मां मिल ही गई। उसने उसे छाती से लगाकर प्यार किया और कहा, "मेरे पीछे-पीछे आओ।" वह आगे-आगे चलने लगी और चलते-चलते वे दूर निकल गये। बीच-बीच में वह रुकती और वेंकटराय को उठाकर प्यार कर लेती।

"मेरे बच्चे, तूने इतने दिन तक दुःख उठाये ! तूने मुझे पहले क्यों नहीं बुला लिया ?" उस स्त्री ने कहा।

"मुझे पता नहीं था, मां ?" वेंकटराय बोला और रोने लगा।

"रो मत।" मां ने कहा और अपनी साड़ी के छोर से वेंकटराय के आंसू पोंछ डाले।

वे चलते रहे और अंत में एक ईसाई पादरी के मकान पर पहुंचे। वेंकटराय फाटक पर खड़ा हो गया। "यह बहुत अच्छी जगह है, आओ, यहीं बाग में बैठें। घर जाने पर भी तो मां मारेगी।" वह बोला और अंदर जाने की चेष्टा करने लगा।

"वहां मत जाओ।" उसकी मां ने उसे सावधान करते हुए कहा।

"क्यों ? वहां जाने से क्या होगा ?" वेंकटराय ने पूछा।

"कोई आ जायगा और फिर मैं नहीं ठहर सकूंगी। मुझे चले जाना पड़ेगा।" मां ने कहा।

"मुझे बहुत प्यास लगी है। चलो, बाग के कुएं से पानी पीकर लौट आयेंगे।" यह कहकर वेंकटराय मां का हाथ पकड़ कर भीतर चला गया।

"लड़के, तुम कौन हो ?" पादरी ने मुंह से सिगार हाथ में पकड़ते हुए बच्चे के पास आकर पूछा। मां अदृश्य हो गई।

"मां-मां" कहकर वेंकटराय चीख पड़ा। वह बाग में इधर-उधर दरख्तों के बीच भागा-भागा फिरा और चिल्लाता रहा, "मां, तुम कहां चली गईं ? लौट आओ, लौट आओ।"

पादरी उसे शांत कर अपने घर ले गया और थोड़ा पानी पिलाने के बाद बोला, "बच्चे, तुम कौन हो ?" उस समय वेंकटराय को बहुत तेज बुखार था।

"बच्चे, तुम्हें सिर्फ यीशु बचायगा। खुदा का वही एक लाजवाब बेटा है। देखो, यह उसकी तस्वीर है। वह तुम्हारी रक्षा करेगा और इधर देखो, यह उसकी मां मेरी की तस्वीर है, जिसने उसे पृथ्वी पर जन्म दिया था। वही तुमपर दया करके तुम्हें यहां लाई थी।"

"नहीं-नहीं, वह 'मेरी' नहीं, मेरी मां थी। मैं उसे ढूंढ़ निकालूंगा।

मैं उसके बिना नहीं जी सकता।" तेज बुखार में इस तरह बक-बक करता हुआ वेंकटराय भाग खड़ा हुआ! अंधेरा हो चुका था। पादरी ने उसका पीछा नहीं किया।

इधर-उधर टक्करें खाता हुआ वह बैलगाड़ी के अड्डे के पास विनायक के एक छोटे-से मंदिर में पहुंचा। पैंठ का दिन न होने के कारण वहां कोई भी आदमी नहीं था। मूर्ति के सामने किसीका जलाया हुआ एक छोटा-सा दीपक टिमटिमा रहा था। वेंकटराय जाकर मूर्ति के सामने गिर पड़ा और पड़ा-पड़ा 'मां-मां' बड़बड़ाता रहा। जल्दी ही उसे गहरी नींद आ गई। बीच रात में वह एकाएक उठ बैठा। उसकी मां उसके पास ही बैठी थी।

"मां!" वेंकटराय चिल्लाया और उसके गले से लिपट गया। "तुम फिर तो मुझे छोड़कर नहीं जाओगी?" उसने रोकर पूछा।

"नहीं, अब नहीं जाऊंगी।" मां ने वादा किया और उसका मुंह थपथपाते हुए उसे प्यार किया।

"अगर तुम रोज यहां आकर सोया करोगे तो मैं भी जरूर आया करूंगी। दिन में मैं तुम्हारे पास नहीं आ सकती।" वह बोली और पौ फटने से पहले ही अदृश्य हो गई।

उस दिन से वेंकटराय सदा उसी मंदिर में सोने जाया करता। उसके चेहरे पर एक नई ज्योति आ गई थी और वह सारे दिन मनगाने गीत गाता हुआ इधर-उधर फिरा करता था। गांववाले समझते थे कि लड़का पागल हो गया है और उसपर तरस खाते थे। लेकिन सच बात यह थी कि वेंकटराय आनंद के सागर में तैर रहा था। रात को वह हाथ जोड़कर मूर्ति की तीन बार परिक्रमा करता और प्रार्थना करने के बाद उसके पीछे सो जाता। उसकी मां हर रात को बिना नागा उसके पास आती। बहुत दिनों तक यही क्रम चलता रहा।

"बेचारा पागल लड़का! कितनी छोटी उम्र में यह बीमारी लग गई इसे!" कुएं पर औरतें कहतीं।

"यह सब बहानेबाजी है।" कंदस्वामी की पत्नी कहती।

"सच है या झूठ, यह तो भगवान् ही जाने।" कंदस्वामी कहते और

अपने मन को समझाने की कोशिश करते। इससे उन्हें क्रोध आने लगा और गांव के हँसमुख बच्चों को देखकर ईर्ष्या होने लगी।

एक दिन शाम को जब वेंकटराय रोज की तरह मंदिर में सोने गया तो वहां विनायक की मूर्ति नहीं थी। मंदिर धराशायी हो पत्थरों और खंभों का ढेर बना पड़ा था। किसीने उसे फिर से बनवाने के लिए गिरवा दिया था। काम शुरू हो गया था और मूर्ति दूसरे स्थान पर रख दी गई थी।

बेचारा लड़का उन पत्थरों के बीच बैठा-बैठा सारी रात जागता रहा, परंतु उसकी मां नहीं आई। उसका सपना टूट गया और संसार एक बार फिर उसके लिए प्रेम से रिक्त हो गया।

वेंकटराय ने गिरजा के पास जाकर पुरानी खिड़की में-से झांककर देखा। दीवार पर उसे मेरी की तस्वीर दिखाई दी। यह इसकी मां-जैसी लगती थी, लेकिन इस बार वह उतरकर उसके पास नहीं आई, एक तस्वीर की तरह दीवार पर ही टंगी रही।

कितने ही दिनों तक वेंकटराय टूटे हुए मंदिर और गिरजा के इधर-उधर इस तरह चक्कर लगाता रहा, जैसे किसी खोई चीज को ढूंढ़ रहा हो। एक दिन वह पादरी के पास जाकर बोला, "पिता, मैं ईसाई बनना चाहता हूं।"

पादरी ने उसे बुलाकर बड़ी दयालुता के साथ बातचीत की। बाद में उसने कंदस्वामी ऐयर के पास जाकर कहा, "मां मेरी की मेहरबानी से तुम्हारे लड़के का पागलपन दूर हो गया है। वह ईसाई बनना चाहता है। हमें उसकी इच्छा के विरुद्ध नहीं चलना चाहिए।"

"ऐसा नहीं हो सकता। हम ब्राह्मण हैं।" कंदस्वामी ने उत्तर दिया, और फिर पादरी ने इस बात पर ज्यादा जोर नहीं दिया।

"जाने दो उसे। इसके सिवा और चारा ही क्या है? झूठ हो या सच, भगवान् करे, उसका पागलपन दूर हो जाय और वह कहीं भी खुश रहे।" ऐयर की पत्नी ने कहा।

"राम-राम! ऐसी बातें न कहो।" कंदस्वामी ऐयर ने जवाब दिया।

लेकिन एक दिन वेंकटराय गांव से गायब हो गया और ऐसा गायब

हुआ कि किसीको पता नहीं चला कि कहां गया।

मद्रास जाकर वेंकटराय ने एक बड़े पादरी से बपतिस्मा ले लिया और अपना नाम बदलकर रॉयप रख लिया। एक अखबार के मालिक ने उसे अखवार वेचने पर रख लिया। उसके मां-बाप को इसका कुछ पता नहीं चला।

ईसाई हो जाने पर भी रॉयप विनायक की कोई मूर्ति देखता तो हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता। उसकी रातें सदा विनायक की मूर्ति के पास ही बीततीं। अब भी ऐसा प्रतीत होता है, मानो वह अपनी मां के लौट आने की प्रतीक्षा कर रहा है। अखवार वेचनेवाले लड़के उसे बहुत चाहते हैं।

... .ॐ. ...

"यह तो अजीब कहानी है! भला इसका कोई आदर्श भी है! जरा समझाइये तो।" संपादक ने पूछा।

"कोई आदर्श नहीं है। यह तो मैंने सिर्फ अपने चित्त की शांति के लिए लिखी है।" लेखक ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"आप तो बिल्कुल रॉयप-जैसे हँसते हैं। क्या कहानी विधुरों को दूसरा ब्याह करने से रोकने के लिए लिखी गई है?"

"नहीं-नहीं; ब्याह करना तो हमेशा अच्छा होता है।"

"तो क्या यह विनायक की पूजा का समर्थन करने को लिखी गई है?"

"पूजा सबकी अच्छी होती है। आप इस कहानी का यह उद्देश्य मान सकते हैं।"

"तो शायद यह सौतेली माताओं के लिए चेतावनी है?"

"क्या सौतेली मांएं भी आपका अखबार पढ़ती हैं? तब तो यह अच्छी बात है।"

"आजकल की सौतेली मांएं बच्चों की देखभाल सगी मांओं से भी ज्यादा अच्छी तरह करती हैं।"

"हो सकता है। जमाना वदल गया है। लेकिन सौतेली मांएं हर तरह की होती हैं, यह तो आप जानते ही हैं। एक सास, जिसे अपनी छोटी-सी बहू की देखभाल करनी पड़ती है, एक तरह की सौतेली मां होती है। इसी तरह वह स्त्री भी, जो अपने यहां किसी छोटी लड़की को नौकर रखती है,

सौतेली मां ही होती है। किसी पिल्ले को पालनेवाला आदमी भी सौतेली मां का ही काम करता है। सारांश यह कि जिस किसी भी स्त्री या पुरुष पर विकास पाते हुए मस्तिष्क और शरीर की देखभाल करने की जिम्मेदारी होती है, वही उसके लिए सौतेली मां हो जाता है। स्वाभाविक प्यार तो सिर्फ मां का होता है। लेकिन वह एक आदर्श हैं, जिसतक दूसरे प्रेमों को पहुंचाने की चेष्टा करनी चाहिए। दूसरों को चाहिए कि वे भी मां की ही तरह चौकसी, समझदारी और पवित्रता के साथ व्यवहार और प्रेम करने का प्रयत्न करें। दूध बढ़ते हुए बच्चे के शरीर को पोषण देता है, लेकिन मस्तिष्क की बढ़ती के लिए प्यार के दूध की आवश्यकता है। इसके बिना बच्चे की आत्मा मुरझा जाती है।"

"बस रहने दीजिये। किसीने आपसे लैक्चर पिलाने के लिए नहीं कहा था। आपने मेरे सिर में दर्द कर दिया। हमसे जितना भी होता है, हम अपने अखबार बेचनेवाले लड़कों की चिंता रखते हैं। वे सुस्त और शैतान होते हैं, फिर भी हम इन बातों पर ध्यान नहीं देते।"

"यह सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। रॉयप की अच्छी तरह देखभाल किया कीजिये और अगर कभी आपको उसके व्यवहार में विचित्रता दिखाई दे तो उसपर क्रोध न करके उसे विनायक के मंदिर में भेज दिया कीजिये।" □

शांति

□□

वहू चौदह साल की थी। "लक्ष्मी, मैं चार घड़े पानी खींच चुकी। चार घड़े और खींचकर तू हमाम भर दे। मैं चौके में जा रही हूं।" सास ने कहा।

वहू ने घड़ा कुएं में डाला और हाथ वढ़ाकर रस्सी नीची कर दी, ताकि घड़ा भर जाय। जव वह उसे ऊपर खींचने लगी तो उसका वांया हाथ दुःखने लगा, यहांतक कि वह घड़े को मुश्किल से खींच पाई। वह हाय-तोबा करना नहीं चाहती थी, इसलिए पैर से रस्सी दबाकर दाहिने हाथ से पानी खींचने लगी। इस तरह चार या पांच घड़े पानी खींचकर उसने हमाम भर दिया।

लक्ष्मी की सास का घराना गरीब और पुराने ढंग का था। जवान होते ही बहू का गौना कर लिया गया और वह अपने पति के साथ रहने के लिए बुला ली गई। सास वहू को पाकर बड़ी खुश हुई। जव किसीपर हुक्म चलाने को मिल जाता है तो किसे खुशी नहीं होती!

सास जो काम वताती, उसे लक्ष्मी मेहनत और प्रसन्नता से करती, लेकिन पानी खींचना उसके वश से बाहर की बात मालूम होती। दो दिन तक उसने बड़ी मुश्किल से काम चलाया। तीसरे दिन रात को उसने झिझकते हुए अपने पति से कहा, "मुझे तुमसे कुछ कहना है। नाराज तो नहीं होगे?"

"कहो, क्या वात है?" नटेश ने दयालुता के साथ पूछा।

"तुम नाराज होगे।" लक्ष्मी ने फिर कहा।

"डरो नहीं, मैं वादा करता हूं कि नाराज नहीं हूंगा। बताओ, क्या

वात है ?" नटेश ने आश्वासन देते हुए कहा !

"मुझसे कुएं से पानी नहीं खींचा जाता। मेरे हाथ में दर्द होने लगता है। अगर मैं मां से कहूंगी तो डर लगता है कि कहीं वह गलत न समझ बैठें।" यह कहकर लक्ष्मी ने अपने पति की ओर इस तरह देखा जैसे उससे कोई वड़ा अपराध हो गया हो ।

पहले तो नटेश को क्रोध-सा आया। उसने सोचा कि शायद सास-बहू के प्रचलित झगड़े का आरंभ हो रहा है। लेकिन जब उसकी छोटी-सी पत्नी ने उसे अपनी कठिनाई बतलाई तो उसकी समझ में आ गया और उसे विश्वास हो गया कि यह जबरदस्ती लड़ने के लिए ऐसा नहीं कर रही है, बल्कि इसके हाथ में कुछ खराबी है।

उस रात नटेश बहुत देर तक सो नहीं सका। सुबह वह एक नये इरादे के साथ उठा। उठने के बाद वह अक्सर थोड़ी-सी कसरत किया करता था। उसने सोचा कि अगर इसके बजाय मैं पानी खींचकर हमाम भर दिया करूं तो कसरत-की-कसरत हो जायगी और मेरी स्त्री की परेशानी भी दूर हो जायगी। उसकी बांह के बारे में किसी डाक्टर से सलाह लेने का इरादा भी किया।

"नटेश, पानी तू क्यों भर रहा है ? यह तो तेरी बहू का काम है। क्या तू मुझे इस बात की सजा दे रहा है कि मैंने उससे घर के लिए थोड़ा-सा पानी भरने को कह दिया है ?" नटेश की मां ने क्रोध में भरकर पूछा।

"नहीं मां, यह बात नहीं है। यह काम मैं उसकी खातिर नहीं, बल्कि इसलिए कर रहा हूं कि इससे मेरी तंदुरुस्ती को फ़ायदा पहुंचेगा। तुम दोनों घर का काम किया करो। मैं कसरत के खयाल से रोज सवेरे पानी भर दिया करूंगा," नटेश ने कहा। उसने सोचा कि अगर अपनी स्त्री के हाथ की बात मां से कह दूंगा तो वह चिड़चिड़ाने लगेगी। इसलिए उसने सच्ची बात नहीं बताई।

लेकिन उसकी मां बराबर भुनभुनाती रही। उसने सोचा कि यह करतूत बदतमीज बहू की है। वह लक्ष्मी को बुरा समझने लगी।

नटेश की मां का नाम पार्वती था। उसकी बड़ी लड़की सीता विधवा

हो जाने के बाद से उसी के पास रहती थी। वह दिन-भर आलसियों की तरह पड़ी रहती और दूसरों में ऐब निकाला करती।

"नटेश का तंदुरुस्ती और कसरत का बहाना बिल्कुल झूठा है, यह सब बहू की शरारत है। नटेश की तंदुरुस्ती अबतक बिलकुल अच्छी थी। अब क्या हो गया?" सीता ने कहा।

"अरा सोचो तो भला, मर्द घर के लिए पानी खींचता हुआ कैसा लगेगा! कितनी शर्म की बात है!" मां बोली।

"रानीजी को आराम करने दो। हमाम भरने के लिए पानी मैं खींच दिया करूंगी।" सीता ने कहा।

इस तरह की बकझक चलती रही। नटेश के गृहस्थ-जीवन का नया बाग कांटेदार झाड़ियों से भर गया और वहां प्रेम को पनपने को जगह ही नहीं रही। लक्ष्मी की आत्मा बड़ी दुखी थी।

उस दिन लक्ष्मी सोकर जल्दी उठी और उसने चुपके से कुएं के पास जाकर पहले दिन की तरह अपने पैर से रस्सी दबाकर किसी तरह हमाम भरने के लिए काफी पानी खींच लिया। इसके बाद फिर खाट पर जाकर सो गई। जब और दिन की तरह नटेश उठकर पानी खींचने लगा तो उसने देखा कि हमाम भरा जा चुका है। उसने समझा कि मां ने भर दिया होगा और वह चुपचाप अपने काम में लग गया।

यही बात दूसरे दिन भी हुई। "क्या किया जाय इसके लिए? मां नहीं चाहती कि पानी खींचकर अपने को तकलीफ पहुंचाऊं।" नटेश ने मन-ही-मन में सोचा और किसीसे कुछ कहा नहीं। उस रात लक्ष्मी को बुखार चढ़ आया और उसका हाथ बुरी तरह सूज गया। तब नटेश की समझ में आया कि बात क्या है। वह बड़ा परेशान हुआ और खाट पर पड़ा-पड़ा जागता रहा। कुछ देर बाद उसे नींद आ गई।

"इसके हाथ में तो कोई जन्म की खराबी है। किस खोटे कर्मों से हम इस पाप को अपने घर उठा लाये?" नटेश की निर्दय मां ने दूसरे दिन कहना शुरू किया। नटेश यह सहन नहीं कर सका। वह मां से झगड़ पड़ा और सख्त दर्द में पड़ी हुई बीमार पत्नी पर भी बात-बात पर बिगड़ने

लगा। इसी तरह दो दिन बीत गये। तब उसने अपने ससुर को लिखा कि आकर अपनी लड़की को ले जाओ। ससुर आ गया।

"तुम्हारी लड़की के हाथ में कोई जन्म की खराबी है। तुमने हमें यह बात क्यों नहीं बताई थी ?" पार्वती ने पूछा।

"नहीं, यह जन्म की खराबी नहीं है। कभी-कभी इसका हाथ सूज जाया करता था, बस इतनी-सी बात है। अब मैं इसे घर ले जाऊंगा और बिलकुल अच्छी हो जाने पर यहां लाऊंगा।" लक्ष्मी के बाप ने अपने को शांत रखते हुए कहा। वह अपनी लड़की को बुखार चढ़े में ही घर ले गया।

"इतने रिश्ते आ रहे थे कि पूछो मत ! क्या हमने उन सबको इसीलिए नामंजूर किया था कि हमारे लड़के को एक अपाहिज लड़की और एक हजार रुपया मिल जाय ? क्या हमारे सिर पर से कर्जा उतारने का कोई उपाय नहीं था ? हमारा भाग तो देखो !"

मां-बेटी रोज इसी तरह बातें किया करतीं। नटेश को ससुर का एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था कि लक्ष्मी के हाथ की सूजन उतर गई है और बुखार भी कम है, लेकिन अभी वह खाट से उठ नहीं सकती।

एक महीने बाद दूसरा पत्र आया, जिसमें लक्ष्मी के पिता ने सूचना दी कि बीमारी ने पलटा खाया है और लक्ष्मी को फिर से बुखार चढ़ आया है।

"यह बीमारी अच्छी नहीं हो सकती। यह पिछले कर्मों का फल है।" पार्वती ने कहा।

"शायद ऐसा ही हो। हमें अपने पापों का दंड भोगना ही चाहिए।" नटेश बोला।

"तुम दूसरा ब्याह कर लो। मैं यह बात ज्यादा दिन नहीं सह सकती।" मां ने कहा।

"बकवास मत करो।" नटेश बोला और अपने दफ्तर चला गया। वह तालुका के दफ्तर में क्लर्क था।

इसी तरह एक वर्ष बीत गया। एक दिन पार्वती का छोटा भाई अपनी बारह साल की लड़की मीनाक्षी को लेकर नटेश के घर आया।

"देखो, कितनी अच्छी है यह लड़की ! तुम्हारे ब्याह के समय यह बहुत

ही छोटी थी, नहीं तो हम जरूर इससे तुम्हारा ब्याह कर देते। अब हम इसके लिए वर की तलाश में क्यों टक्करें खाते फिरें ? यह हमारी बच्ची है, हमारे ही घर में आ जाय।" पार्वती ने कहा।

शुरू-शुरू में ऐसी बातों से नटेश को घृणा मालूम हुई। लेकिन किसी बात के पीछे पड़े रहने पर वह पूरी होकर ही रहती है। दूसरे साल चैत्र के महीने में तिरुपति देवता के सामने नटेश का दूसरा ब्याह हो गया।

लगभग छः महीने बाद मीनाक्षी अपने पति के घर पहुंची। पार्वती उस पर बड़ी दयालु थी और मीनाक्षी स्वयं बड़ी फुर्तीली और अच्छी लड़की थी। अवस्था में छोटी होने पर भी वह घर का सारा कामकाज कर लेती थी। लेकिन इन सब बातों के होते हुए भी नटेश के हृदय में शांति नहीं थी। कोई बात उसे सताती रहती थी।

"तुम मुझसे प्रेम क्यों नहीं करते ?" मीनाक्षी ने पूछा।

"तुम ऐसा क्यों सोचती हो कि मैं तुमसे प्रेम नहीं करता ? मैं तुम्हें डांटता या पीटता तो नहीं ?" नटेश ने कहा।

"तुम मेरे सवाल का जवाब नहीं दे रहे हो। असल बात तो यह है कि तुम्हारा मन कृष्णपुर में रहता है।" मीनाक्षी बोली।

कृष्णपुर उस गांव का नाम था, जहां लक्ष्मी बीमार पड़ी हुई थी। नटेश के दूसरे ब्याह के थोड़े दिन बाद ही लक्ष्मी का बुखार कम हो गया और उसके हाथ की सूजन भी उतर गई। जल्दी ही वह बिल्कुल चंगी हो गई।

"देखी उसकी मक्कारी ! मैंने सुना है कि अब वह अपनी मां के घर का सारा पानी भर लेती है और यहां उसे चार घड़े खींचने भी भारी थे।" पार्वती ने चिल्लाकर कहा।

"और अब वह मक्कार यहां आने की सोच रही है। ऐसा मालूम होता है कि मेरे ग़रीब लड़के को दो-दो स्त्रियों का बोझ संभालना पड़ेगा। यह नामुमकिन है।" उसने फिर कहा।

"यह तो कुछ भी नहीं है, मां ! तुमने उसके चाल-चलन के बारे में भी कुछ सुना है ?" सीता ने कहा।

"अरे, रहने भी दे उस बेशर्मी के बात को।" मां ने कहा।

"मैं तो यही चाहती हूं कि ये बातें नटेश के कानों तक न पहुंचने पायें, लेकिन दुनिया का मुंह कौन पकड़ सकता है ?" सीता बोली।"

परंतु कृष्णपुर के लोगों में ऐसी कोई चर्चा नहीं थी। वे सब लक्ष्मी पर तरस खाते थे और कहते थे, "यह अन्याय तो देखो ! थोड़े दिन बीमार रहने की वजह से ही बेचारी को छोड़ दिया।"

"ऐसा लगता है कि इसके पति ने दूसरा ब्याह कर लिया है। कैसा खुल्लमखुल्ला अन्याय है यह ! हीरा जैसी लड़की की जिंदगी खराब कर दी।" कोई-कोई कहता।

"उन्हें अदालत के समाने ले जाकर खड़ा करना चाहिए, जिससे कुछ सबक तो मिले।" दूसरे कहते।

इसी प्रकार कुछ दिन बीत गये। पहले तो लक्ष्मी को अपना मुंह दिखाते भी लज्जा आती थी और वह घर में बंद रहती थी; लेकिन इस तरह वह कितने दिन रह सकती थी ? वह नदी-किनारे हनुमानजी के मंदिर में जाने लगी। नदी में नहाकर वह मूर्ति के सामने एक फल चढ़ाती और प्रार्थना करती, "हे पिता, तुमने एक बार सीता को कष्ट से उबारा था तो फिर मेरी ओर कृपा-दृष्टि क्यों नहीं करते ?" इसी प्रकार वह प्रतिदिन देवता के सामने प्रार्थना करती।

ऐसे ही दो वर्ष और बीत गये। "मैंने जरूर पिछले जन्म में कोई बड़ा पाप किया होगा।" लक्ष्मी अपने मन को समझाने के लिए कहती और ईश्वर के प्रति उसका विश्वास कम न होता।

धीरे-धीरे कृष्णपुर में भी कुछ लोग ऐसी ही बातें उड़ाने लगे, जैसी लक्ष्मी की सास और ननद को सुहाती थीं।

"उन्होंने इसे ऐसे ही थोड़े ही निकाल दिया होगा ? कोई-न-कोई खराबी होगी जरूर।" उन्होंने कहना शुरू किया। फिर तो एक की दस बातें होने लगीं। एक दिन उसकी बड़ी भावज बोली, "कोई लड़की अपने पति से इतने दिन तक कैसे अलग रह सकती है ! इससे तो यही अच्छा कि है वह जीभ खींचकर मर जाय।" ये बातें उसने जोर से कहीं, जिससे कि लक्ष्मी भी सुन ले और उसे ऐसी बातें कहने से रोकनेवाला था ही कौन ? लक्ष्मी की मां को मरे बहुत दिन हो चुके थे और उसका बाप बीमार पड़ा-पड़ा

मरने की तैयारी कर रहा था। पैर में जहर फैल जाने से वह तीन महीने से खाट पर पड़ा था। उन तीन महीनों में बीमार बाप की सेवा करते रहने से लक्ष्मी अपना दुःख बहुत-कुछ भूली रही।

एक दिन उसके पिता ने अपने लड़के को बुलाकर कहा, "बेटा, मैं अब नहीं बचूंगा, लेकिन मरने से पहले मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं। तुम जाकर नटेश के हाथ-पैर जोड़ो और लक्ष्मी को वहां छोड़ आओ। वहां उसके साथ जो कुछ भी हो, भगवान मालिक। मेरे मरने के बाद वह यहां नहीं रह सकती।" यह कहकर वह जोर-जोर से रोने लगा और बेहोश हो गया। तीन दिन तक इसी दशा में रहने के बाद उसकी मृत्यु हो गई।

लक्ष्मी के भाई ने पिता की इच्छा पूरी करने के लिए कई प्रकार से चेष्टा की, लेकिन सब बेकार रही।

"उस बदनाम को मैं अपने घर में कदम नहीं रखने दूंगी।" पार्वती ने साफ-साफ कह दिया और उसकी बेटी ने हां-में-हां मिलाई। नटेश की इच्छा तो थी, लेकिन उसे इतना साहस नहीं हुआ कि लक्ष्मी को फिर से अपने पास रख ले। उसने उसके भाई को यह कहकर वापस भेज दिया कि अब मैं लक्ष्मी को नहीं रख सकता।

लक्ष्मी रोज की तरह हनुमान-मंदिर में पूजा कर पास ही बैठी रो रही थी।

"तुम रो क्यों रही हो ?" वहां खड़े हुए एक ग्वाले के लड़के ने पूछा। लक्ष्मी उसे प्रतिदिन हनुमानजी पर चढ़ाया हुआ केला दिया करती थी, इसलिए दोनों में मित्रता हो गई थी।

लड़के की बात का जवाब न देकर लक्ष्मी रोती रही।

"रोओ मत मां, भगवान् तुम्हारी मदद करेंगे।" उसने कहा।

"भगवान को मुझपर दया नहीं आती, भइया ! मैं इसीलिए तो रो रही हूं कि मैं मरना चाहती हूं और मौत नहीं आती।" लक्ष्मी ने कहा।

"मेरी बड़ी बहन भी इसी तरह रोया करती थी और एक दिन उसने कुएं में डूबकर जान दे दी। उसका आदमी उसे बुरी तरह पीटा करता

था। उससे यह बर्दाश्त नहीं हो सका। उसका आदमी शराबी था और उसने उसको इस दशा तक पहुंचा दिया।"

"अगर मेरा आदमी मुझे पीटता तो मैं सह लेती। चाहे वह कितना ही पीटता, मैं परवा नहीं करती।"

"तो फिर क्यों रोती हो ?"

"अगर मैं तुम्हें बताऊं तो तुम समझ नहीं पाओगे। तुम्हारी बहन मरकर सुखी हो गई, भइया। मैंने भी मरने की ठान ली है, लेकिन मुझे डर लगता है। क्या तुम मेरे साथ तालाब तक चले चलोगे ?"

"ताकि तुम पानी में गिर पड़ो ? नहीं, मैं तुम्हारे साथ नहीं चलूंगा।"

"नहीं चलोगे ? अच्छा, मैं अकेली चली जाऊंगी।"

लक्ष्मी हनुमानजी के सामने साष्टांग लेट गई और बहुत देर तक चुप-चाप पड़ी रही। फिर वह उठी और तेजी से बड़े कुंड की ओर चल दी।

"मत जाओ, मत जाओ। मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूं। सब ठीक हो जायगा। अगर तुम पानी में डूब मरोगी तो भूत बन जाओगी। ऐसा काम मत करो।" ग्वाले का लड़का यह कहता हुआ उसके पीछे-पीछे दौड़ा।

नदी की तली में एक गहरा गढ़ा था। उसीको बड़ा कुंड कहते थे। नदी ऊपर तक भरी हुई थी और दोपहर का समय था। आसपास कोई आता-जाता नहीं दिखाई देता था। कुछ चरवाहे नदी के दूसरे किनारे पर दूर अपने ढोर चरा रहे थे। उन्होंने न कुछ देखा, न सुना। जैसे ही लक्ष्मी पानी में कूदी, ग्वाले का लड़का डरकर भाग गया।

"कहते हैं, वह नदी में डूब कर मर गई। बड़ा अच्छा हुआ।"
"अब गांववाले हमारे बारे में उलटी-सीधी बातें नहीं कहेंगे। हम बदनामी से बच गये।"
"हमने सुना है कि जो आदमी बेमौत मरते हैं, वे भूत बन जाते हैं।"
"हां-हां, भूत तो बनेगी ही वह। बनने दो, वह इसी लायक थी।"
ये बातें पार्वती, सीता और मीनाक्षी कर रही थीं। मीनाक्षी को सात मास का गर्भ था।

दो महीने बाद मीनाक्षी को बिना किसी विशेष कष्ट के प्रसव हुआ

और एक लड़की पैदा हुई। नटेश के घर में वह बड़ी खुशी का दिन था। हम मृत्यु को बड़े दुर्भाग्य की बात समझते हैं, लेकिन वह बहुत-से-कष्टों और दुखों का अंत कर देती है। उसके बिना जीवन सदा के लिए नरक बन जाँय। लक्ष्मी के डूबने के समाचार से कितनों को खुशी हुई। नटेश तक को तसल्ली और शांति मिली।

बच्चे के जन्म के दस दिन बाद मीनाक्षी को हल्का-हल्का बुखार रहने लगा। "कोई बात नहीं है, ठीक हो जायगी।" एक बूढ़ी औरत ने कहा, जो उसे देखने आई थी।

दूसरे दिन मीनाक्षी बकझक करने लगी, मानो उसे सरसाम हो गया हो। "चुप रहो।" सास ने डपटकर कहा।

मीनाक्षी ने उसे घूरकर देखा। बोली, "हूं, मैं जरूर चुप रहूंगी," वह चिल्लाकर बोली। "तुमने मुझे घर से बाहर निकाल दिया था। अब मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगी।" कुछ रुककर वह फिर चिल्लाई, "मेरे बच्चा पैदा हुआ है न! वह किसका बच्चा है? उठ, भाग, जा, नदी में गिरकर मर जा।"

मारे क्रोध के मीनाक्षी के आंखें घूमने लगीं और उसका शरीर लकड़ी की तरह ऐंठ गया। थोड़ी देर तक वह इसी दशा में रही, फिर बिछौने से उछलकर भागने लगी।

"हे भगवान्! यह तो भूत है।" सीता भय से चिल्लाई।

"हे ईश्वर! हे माता! मैं तुम्हें जो कुछ कहोगी दूंगी। हे मारिअम्मा, हमारी रक्षा करो।" पार्वती घबराकर बोली।

पार्वती ने चुपके से मंदिर के पुजारी को बुला भेजा और मुर्गे की बलि चढ़ाने का प्रबंध किया।

ज्योतिषी सीताराम ऐयर ने मंत्र पढ़े और बीमार को पान में रखकर पवित्र भस्म दी। मीनाक्षी ने उसे लेकर बिछौने पर रख लिया और कुछ शांत हो गई। भस्म का प्रभाव देखकर सबको प्रसन्नता हुई।

"इसे अपने मुंह में रख लो।" नटेश ने कहा।

"हां, रखती हूं" कहकर मीनाक्षी ने भस्म अपनी हथेली पर उंडेल ली और फिर एकाएक उसे फूंक मारकर उड़ा दिया। इसके बाद वह ठठाकर हँस पड़ी।

"अब मैं तुझे नहीं छोड़ूंगी ! कहां है वह औरत ? उसे मैं देखूंगी। भस्म देकर मुझसे धोखा करना चाहती है ?" वह चिल्लाई और पागलों की तरह हँसी।

"अरी चुड़ैल ! यह तो वही सांपन है, जो डूबकर मरी है। झाड़ू तो ला।" पार्वती ने कहा।

सीता झाड़ू उठा लाई और पार्वती ने उसे लेकर मीनाक्षी के सिर पर मारना शुरू किया।

"मुझे मत मारो, मुझे मत मारो, मैं जाती हूं।" मीनाक्षी चिल्लाई।

"भाग यहां से, निकल यहां से।" यह कहकर पार्वती उसे फिर मारने लगी।

"बस, बहुत हो चुका। ठहरो।" नटेश चिल्लाकर बोला। वह बेचारा इस करुण दृश्य को देखकर पागल-सा हो गया था।

"तू नहीं समझता इन बातों को, नटेश ! दूर खड़ा रह।" पार्वती ने चिल्लाकर कहा।

इस तरह से लोग चुड़ैल के पीछे पांच दिन तक पड़े रहे, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। बेचारी बहू का पागलपन बढ़ता गया।

"यह प्रसव का पागलपन है।" एक ने कहा।

"नहीं, किसीके शाप का फल है।" दूसरे ने कहा।

"मुझे पक्का यकीन है कि यह लक्ष्मी का भूत है।" सीता बोली।

"मुर्गे की बलि काफी नहीं है, देवी बड़ी बलि चाहती है। बकरा चढ़ाना होगा।" पुजारी ने अकेले में पार्वती से कहा और पार्वती ने नटेश से छिपकर इसका इन्तजाम कर दिया; लेकिन सब बेकार।

चार महीने बीत गये और तब, जैसा कि सीताराम ऐयर ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की थी, मीनाक्षी को आराम हो गया और वह बिल्कुल चंगी हो गई। सारी बातें सपने-सी लगने लगीं, लेकिन उसका नतीजा यह हुआ कि हरेक के मन में, यहांतक कि पार्वती के मन में भी, लक्ष्मी के प्रति भय और आदर का एक नया भाव उत्पन्न हो गया। उन्होंने अब उसके बारे में बातचीत करनी बंद कर दी।

मीनाक्षी एक बार फिर बड़े स्नेह और चतुराई के साथ काम करने लगी। उसे बस धुंधली-सी याद रह गई कि बीमारी के दिनों में मैंने मूर्खता-पूर्ण व्यवहार किया था। घर के सब आदमियों की जान-में-जान आई; वे उस घटना के बारे में चुप रहे और चतुराई के साथ अपना काम करते रहे।

एक वर्ष बाद मीनाक्षी फिर गर्भवती हुई। पार्वती ने छिप-छिपकर और प्रकट रूप से भी देवताओं की मानताएं मानी, उनकी पूजा की और बलि चढ़ाई। जब बच्चा होने का समय आया तो नटेश ने पास के कस्बे पाग्लूर के मिशन-अस्पताल से एक नर्स बुला ली। इस बारे में किसी ने कुछ कहा-सुना नहीं। पिछली बार गाँव की एक दाई ने बच्चा कराया था और मीनाक्षी बीमार हो गई थी। इसीलिए हरेक की यही राय हुई कि इस बार होशियार नर्स को बुलाना ठीक होगा।

मीनाक्षी का दूसरा प्रसव भी आसानी के साथ हुआ और इस बार लड़का जन्मा। बच्चा होने के समय अस्पताल की नर्स उसके पास रही और बाद में भी एक महीने तक रोज उसे देखने आती रही। उसने इस बात को ध्यान रखा कि मां को कोई दिमागी गड़बड़ी न हो और बच्चे को समय पर दूध मिलता रहे। नटेश को डर था कि कहीं पिछले प्रसववाली बीमारी फिर न हो जाय। सब बातों के ठीक रहने से उसे बड़ी खुशी हुई और वह नर्स को दस रुपये निकालकर देने लगा। लेकिन नर्स ने यह कहकर कि मुझे रुपयों की जरूरत नहीं है, रुपये लौटा दिये।

"मुझे दुःख है कि मैं आपको इतने थोड़े रुपये दे रहा हूं। इससे ज्यादा मैं दे नहीं सकता। मेहरबानी करके इन्हें आप ले लीजिये और नाराज न होइये।"

"नहीं, नहीं, मैं मेहनताना नहीं चाहती। मैंने यह काम रुपये की वजह से हाथ में नहीं लिया है। मैं तो मुहब्बत की वजह से चली आई हूं।" ऐसा कहकर नर्स ने मीनाक्षी के बच्चे को उठा लिया और कुछ देर तक उसे खिलाती रही।

फिर मीनाक्षी को नमस्कार कर उसने सबसे विदा ली। जिस समय वह बातें कर रही थी, न जाने क्यों नटेश को अपनी पहली पत्नी की याद

आ गई। लेकिन यह सोचकर कि मुझे ऐसी बातों का ध्यान नहीं करना चाहिए, उसने अपने आपको शांत किया।

"जब तुम घर में थीं तो क्या तुम्हें किसी ने पहचाना नहीं, शांतिदेवी ?" पाग्लर अस्पताल के पादरी ने पूछा। शांतिदेवी लक्ष्मी का नया नाम था।

"अस्पताल के कपड़ों ने मुझे पहचाने जाने से बचा लिया। औरतों ने तो मुझे बिल्कुल ही नहीं पहचाना। जिस लड़की के बच्चा हुआ था, वह तो मुझे जानती ही नहीं और उसके पति ने भी शिष्टता के कारण मेरी तरफ ध्यान से नहीं देखा। आखिरी दिन उसे कुछ शक हुआ था, लेकिन मैंने साड़ी का पल्ला अच्छी तरह मुंह पर खींच लिया और इस तरह मैं पहचाने जाने से बच गई।"

"बहुत खूब ! तो क्या तुम्हारे मन में शांति है ?"

"हां, मेरा मन सचमुच शांत है। बीमारों की सेवा करने में मुझे खुशी होती है। अगर आप मुझे नदी से बाहर नहीं निकालते तो मैं भूत बन जाती, जैसा कि ग्वाले के लड़के ने कहा था।"

पादरी हँसा। "भूत-प्रेत कुछ नहीं होता। ये सब बेवकूफी की बातें हैं। तुम खुश तो हो !" उसने पूछा।

"मैं खुश तो नहीं हूं, लेकिन मेरे चित्त में शांति है। मेरे लिए यही काफ़ी है। भगवान् और आप मेरी रक्षा के लिए कम नहीं हैं।"

"क्या तुम अपने पति के पास जाने को राजी हो ? मैं उसे सब बातें बताकर मामला तय कर सकता हूं।" पादरी ने कहा।

"नहीं, पिता, वह भोली लड़की खुश है, मैं वहां क्यों जाऊं ?"

"अगर तुम अपने पति के पास जाना नहीं चाहती तो फिर बप्तिस्मा लेकर हम लोगों में मिलकर क्यों नहीं यहां रहतीं ?" बूढ़े पादरी ने पूछा।

"हनुमानजी नाराज होंगे।" लक्ष्मी बोली और हँस पड़ी।

अगली दीवाली पर शांतिदेवी अपने थैले में एक पैकिट पटाखों का, एक डिब्बा मिठाइयों का और कुछ फूल रखकर मीनाक्षी के गांव गई।

"कमला, मैं तेरे लिए पटाखे लाई हूं।" शांतिदेवी ने कहा। लड़की ने

पहचान लिया कि यह वही मौसी है, जो छोटे भैया के होने में मां की देख-भाल करने आई थी। उसने पटाखे और मिठाइयां ले लीं और अपने बालों में फूल लगवाने के लिए वह लक्ष्मी की ओर पीठ करके खड़ी हो गई। लक्ष्मी ने उसके बालों में फूल खोंसकर उसे प्यार किया।

"यह नर्स तो बड़ी भली मालूम होती है।" मीनाक्षी ने अपनी सास से कहा।

नटेश के घर आते ही पार्वती ने उससे कहा, "अस्पतालवाली नर्स आई थी। वह कमला को मिठाई और पटाखे दे गई और बिना किसी से मिले ही चली गई।" □

देवयानी

□□

रामनाथ अपनी पत्नी सीतालक्ष्मी के साथ कार में बैठकर चीना बाजार गये। खरीदारी खत्म करने के बाद दोनों ने पास के एक होटल में चाय पी और फिर वे कार में आ बैठे।

"चलो, समुद्र के किनारे चलें।" रामनाथ ने कहा।

"हां, चलिये, लेकिन ड्राइवर से कह दीजिये कि कार ऐसी जगह रोके, जहां भीड़-भक्कड़ न हो। मुझे भीड़ अच्छी नहीं लगती। देखिये, फेरीवाला खिलौने बेच रहा है, बच्चों के लिए दो-चार खरीद लीजिये।"

सीतालक्ष्मी की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि खिलौनेवाला उसका मतलब भांप कर कार के पास आ गया। खिलौने पसंद कर वे कार में ही बैठे-बैठे मोल-भाव कर रहे थे कि कार के दूसरे दरवाजे की ओर एक युवती भिखारिन गोदी में एक छोटा-सा बच्चा लिये आई और बच्चे को आगे कर बोली, "बाबूजी, इस नन्हे पर दया करो।"

"यह सब जापानी खिलौने हैं न ?" रामनाथ ने खिलौनेवाले से पूछा।

"जी हां, भला हमारे देश में ऐसी चीजें बन सकती हैं ?" खिलौनेवाले ने उत्तर दिया।

भिखारिन ने फिर गिड़गिड़ाना शुरू किया।

"हम खिलौने खरीद रहे हैं और यह बला आकर हमारे पीछे पड़ गई। भीख मांगने का रोग दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है।" सीतालक्ष्मी बोली।

"बाबूजी, मैं भूखी हूं। बच्चे पर दया करो, भगवान् तुम्हारा भला करेगा !"

"जाती है या बुलाऊं पुलिस को ?" सीतालक्ष्मी ने धमकाया।

"बच्चा दूध के लिए रो रहा है, मांजी ! एक इकन्नी दे दो, तुम्हारे लिए कोई बड़ी बात नहीं है।"

रामनाथ ने खरीदे हुए खिलौने कार के अंदर रख लिये और ड्राइवर से समुद्र-किनारे चलने को कहा।

ड्राइवर ने भिखारिन से एक तरफ हटने के लिए कहकर कार चला दी।

भिखारिन दरवाजा पकड़े थोड़ी दूर तक साथ-साथ दौड़ने की कोशिश करती रही और चिल्लाती रही, "बाबूजी, बाबूसाहब।"

"हट-हट, नहीं तो दब जायगी !" रामनाथ ने चिल्लाकर कहा। उस समय उन्हें भिखारिन को गौर से देखने का मौका मिला और ऐसा लगा, मानो इसे कहीं देखा है।

जब कार तेजी से चल दी तो वह बोले, "बेचारी लड़की ! यह तो हमारे गांव की दिखाई देती है।"

"कहीं से भी आई हो, हमें क्या !" जरा इस खिलौने को दिखाना, यह तो नई तरह का मालूम होता है। यह तो हवाई जहाज है। क्या चाबी लगाने पर चलेगा ?" सीतालक्ष्मी ने पूछा और वह एक-एक खिलौना उठाकर देखने लगी।

सेलम जिले के पोन्नम्मापेट नाम के कस्बे में पेरिमन्न मुदलियली में जुलाहे का एक गरीब परिवार रहता था। वैयापुरी तीस वर्ष का था और उसकी क्वारी बहन देवयानी बीस वर्ष की। उनकी मां का नाम था पलनि। वे करघे पर कपड़ा बुनकर अपनी जीविका चलाते थे और यही उनका खानदानी पेशा था। वे तीनों जने सारे दिन मेहनत करके हफ्ते में कुल मिलाकर चार रुपये कमा पाते थे।

धीरे-धीरे करघे का काम ठंडा पड़ता गया और साथ-ही-साथ मजदूरी भी कम होती गई। कुछ दिनों बाद बहुतों को इतनी भी मजदूरी मिलनी बंद हो गई। सेलम में वैयापुरी के अलावा बहुत-से और लोगों के करघे भी बंद हो गये। देवयानी को दो ब्राह्मण अफसरों के घर मकान के सामने के हिस्से को झाड़ने-बुहारने और पानी-गोबर से लीपने का काम

मिल गया। उसे और भी छोटे-छोटे काम करने पड़ते थे और इनके लिए तीन रुपया महीना मिलता था। उसकी मां एक दूसरे घर में यही झाड़ने-बुहारने का काम करके एक रुपया महीना पाती थी। वैयापुरी कपड़े के व्यापारियों के पास काम की तलाश में चक्कर काटता फिरा, लेकिन उसे कोई काम नहीं मिल सका। निराश होकर वह बिना अपनी मां से कहे-सुने बंगलूर चला गया। कुछ दूसरे जुलाहे भी वहां की बड़ी मिल में काम मिलने की आशा से उसके साथ-साथ गये।

कुछ दिनों तक मारे-मारे फिरने के बाद वैयापुरी ने लिखा कि मुझे एक मिल में नौकरी मिल गई है। वह कुछ लिखना-पढ़ना जानता था, क्योंकि जब वह छोटा था तो उसके बाप ने उसे पोनम्मापेट के म्युनिसिपल स्कूल में भरती कर दिया था। उन दिनों जुलाहों की दशा इतनी दयनीय नहीं थी।

"बहुत-से लोगों की जेब भरने के बाद मुझे एक मिल में जगह मिल गई है। रोज आठ आने मिलते हैं और एक महीने में छब्बीस दिन काम होता है। इसलिए मुझे एक महीने में तेरह रुपये मिला करेंगे। खाने-पीने का खर्च निकालकर और कुछ कर्ज चुकाने के बाद मैं दो रुपये बचाकर हर महीने तुम्हारे पास भेजा करूंगा। बाकी के लिए भगवान् मालिक है।" वैयापुरी ने अपने पत्र में लिखा, जिसे एक पड़ोसी के लड़के ने पढ़कर उसकी मां और बहन को समझाया। बूढ़ी मां और देवयानी बड़ी प्रसन्न हुईं।

दस दिन बाद दूसरा पत्र आया। उसमें लिखा था—"मां को मेरा प्रणाम! भगवान् की दया से मैं यहां पर कुशलपूर्वक हूं। उम्मीद है, तुम और देवयानी भी अच्छी तरह होगी। मिल का काम मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। जब मुझे याद आता है कि अपने घर में करघे पर काम करके मैं कैसे सुख से दिन बिताया करता था तो मुझे रोना आ जाता है। मुझे ऐसा लगता है कि मैं यहां पागल हो जाऊंगा। मेरा सिर चकरा रहा है और मुझे यहां इतना दुःख और रंज है कि क्या कहूं! मुझे ताज्जुब होता है कि मैं सेलम से क्यों चला आया। पड़ोस में रहनेवाले लड़के से लिखवाकर चिट्ठी भेजने की कोशिश करना। पता यह है—सेलम पोन्नम्मांपेट वैया-

पुरी कुली लाइन, मल्लेश्वर।"

जिन दो घरों में देवयानी झाड़ने और पानी छिड़कने का काम करती थी, उसमें-से एक घर एक सरकारी पेंशनर का था। उसकी पत्नी बड़ी नेक और दयालु थी। देवयानी से काम तो वह कसकर लेती थी, लेकिन और बातों में उसके प्रति दया दिखलाती थी। उसने देवयानी को एक पुरानी साड़ी दे दी थी और घर में खाने के बाद जो दाल-चावल बचता था वह भी उसे मिल जाता था। कुछ दिन इसी तरह बीत गये, लेकिन शायद भगवान् से उसका इतना सुख भी नहीं देखा गया। घर का रसोइया, जो उसे बचा हुआ खाना दिया करता था, उससे प्रेम जताने लगा। एक दिन उससे बहुत बुरी तरह छेड़खानी की।

देवयानी की आंखों में खून उतर आया, लेकिन शर्म के मारे उसने किसीसे कुछ कहा नहीं। "किसीसे कहना मत, मैं हर महीने तुझे दो रुपये दिया करूंगा।" बदमाश ने कहा।

अपना रंज रोककर देवयानी घर गई और मां से बोली, "अम्मा, मैं उस नीम के पेड़वाले मकान में अब काम नहीं करूंगी।"

जब मां ने इसका कारण पूछा तो शर्म से उसका चेहरा लाल हो गया। उसने सारी बातें बता दीं, जिसपर उसकी बूढ़ी मां यह कहती हुई उठी, "मैं घर की मालकिन से अभी जाकर सब बातें कहती हूं।"

"जाने दो अम्मा! क्या फायदा इससे? मुझे वहां अब काम तो करना नहीं है।" देवयानी ने उससे कहा।

मां-बेटी ने दूसरी जगह काम ढूंढ़ना शुरू किया, लेकिन वे जहां भी जातीं, वहीं मालूम होता कि कोई पहले से ही लगा हुआ है। दो महीने तक इसी तरह टक्करें खाने के बाद उन्हें काम मिला।

छः महीने बीत गये। जिस मिल में वैयापुरी काम करता था, उसमें मजदूरों ने हड़ताल कर दी। वहां के अंग्रेज मैनेजर ने एक मिस्त्री को पीट दिया था और बाद में उसे और कुछ दूसरे मजदूरों को नौकरी से अलग कर दिया था। मजदूरों ने एक सभा की और महीने पर तनखवाह

लेने के बाद काम बंद कर दिया। वैयापुरी को भी हड़ताल में साथ देना पड़ा।

हड़ताल एक महीने तक रही। मजदूरों ने सभाएं कीं और शुरू-शुरू में तो बड़ा उत्साह दिखाई दिया, लेकिन जब गांठ का रुपया खर्च हो लिया तो जोश ठंडा पड़ गया। अंत में समझौता हुआ और मजदूर फिर काम करने लगे। एक हफ्ते बाद दरवाजे पर एक नोटिस चिपका हुआ मिला। उसमें पच्चीस आदमियों के नाम थे, जो नौकरी से हटा दिये गए थे और जिन्हें मिल के इलाके में कदम न रखने की आज्ञा दी गई थी। उसमें वैयापुरी भी एक था।

"मैं बिल्कुल बेकसूर हूं। मैं तो नया आदमी हूं। मेरा इन बातों से क्या वास्ता?" वैयापुरी ने मिस्त्री से शिकायत करते हुए कहा।

"मैनेजर का यही हुक्म है। यह काम उस बदमाश टाइमकीपर रंगस्वामी नायक का है। उसीने दूसरों के साथ तुम्हारा नाम भी भेजा था। मैं इस मामले में कुछ नहीं कर सकता।" मिस्त्री ने जवाब दिया।

वैयापुरी ने रंगस्वामी नायक के पास जाकर हाथ जोड़े, लेकिन उसने कहा, "मैं कुछ नहीं जानता। यह खजाने वाले क्लर्क का काम है।" मतलब यह कि किसीने वैयापुरी की सहायता नहीं की और अंत में मैनेजर ने कहा, "तुम लिखना-पढ़ना जानते हो, तुमने ही दूसरों को भड़काया होगा; मैं तुम्हें वापस नहीं ले सकता।"

बहुत दिनों तक ठोकरें खाने और पास की कौड़ी-कौड़ी खर्च कर चुकने के बाद वैयापुरी बड़ी कठिनाई से मद्रास पहुंचा। नौकरी से अलग किये गए पच्चीस आदमियों में-से भी दस आदमी उसके साथ-साथ नौकरी की तलाश में मद्रास गए। उनके पास जितना भी रुपया था, उन्होंने एक जगह इकट्ठा कर लिया और उसीसे गुजारा करते हुए वे नौकरी के लिए एक मिल से दूसरी मिल में गिड़गिड़ाते फिरे। कुछ दिनों बाद वैयापुरी को एक मिल में काम मिल गया।

ड्योढ़ीवान और मिल के दूसरे छोटे-छोटे अफसरों की मुट्ठी गरम करने के लिए वैयापुरी को पांच रुपयों की जरूरत थी। इसके लिए और खाने-पीने में जो कर्ज हो गया था, उसे चुकाने के लिए उसने अपनी सोने

की मुरकियां गिरवी रखकर रुपये उधार लिये। अपने दुःख को भुलाये रखने के लिए उसने थोड़ा नशा भी करना शुरू कर दिया, गोकि सेलम में रहते हुए उसने कभी शराब छुई भी नहीं थी। कुछ मित्रों के यह समझाने पर कि जुए से काफी रुपया कमाया जा सकता है, वह जुआ भी खेलने लगा। खाने और कोठरी का किराया देने के बाद उसके पास जो कुछ बचता, उसे यह घर न भेजकर इन चीजों में खर्च करने लगा। स्वभावतः पठान से लिया हुआ कर्ज बढ़ता गया और इन परेशानियों को भूलने के लिए वह ज्यादा नशा करने लगा।

पहले तो उसने घर रुपये न भेज सकने के लिए बहाने लिख-लिखकर भेजे, बाद में उसने लिखा कि अब मैं घर रुपये नहीं भेज सकता। अगर देवयानी चाहे तो मद्रास जाकर किसी मिल में नौकरी कर ले। इस पत्र को सुनकर देवयानी और पलनि का दिल टूट गया।

बहुत दिनों तक सब्र के साथ दुःख और परेशानी उठाते-उठाते एक दिन देवयानी बोली, "मां, मैं मद्रास क्यों न चली जाऊं? मैं काम करूंगी और वैयापुरी की तरह रुपये कमाकर कुछ तुम्हें भेजने की कोशिश करूंगी। मैंने सुना है कि मद्रास की मिलों में बहुत-सी औरतें काम करती हैं।"

पहले तो मां इस बात के लिए राजी नहीं हुई और कुछ दिनों तक कहती रही कि ऐसी बात कैसे हो सकती है, जवान और अकेली औरतें किस तरह ऐसी जगह काम करने के लिए जा सकती हैं, लेकिन आखिरकार वह मान गई। देवयानी ने एक पड़ोसी के यहां अपने सोने के बुंदे गिरवी रख दिये और उससे बारह रुपये उधार लेकर वह मद्रास के लिए चल दी।

वैयापुरी ने देवयानी को मद्रास की एक मिल में सूत कातने के विभाग में नौकरी दिलवा दी। उसमें डेढ़सौ औरतें काम करती थीं, जिनमें से बहुत-सी अवस्था में देवयानी से भी छोटी थीं। देवयानी और दस दूसरी औरतों को एक मेट के नीचे काम करना पड़ता था। शुरू-शुरू में उसने देवयानी के साथ बड़ी दयालुता दिखाई; लेकिन कुछ ही दिनों बाद वह उसे डांटने-

डपटने लगा और फिर उससे बड़ी आजादी से वातचीत करने लगा, खासतौर से जब वह अकेली मिल जाती।

देवयानी ने अपने साथ काम करनेवाली एक स्त्री से पूछा, "इसका क्या मतलब है, बहन ! यह मुझसे इस तरह की वातें क्यों करता है ?"

"तुम इतना भी नहीं समझीं ? गांव की हो न ! अगर तुम उसे खुश नहीं करोगी तो तुम्हारी आधी मजदूरी जुरमानों में कट जायगी और अगर वह खुश रहेगा तो तुम्हें वहुत तरह के आराम देगा।" उस औरत ने हँसते हुए कहा।

कुछ दिनों तक देवयानी यह सब सहती रही। धीरे-धीरे उसका परमेश्वर पर से विश्वास उठने लगा और उसने मेट का विरोध करना छोड़ दिया। उसने अपना मस्तिष्क परिस्थिति के अनुकूल बना लिया और वह उससे घुलमिलकर वातें करने लगी। जल्दी ही उसे इन वातों में आनंद आने लगा और उसकी मजदूरी वढ़ गई।

कुछ महीने वीतने पर देवयानो को पता चला कि मैं मां बनने वाली हूं। वह बड़ी डरी और जितने भी देवी-देवताओं के नाम जानती थी उन सबकी प्रार्थना करने लगी। "हाय, अब मैं किससे कहूं ?" उसने मन-ही-मन सोचा। उसका मन बड़ा उद्विग्न हुआ और वह भय के मारे थर्रा उठी, ठीक वैसे ही जैसे जंगल में शिकारियों से पीछा किये जाने पर हिरनी कांपने लगती है। उसे अपने भाई वैयापुरी से कहते हुए डर लगता था। साथ में काम करने वाली कुछ लड़कियों को इस बात की खवर थी, लेकिन वे उसका मजाक उड़ाया करती थीं, और हँसती थीं। उसने सोचा कि गांव चली जाऊं, लेकिन वह जानती थी कि वहां जाने पर अपमान होगा और मैं बिरादरी से निकाल दी जाऊंगी। अपनी मां का ध्यान आते ही उसने वहां का विचार बिल्कुल छोड़ दिया। अंत में उसने अपने को भगवान् के ऊपर छोड़ दिया और वह मिल में काम करती रही।

लेकिन जल्दी ही उसे फिर वड़ी घबराहट होने लगी, "हाय, अब मैं क्या करूंगी ? मैंने अपने कुल को कलंक लगा दिया।"

"घबरा मत, देवयानी ! ऐसा तो हम सबको होता है। इसके लिए एक दवा होती है, जिसके पीने से तेरी सारी चिंता दूर हो जायगी।" उसकी

एक सहेली ने तसल्ली देते हुए कहा।

"मैंने उसके बारे में सुना तो है, लेकिन मुझे डर लगता है कि कहीं मर न जाऊं। हे भगवान्, मैं कहां जाकर अपना पाप छिपाऊं?" देवयानी रोकर बोली।

उसकी सहेली ने कहा, "कहीं से दो रुपये ले आ। मुत्तुस्वामी आचारी गली में एक औरत रहती है, वह तू जो चाहती है, कर देगी।"

"अगर पुलिस को खबर हो गई तो वह मुझे जरूर पकड़ लेगी।"

"इसकी फ़िक्र मत कर, पुलिस वालों से उसका बड़ा मेल-जोल है। तुझे मालूम होना चाहिए कि रुपये से सबकुछ हो सकता है।"

"रुपये के लिए मैं किसके पास जाऊं? हे भगवान्, तूने तो मुझे छोड़ ही दिया। मैं इस कमबख्त शहर में आई ही क्यों?" यह कहकर देवयानी रोने लगी।

कुछ दिन बाद एक दूसरी औरत ने उसे दूसरी सलाह दी, "तुझे अपने बच्चे को मारना नहीं चाहिए। इस पाप का फल तुझे तीन जन्म तक भोगना पड़ेगा। गणेश मंदिरवाली गली में एक बुढ़िया रहती है। वह बड़ी नेक औरत है। अगर उसके पास चली जायगी तो वह सारी बातों की देखभाल कर लेगी। तेरी तरह बहुत-सी औरतें उसके घर ठहर चुकी हैं और सही-सलामत निबट आई हैं।"

देवयानी ने उसे धन्यवाद दिया और कहा, "भगवान् तुम्हें सुखी रखे, बहन।" वह गणेश मंदिरवाली गली में उस उदार बुढ़िया के पास चली गई। समय पर प्रसव हुआ और बच्चे के कोमल स्पर्श ने देवयानी की दुनिया ही बदल दी। उसे ऐसा मालूम हुआ, मानो किसी ने जादू कर दिय है। उस बच्चे में उसका सारा संसार समा गया।

वह अपने बच्चे को उठाती और छाती से लगाकर कहती, "यह फूल मुझे भगवान् ने दिया है। इसका क्या दोष, पापिन तो मैं हूं।" सब दुखों को भूलकर वह कुछ दिन तक सुख से रही।

"तुम अभी काम पर जाने लायक नहीं हो। तुम्हें अभी कुछ दिन तक यहां और ठहरना होगा।" गणेश मंदिरवाली गली की उदार स्त्री बोली।

देवयानी ने भगवान् को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया और मन में सोचा,

"जिस दुनिया में इतने अच्छे आदमी मौजूद हैं, उसे गालियां देना मेरे लिए कितना गलत था !"

एक महीने बाद देवयानी को असली बात का पता चला। वह बूढ़ी औरत उन असहाय अभागिनों से, जो धोखेबाज मर्दों के चंगुल में फंस जाती थीं, दुष्कर्म कराया करती थी। देवयानी फंस गई और मिल में फिर से काम करने नहीं गई।

"क्या तुम्हें उस लड़की देवयानी की याद है, जो सेलम में हमारे घर काम करती थी? वह भिखारिन उसी-जैसी दिखाई पड़ती थी।" रामनाथ ने कहा।

रामनाथ सेलम के उस पेंशनर के सबसे बड़े लड़के थे, जिसके घर जाकर देवयानी ने पहले-पहल काम किया था। वह मद्रास के बड़े बैंक में खजांची थे।

"आप तो सपना देख रहे हैं ! भला सेलम की लड़की यहां कैसे आ सकती है ?" सीतालक्ष्मी बोली।

"यह बड़े शर्म की बात है कि ऐसी लड़कियां भीख मांगने के लिए हाल ही में पैदा हुए बच्चों को गोद में लिये सड़कों पर फिरती हैं। हमारे देश की कैसी दशा हो गई है ?" रामनाथ ने कहा।

"आप हमेशा देश की ही बात सोचते रहते हैं। क्या अपने घरबार की ही फिक्र कर लेनी काफी नहीं है ?" उनकी पत्नी ने पूछा।

रामनाथ दूसरे दिन भी शाम तक उस भिखारिन को भूल न सके। वह दफ्तर से सीधे चीना बाजार चले गये, इस उम्मीद में कि अगर वह फिर मिल जाय तो उसकी बात पूछूं ? रामनाथ बाजार में एक कोने से दूसरे कोने तक कार लेकर गये और उस क्लिनवाले होटल के सामने रुक कर कुछ देर प्रतीक्षा करते रहे। बहुत-से भिखारी आये और इन्हें घेर कर "बाबूसाहब, बाबूजी" चिल्लाते रहे, लेकिन वह नहीं आई।

शनिवार की शाम को रामनाथ और उसकी पत्नी फिर चीना बाजार पहुंचे।

"देखिये, वह रही आपकी भिखारिन।" सीतालक्ष्मी ने कहा।

हां, वह भिखारिन थी। अपने बच्चे को लिये हुए वह किसीकी कार के पास जा रही थी और कह रही थी, "मांजी, एक इकन्नी दे दो, इस बच्चे का खयाल करो।"

उसने रामनाथ की कार और उसमें बैठे हुए आदमियों को देख लिया था; लेकिन वह उसे छोड़कर दूसरी कार के पास चली गई थी, क्योंकि वह जानती थी कि इनसे मुझे कुछ नहीं मिलेगा। भिखारी लोग अपने अनुभवों से ही निर्णय करना सीख लेते हैं। चतुराई और समझ की गुंजायश तो हर काम में होती है।

रामनाथ को इतना साहस नहीं हुआ कि वह स्वयं जाकर भिखारिन को पुकारे। कुछ देर तक वह इस प्रतीक्षा में रहे कि शायद वह बाद में हमारी कार के पास आये। लेकिन वह भीड़ में गायब हो गई और फिर दिखाई नहीं दी।

"अब चलिए।" सीतालक्ष्मी ने कहा।

आठ दिन बाद रामनाथ और सीतालक्ष्मी सिनेमा देखने गये। कहानी वही पुरानी राजा नल की थी। दरवाजे के सामने बहुत भीड़ थी। दमयंती का काम नई अभिनेत्री धनभाग्य कर रही थी।

"सारी सीटें भर गईं। एक भी जगह नहीं रही।" तख्ती पर यह लिखा हुआ देखकर रामनाथ ने कहा, "तो चलो, घर चलें, दूसरे शो में आ जायेंगे।"

सीतालक्ष्मी के उत्तर देने से पहले ही कोई कार के दरवाजे के पास आकर चिल्लाया, "माताजी, कुछ भिक्षा मिलेगी।"

रामनाथ यह देखने को मुड़े कि सेलमवाली लड़की तो नहीं है। उन्हें उसके लिए एक वैराग-सा हो गया था, लेकिन वह कोई दूसरी भिखारिन थी।

"अगर हम यहां कार रोके रखेंगे तो भिखारी हमें तंग करेंगे। राम नायर, जल्दी से घर ले चलो।" सीतालक्ष्मी ने ड्राइवर से कहा।

उसी समय एक पुलिसवाले ने आकर अपना डंडा घुमाया और भिखारिन को भगा दिया।

उस रात रामनाथ ने भिखारिन को देखा, लेकिन स्वप्न में।

"तुम देवयानी ? कहां से आई हो ?" रामनाथ ने पूछा।

औरत ने उन्हें आंख फाड़कर देखा और खुश होकर पूछा, "आप सेलमवाले बाबूजी के लड़के हैं न, जो नीम के पेड़ वाले मकान में रहते थे ?"

"नायर, उससे कहो सामनेवाली गद्दी पर बैठ जाय।" उन्होंने ड्राइवर से कहा। घर पहुंचने पर उनकी पत्नी बोली, "इस कमबख्त को यहां क्यों ले आये ?"

"हम इसे अपने यहां नौकर क्यों न रख लें ? चार रुपये महीना और खाना दे दिया करेंगे।" वह बोले।

"क्या ही अच्छा खयाल है आपका ! पतित स्त्रियों को घर में रखना भी क्या कोई बुद्धिमानी की बात है ? निकल यहां से।" सीतालक्ष्मी ने कहा और भिखारिन को बाहर निकाल दिया।

"मैं चोरी नहीं करूंगी और आप जो हुक्म देंगी वही करूंगी।" उस दुखी स्त्री ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"यह कभी नहीं हो सकता, निकल जा मेरे घर से।" सीतालक्ष्मी ने जवाब दिया।

रामनाथ ने उसे एक रुपया देने के लिए बटुआ निकालने को जेब में हाथ डालना चाहा; लेकिन न तो वह अपना हाथ हिला सके, न उनका हाथ बटुए तक पहुंच ही सका। भिखारिन का बच्चा जोर-जोर से रोने लगा।

रामनाथ की नींद टूट गई। यह सब सपना था; उसकी अपनी लड़की राधा पलंग पर बैठी-बैठी रो रही थी।

"भगवान् को धन्यवाद है ! सीतालक्ष्मी इतनी निष्ठुर नहीं हो सकती थी, यह केवल सपना था।" अपने मन में यह सोचकर रामनाथ प्रसन्न हुए।

इसके बाद बहुत दिनों तक रामनाथ देवयानी को बाजार में, रेलवे स्टेशन पर, सिनेमा में, हर जगह खोजते रहे। लेकिन वह उन्हें फिर दिखाई नहीं दी। □

चुनाव

□□

कोट्टूर जिले के इसी नाम के सबसे बड़े कस्बे में हरिजनों का एक मोहल्ला है, जो पहले कट्टांचेरी कहलाता था; लेकिन अब पिछले चार वर्ष से जेम्स-पेट कहलाने लगा है। उसी मोहल्ले में सीरंग नाम का एक हरिजन रहता था। वहां के करीब तीस अछूतों में अकेला वही ऐसा था, जो अपना पेट अच्छी तरह पाल लेता था। जेम्सपेट के निवासी अधिकतर कुली थे, जो सोनाई के पहाड़ के बगीचों में रोज की मजदूरी पर काम कर अपनी जीविका चलाते थे। सीरंग कुलीगिरी नहीं करता था। वह कोट्टूर और पास के दूसरे बाजारों से चीजें खरीद कर लाता था और कॉफी के बगीचे के यूरोपियन मालिकों के यहां थोड़े-से मुनाफे पर बेच देता था। इस तरह वह अच्छी-खासी रकम पैदा कर लेता था। पहाड़ के सभी स्त्री-पुरुष उससे दयालुतापूर्वक व्यवहार करते थे और उस पर विश्वास करते थे।

ठेकेदार सीरंग की ईमानदारी और अच्छी आदतों की खबर कोट्टूर के कलक्टर को भी मिल चुकी थी। जब म्युनिसिपल बोर्ड में हरिजन मेंबर की जगह खाली हुई तो पुलिस सुपरिंटेंडेंट, जिला के मेडिकल अफसर और लंदन मिशन के पादरी ने अंग्रेजी क्लब के खानसामा स्वामिप्रिय को उस जगह पर नामजद करने के लिए कलक्टर पर जोर डाला; लेकिन कलक्टर की पत्नी ने इस प्रस्ताव का विरोध किया और कहा कि पहाड़ पर रहनेवाली सब अंग्रेज औरतें सीरंग ठेकेदार के पक्ष में हैं, इसलिए इस जगह पर उसीको नियुक्त करना चाहिए। स्वभावतः वह अपने पति

को यह समझाने में सफल हो सकी कि जो कुछ मैं कह रही हूं, वही ठीक है।

"आप लोग नहीं समझते कि अगर हम क्लब के चपरासी को नामजद करेंगे तो शहर के देशभक्त इसके विरुद्ध आंदोलन और उपद्रव करेंगे। हमें होशियारी से काम करना चाहिए।" कलक्टर ने दूसरे अफसरों को समझाते हुए कहा और इस प्रकार की आपत्तियों का समाधान करते हुए सीरंग का नाम पेश कर उसे नामज़द करा दिया।

सीरंग की कामई उसी समय से कम होने लगी। अब वह बड़ा आदमी बन गया था। कलक्टर और बड़े-बड़े अफ़सर उससे हाथ मिलाते और बातचीत करते थे। अब उसने अपने कारबार की ठीक तरह से देखभाल करनी छोड़ दी थी। चीजें खरीदने के लिए खुद न जाकर वह अब अपने भतीजे वरद को भेजता था। पहाड़ी पर वह दिन में केवल एक बार जाता था और अपने बदले ज्यादातर भतीजे को ही भेजता था। उसे वह अपने मुनाफे में से हिस्सा देता था।

जैसे-जैसे सीरंग का ध्यान अपने व्यापार की ओर से कम होता गया वैसे-वैसे मुनाफा भी कम होता गया। उसे अब अपने परिवार के खर्च के लिए रुपया नहीं बचता था, इसलिए वह बागवानों की पत्नियों से पेशगी मिला हुआ रुपया खर्च करने लगा। यह सोचकर कि यह हमारा पुराना और ईमानदार ग्राहक है और अब म्युनिसिपल कौंसिलर के पद पर है, दुकानदार उसे उधार देते थे। लेकिन अब सीरंग को औरतों को हिसाब देते समय कुछ झूठ बोलना पड़ता था। व्यापार में जब कोई बेईमानी करने लगता है, चाहे वह कम हो या ज्यादा, तो उससे जल्दी ही उलझनें पैदा होने लगती हैं और अंत में व्यापारी सदा के लिए नष्ट हो जाता है। यही बात सीरंग के साथ हुई। उसने पहले जो मान पाया था उसे अब वह खो बैठा। पहले लोग कुछ तो हँसी में और कुछ गंभीरता के साथ कहा करते थे कि सीरंग सबसे ज्यादा ईमानदार कौंसिलर है, लेकिन अब उनका यह कहना भी बंद हो गया।

म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन गोपाल चेट्टियार की एकाएक मृत्यु हो गई और उनकी जगह दूसरे आदमी के चुनाव के लिए तैयारियां होने लगीं। एक ओर तो सूत के बड़े व्यापारी धनपाल चेट्टियार खड़े हुए और दूसरी ओर वकील रामस्वामी मुदलियार उनके विरोध में उठे। एक महीने तक बाजार में और वकीलों के बीच बस इसी चुनाव की चर्चा रही।

रायों के लिए दौड़धूप शुरू हुई। चुनाव की तारीख निश्चित होने से चार दिन पहले सुनाई पड़ा कि रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा है। कुछने कहा कि चेट्टियार ने हर मेंबर के वोट के लिए एक-एक दो-दो हजार रुपये लगाये हैं। यह बात कुछ अंशों में ठीक थी और कुछ अंशों में गलत भी। रामस्वामी मुदलियार ने बिल्कुल साफ़ तौर पर कह दिया कि मैं इस तरह की चालें नहीं चलूंगा। इससे उनके मित्रों का उत्साह ठंडा पड़ गया। उनकी सलाह न मानकर मुदलियार अपने इरादे पर दृढ़तापूर्वक जमे रहे।

चुनाव सोमवार की सुबह आठ बजे होनेवाला था। एक दिन पहले इतवार की रात को आठ बजे मुदलियार के गाढ़े मित्र उनके घर पर जमा हुए।

"ठीक है, तुम्हारा तो कुछ नहीं बिगड़ेगा, लेकिन हम लोगों की नाक कट जायगी।" सूंघनी के व्यापारी रंग पिल्लै ने कहा।

"इस हार के बाद हम कोट्टूर में नहीं रह सकते। हमें कहीं और चला जाना पड़ेगा।" सीतारामैयर दुकानदार बोले।

मुदलियार ने कोई जवाब नहीं दिया।

सीतारामैयर ने फिर कहा, "तो इसका मतलब यह है कि हर आदमी पब्लिक को बेईमान बनाता और म्युनिसिपैलिटी को बरबाद करता रहे और हम खड़े-खड़े तमाशा देखते रहें!"

"आजकल की बेईमानी को हम कहां तक रोक सकते हैं? पहले के चेयरमैन बड़े इज्जतवाले होते थे। आजकल तो ईमानदार आदमियों को कहीं कोई मौका ही नहीं है।" मुदलियार ने कहा।

"मुदलियार साहिब! जहर को जहर ही मारता है। आपको इस मामले में ज्यादा दिलचस्पी लेनी चाहिए। इस तरह की उदासीनता से

काम नहीं चलेगा।" वैद्य राघवाचारी बोले।

दो मिनट बाद घड़ी ने नौ बजाये। "देखिये, घड़ी भी हमें अच्छा शकुन बता रही है। अब हमें वक्त बरबाद नहीं करना चाहिए।" यह कहते हुए सीतारामैयर खड़े हो गये और मुदलियार के कंधे पर हाथ रखकर उन्हें बड़ी मोहब्बत के साथ उनके दफ्तर में ले गये।

एक घंटे तक दोनों ने एकांत में बातचीत की। तब सीतारामैयर मुस्कराते हुए बाहर आये और सभा को संबोधित करते हुए बोले, "सबकुछ ठीक है। काम पूरा हो गया। अब आप लोग जो कुछ जरूरी समझें, करें। सबकुछ एक रात में ही करना है।" यह समाचार सुनकर सब खुशी से खिल उठे।

सारी रात मोटरें दौड़ती रहीं। दो बजे मुदलियार के घर खबर पहुंची कि पैंतीस मेंबरों में से सत्तरह उन्हें अपना मत देने के लिए पक्के हो गये हैं। इनमें से दस ने तो चेट्टियार के भेजे हुए रुपये लौटा दिये हैं और सात ने कहा है कि हम किसी और से भी रुपया नहीं लेंगे; लेकिन मुदलियार को अपना मत अवश्य देंगे। बस एक मत और पक्का करना रह गया था। बाकी अठारह कौंसिलरों में से एक किसी काम से नागपटन गया हुआ था और वह दूसरे दिन तक वापस नहीं लौट सकता था। सोलह मत धनपाल चेट्टियार के पक्के थे, उनमें से एक भी नहीं तोड़ा जा सकता था। केवल सीरंग का मत बचा था और वह अनिश्चित था।

चारों ओर ढूंढ़ने पर भी अभी तक सीरंग का पता नहीं लगा था, मालूम हुआ कि वह पहाड़ी पर गया है।

"उसके छोटे भाई मास्टर मुनिस्वामी से भी पूछा ?" सूंघनी के व्यापारी रंगपिल्ले ने कहा।

"हां, हम उसके पास गये थे। वह कभी कुछ कहता है, कभी कुछ। पहले उसने कहा कि शायद सीरंग पहाड़ी पर गया है, फिर बोला कि घर में ही कहीं छिपा है। परेशानी की इन बातों में भला गरीब आदमी अपने को क्यों फंसाये ? उन्हें तो चतुराई से काम करना होता है। अगर वे एक के भले बनेंगे तो दूसरा उनसे बिगड़ जायगा।"

"ऐसा मालूम होता है कि एड़ी-चोटी का पसीना एक करने पर भी नतीजा कुछ नहीं निकलेगा।" सीतारामैयर बोले।

"निराश होने से क्या फायदा ?" यह कहते हुए रंगपिल्लै गुस्से में उठकर खड़े हो गये।

"तो खुद ही क्यों नहीं कोशिश करके देखते ?" सीतारामैयर ने ताना मारते हुए कहा।

"हम गरीबों का कौन विश्वास करेगा ? हम अमीर थोड़े ही हैं।" रंगपिल्लै ने उत्तर दिया।

"मुदलियार ! सब कुछ रंगपिल्लै को ही करने दो; अब मैं कुछ नहीं करूंगा। मेरा अब इस मामले से कोई वास्ता नहीं।" सीतारामैयर ने कहा।

यह झगड़ने का वक्त नहीं है।" वीरराघव चेट्टियार ने कहा और सीतारामैयर को, जो उठकर खड़े हो गये थे, पकड़कर फिर उनकी जगह पर बैठा दिया। फिर वह मुदलियार के पास जाकर बोले, "हमें तो इस काम में हाथ ही नहीं डालना चाहिए था, लेकिन जब हमने एक बार काम उठा लिया है तो उसे कामयाबी के साथ पूरा करना चाहिए। हम जो कुछ चेष्टा कर पा रहे हैं उसे किस मुंह से बोलकर खो दें ? सीरंग का मामला रंगपिल्लै के सुपुर्द कर दो, आगे भगवान् मालिक है। हम जरूर जीतेंगे।"

मुदलियार भी उस समय जोश में थे। वह अंदर गये। बक्स के खुलने और बंद होने की आवाज आई। मुदलियार हाथ में एक थैली लिये हुए बाहर निकले और रंग पिल्लै को साथ लेकर दूसरे कमरे में चले गये।

सूंघनी के व्यापारी रंगपिल्लै जेम्सपेट पहुंचकर मुनिस्वामी से मिले। उन्होंने बिना कुछ कहे-सुने कागज के पांच बंडलों में लपेटे हुए चांदी के सौ रुपये उसके हाथ पर रख दिये। मुनिस्वामी ने अपने जीवन में, कभी सपने तक में भी, इतने सारे चांदी के रुपये एक साथ नहीं छुए थे। वह रंग-पिल्लै की ओर टकटकी बांधकर देखता रहा। उसकी आंखों में पागल की-सी झलक थी।

रंगपिल्लै ने कहा, "बहुत-से आदमियों ने तुम्हें भला-बुरा कहा होगा। इन दिनों गरीबों की मदद कौन करता है और कौन उनपर विश्वास करता

है? यह तो गरीब ही जानते हैं कि उन्हें कैसी-कैसी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। भाई ! ये रुपये तुम्हारे हो चुके, हम जीतें, चाहे हारें। मुझे सच-सच बता दो कि सीरंग कहां है ?"

"मैं आपसे झूठ नहीं बोलूंगा। सीरंग को धनपाल चेट्टियार ने अपने अस्तबल में ताले में बंद कर रखा है और बाहर पहरा लगा रखा है। आपको शायद पता नहीं कि उसने चेट्टियार से डेढ़ सौ रुपये उधार ले रखे हैं। वे कल उसे अपने साथ म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर ले जायंगे।" अध्यापक मुनिस्वामी ने बताया।

"अच्छा, मुनिस्वामी सुनो; इस मामले में जैसा मैं कहूं, वैसा करो। रुपये का कोई खयाल नहीं।" रंगपिल्लै ने कहा।

थोड़ी देर तक वे कानाफूसी करते रहे। तब यह कहते हुए कि 'जरा ठहरिये,' मुनिस्वामी घर के भीतर चला गया।

कुछ समय तक सीरंग की मां से बातचीत करने के बाद वह बाहर आया और चेरि मारिअम्मा मंदिर के सामनेवाली पत्थर की बेंच पर रंगपिल्लै को बैठाकर और स्वयं उनकी गाड़ी पर चढ़कर धनपाल चेट्टियार के मकान की ओर चल दिया।

धनपाल चेट्टियार अपने घर की बरसाती में अपने मित्रों के साथ बेंच पर बैठे हुए थे। लालटेन की रोशनी में वह पेंसिल से कुछ लिख रहे थे। मुनिस्वामी गाड़ी से उतरकर चेट्टियार के पैरों में गिर पड़ा और बोला, "मालिक, इस समय आकर मैंने आपके काम में जो रुकावट डाली है उसके लिए माफ कीजिए। सीरंग की मां मर रही है। कह नहीं सकता कि वापस लौटने पर जिंदा मिलेगी या नहीं। आप सीरंग को भेज दीजिये, वह अपनी मां से मिल आये।"

"एकाएक उस बुढ़िया को क्या हो गया है ? यह सब गड़बड़घोटाला है। मालूम होता है, मुदलियार ने तुम्हें यहां भेजा है।" धनपाल चेट्टियार ने कहा।

"भगवान जानता है, मालिक ! झूठ बोलकर हम बच थोड़े ही सकते हैं। बुढ़िया को सचमुच दस्त आ रहे हैं, वह बचेगी नहीं। उसे कल बीस दस्त आ चुके हैं और वह बेहोश पड़ी है। मैं हाथ जोड़ता हूं, किसी तरह

मेरे भाई को भेज दीजिये, नहीं तो मेरी मां की आत्मा तड़पती रह जायगी।" यह कहकर वह बड़े करुणाजनक ढंग से रोने लगा।

"अच्छी बात है। श्रीनिवासैयर, तुम सीरंग के साथ जाओ और देख-कर आओ कि बात क्या है।" चेट्टियार ने अपने क्लर्क से कहा।

"इसमें कोई चाल है। चेट्टियार तो सब पर विश्वास कर लेते हैं।" किसीने कहा।

क्लर्क श्रीनिवासैयर अंदर गया और सीरंग को अस्तबल से निकालकर पीछे के रास्ते से गाड़ी के पास ले गया। मुनिस्वामी भी वहीं पहुंच गया।

"तुम क्या सोच रहे हो? गाड़ी में बैठ जाओ।" धनपाल चेट्टियार ने कहा।

छुआछूत का विचार उस समय मिट गया था। चुनाव के कामों में इन बातों पर कैसे ध्यान दिया जा सकता! दोनों एक ही गाड़ी में सवार हो गये।

जेम्सपेट पहुंचकर जब गाड़ी सीरंग के घर के सामने ठहरी तो अंदर से बड़े जोर से रोने की आवाज आई।

"बात तो सच मालूम होती है।" श्रीनिवासैयर ने मन में सोचा और सीरंग से कहा कि घर में जाकर देखो, क्या ममला है।

सीरंग और मुनिस्वामी अंदर गये। थोड़ी देर बाद मुनिस्वामी बाहर निकला और ब्राह्मण के कान में यह कहकर कि प्राण निकल गये, फिर अंदर चला गया।

"हाय, तुम तो चल बसीं! हाय, तुम हमें छोड़ गईं! हमारा तो घर बरबाद हो गया!" अंदर से विलाप करने की आवाज आई।

श्रीनिवासैयर ने एक लड़के से, जो पास खड़ा उसे देख रहा था, पूछा, "इस घर में क्या हो गया है?"

"आपको नहीं मालूम? बुढ़िया को हैजा हो गया था। वह मर गई।" लड़के ने जवाब दिया।

श्रीनिवासैयर के होश उड़ गये। एक तो अछूतों की बस्ती और दूसरे हैजा! उसने तय किया कि यहां रुकने से कोई लाभ नहीं। इतने में मुनि-स्वामी भी बाहर आ गया और बोला, "बुढ़िया बेहोश है, साहब! न तो

वह बोलती है, न उसे सांस आती है। शायद वह मर चुकी है। सीरंग की जिम्मेदारी मैं लेता हूं, आप जाइये।" ऐयर जल्दी-जल्दी घर की ओर चल पड़ा।

घर के अंदर बुढ़िया ने इशारा करके अपने बेटे को अपने पास बुलाया। सीरंग अपना कान अपनी मां के मुंह के पास ले गया।

"मेरे बच्चे, वे एक हजार रुपया देने को कहते हैं। इसे इंकार नहीं करना चाहिए। पागलपन मत कर और बुढ़िया का कहना मान।"

"बात क्या है ? क्या तुमने इसीलिए मुझे बुलाया है ?" सीरंग बोला।

"ओह !" मुनिस्वामी ने जोर से कहा और दूसरों ने भी उसका साथ दिया। वे सब-के-सब जोर-जोर से रोने लगे।

"मेरे बच्चे !" बूढ़ी औरत ने फिर कहा, "मुझे हैजा-वैजा कुछ नहीं हुआ है, लेकिन मुझे अजीब-सा लग रहा है। सूंघनी बेचनेवाला जो हजार रुपये लाया है, वह ले लो और इस अभागे कारबार को बंद कर दो। अपना कर्ज उतारकर भले आदमियों की-सी जिंदगी बिताओ। मुझे अब ज्यादा दिन जीना नहीं है।"

सीरंग भय, क्रोध और आश्चर्य से परेशान चुपचाप खड़ा रहा। घरवाले मुनिस्वामी के संकेत के अनुसार एकबार फिर "हाय, हाय" कर रो उठे।

सीरंग आकर रंगपिल्लै के पास खड़ा हो गया। रंगपिल्लै ने कहा, "सीरंग, गाड़ी में बैठो। मुदलियार के घर पहुंचकर मैं तुम्हें सब बातें समझा दूंगा। वे सब अंदर बैठ गये और रंगपिल्लै ने कहना शुरू किया, "सीरंग, तुम बड़े भाग्यवान हो। जब सारे आदमी इस तरह रुपया कमा रहे हैं, तो तुम ही क्यों चूको ? तुमने ही क्या कसूर किया है ? इस मौके को हाथ से न जाने दो। बताओ, तुम क्या चाहते हो ? उसे पूरा कराने की जिम्मेदारी मैं लेता हूं।" जबतक गाड़ी मुदलियार के घर पहुंची तबतक वह सीरंग से इसी तरह की बातें करते रहे।

रंगपिल्लै ने जाकर मुदलियार से थोड़ी देर एकान्त में बातचीत की। तब वह हाथ में एक कपड़े की पोटली लिये हुए सीरंग के पास आये।

सीरंग बरामदे के बाहर बैठा था। पोटली उसके सामने रखते हुए रंगपिल्लै ने कहा, "देखो, इसमें इतना रुपया है, जितना तुम जिंदगी भर काम करके भी नहीं कमा सकते। अपना सारा कर्ज चुका दो और कोई कारबार शुरू करो। मुदलियार तुम्हें इससे भी ज्यादा रुपया देंगे। वह इस बात का ध्यान रखेंगे कि तुम्हें किसी बात की कमी न रहे।"

सीरंग गूंगा बना बैठा रहा।

वीरराघव चेट्टियार ने पोटली उठाकर सीरंग की गोद में डाल दी और कहा, "उठो, शपथ लो। सब बात पक्की हो गई, अब किस सोच-विचार में पड़े हो ?"

सीरंग ने पोटली अपनी गोद में से उठाकर एक तरफ जमीन पर रख दी और एक मिनट तक वह सोचने का बहाना करता रहा। सब लोग चुपचाप इस इंतजार में रहे कि कुछ कहेगा।

लेकिन लोगों के देखते-ही-देखते वह कूदकर गली में भाग गया। कुछ आदमी उसके पीछे दौड़े, लेकिन वह इतना तेज भागा कि जल्दी ही सबकी आंखों से ओझल हो गया। "चला गया," यह कहते हुए सब लोग वापस आ गये।

मुदलियार रुपयों की थैली उठा अंदर चले गये। उसे ताले में बंदकर वह लौटे और बोले, "देखा, बदमाश ने हमें कैसा धोखा दिया !"

"अपनी नीच जाति का सबूत दिया है।" सबने मिलकर कहा।

दूसरे दिन चुनाव के समय सीरंग मौजूद नहीं था।

"उसकी मां मर गई।" एक ने कहा।

"नहीं-नहीं, वह सब चाल थी।" दूसरे बोले।

जो कौंसिलर नागपटन गया था वह लौट आया था और मत देने को तैयार था।

"धनमाल चेट्टियार को छब्बीस मत मिलेंगे।" किसीने कहा।

"नहीं जी, दोनों को सत्तरह-सत्तरह मिलेंगे और एक निर्णायक मत होगा।" दूसरे ने कहा।

"सब रुपये का खेल है।" तीसरा बोला।

"वे रुपया भी लेंगे और बदमाशों को धोखा भी देंगे।" एक और बोला।

अंत में धनपाल चेट्टियार को तेईस वोट मिले और मुदलियार को दस। एक कोरा कागज था। इस परिणाम को सुनकर बाहर भीड़ ने धनपाल चेट्टियार की जय बोली।

"बेईमानी," दूसरी तरफ के आदमियों ने चिल्लाकर कहा।

"ईमानदार तो सिर्फ सीरंग है।" मुदलियार ने कहा। □

देव-दर्शन

□□

सुंदर चेट्टियार एक बजाज था। थोड़ी-सी पूंजी से कारबार शुरू कर उसने अपनी ईमानदारी और चतुराई से जल्दी ही बहुत-सा धन कमा लिया था। उसकी पत्नी मीनाक्षी बड़ी धर्मात्मा थी। वह जीवन के पुराने नियमों का पालन करती थी और हर महीने एकादशी के दिन कड़ा व्रत रखती थी। दोपहर को वह प्रतिदिन घर से बाहर जाकर पहले कौओं और चिड़ियों के लिए चावल फैला आती और उसके बाद स्वयं भोजन करने बैठती। चेट्टियार उसका बड़ा आदर करता था। उसे विश्वास था कि मेरे व्यापार में उन्नति मेरी पत्नी की धर्मपरायणता के कारण ही हुई है।

"जय सीताराम!" साधु के वेश में एक अधेड़ उम्र के पुरुष ने चेट्टियार के घर में प्रवेश करते हुए कहा। उसके हाथ में कमंडलु था और मुख पर तेज।

यह दीपावली से एक दिन पहले की बात है। चेट्टियार की पत्नी ने अंजलि में चावल भरकर साधु का स्वागत किया, किंतु उस आदरणीय व्यक्ति ने कहा, "मुझे चावल नहीं चाहिए। भोजन की इच्छा है।"

"भोजन अभी तैयार हुआ जाता है। कृपाकर थोड़ी देर ठहर जाइये।" मीनाक्षी ने कहा और साधु को बैठने के लिए एक पटिया बिछा दी।

भोजन कर चुकने के बाद साधु बोला, "देवि, तुम्हें कभी किसी बात की कमी नहीं रहेगी। तुम धर्मात्मा और पतिव्रता स्त्री हो। मैं तुम्हें एक पवित्र मंत्र सिखाता हूं। अगर तुम सिर पर तेल मलकर स्नान करने के बाद इस मंत्र का जाप करो तो तुम अपने पुरखों, स्वर्ग के देवताओं और

ऋषियों के दर्शन कर सकोगी।"

सुंदर चेट्टियार की धर्मपरायणा स्त्री यह सुनकर बहुत आनंदित हुई और उसने मंत्र सीख लिया। अगले दिन वह बहुत तड़के उठी और तेल मलकर नहाई। उसके बाद उसने साधु के कहने के अनुसार मंत्र का १००८ बार जप किया। जप के समाप्त होते ही उसे जयजयकार और शंखों की ध्वनि सुनाई दी। पूजा के स्थान के सामने एक बहुत बड़ी भीड़ खड़ी थी, जहां चमकते हुए सिंहासन वृत्ताकार में सजे हुए थे और उनपर देदीप्यमान महापुरुष विराजमान थे।

सुंदर चेट्टियार की पत्नी ने देखा कि उसमें उसके पति के परपितामह के अतिरिक्त और भी कई व्यक्ति थे। एक के हाथ में बांसुरी थी, वह कृष्ण भगवान् मालूम होते थे। उनके बराबर में ही हाथ में बड़ा-सा धनुष लिये जो खड़े थे, वह राम जैसे दिखाई देते थे। उसके बाद वृद्ध ऋषि वसिष्ठ खड़े थे। अपना हल लिये बलराम भी वहां विद्यमान थे और अपना फरसा संभाले क्रोधी परशुराम भी। दूसरी ओर अर्जुन, भीम और धर्मपुत्र युधिष्ठिर बैठे थे। मीनाक्षी ने जिधर दृष्टि फेरी उधर ही उसे भारत के ऋषियों और महापुरुषों के दर्शन हुए। ऐसा मालूम होता था कि वे अपना रूप बदल रहे हैं। कभी एक रूप में दिखाई देते थे, कभी दूसरे में। भीड़ इतनी थी कि तिल रखने की भी जगह नहीं थी। इस दृश्य को देखकर मीनाक्षी आनंद से गद्गद् हो गई और "नारायण" कहकर मूर्च्छित हो गई।

पत्नी की चीख सुनकर चेट्टियार जल्दी-जल्दी सीढ़ियों से उतरता हुआ नीचे आया। वहां उसने जो कुछ देखा, वह उसकी समझ में नहीं आया। "ये अजीब तरह की पोशाकें पहनें यहां कौन लोग बैठे हैं? किसने यह अभिनय रचा है?" चारों ओर देखकर उसने अपने मन में सोचा। बजाज होने के कारण उसका ध्यान सबसे पहले उनके कपड़ों की ओर गया।

"यह तो गांधीजी के अनुयायियों का प्रदर्शन मालूम होता है।" उसने फिर मन में सोचा। सब-के-सब खद्दर पहने हुए थे। किसीने बहुत मोटा खद्दर पहन रखा था, किसीने बहुत महीन और किसीने बीच के सूत का। लेकिन थे सब कपड़े खद्दर के ही।

"श्रीमानो ! आप यहां क्यों पधारे हैं ? पुलिस आपत्ति करेगी।" चेट्टियार ने कहा।

सब-के-सब खिलखिलाकर हँस पड़े।

"आप हँस सकते हैं। हो सकता है कि आप जेल जाने को तैयार हों, लेकिन मैं तैयार नहीं हूं।" चेट्टियार बोला, "आप लोग कृपा कर कहीं दूसरे घर में चले जायं। अगला ही मकान एक वकील का है, आप वहां जाकर प्रदर्शन कर सकते हैं।"

एक बूढ़े महाशय ने चेट्टियार के पास आकर कहा, "बेटा, क्या तूने मुझे पहचाना नहीं ? सुंदर, मैं तेरे बाप का बाप हूं, जिसने तेरे बाप को जन्म दिया था। तू डरता क्यों है ?" यह कहकर उन्होंने चेट्टियार को छाती से चिपटाकर स्नेह-पूर्वक प्यार किया।

"वृद्ध महाशय ! आपका अभिनय सचमुच बहुत सुन्दर है। मैं आपके चरण छूता हूं। लेकिन कृपा कर मेरे घर से चले जाइये, मैं अपने घर में यह खद्दर की सभा नहीं चाहता। आज त्योहार है, इसलिए मैं उचित नहीं समझता कि ऐसे दिन पुलिस आकर हमें परेशान करे।" चेट्टियार ने कहा।

"खद्दर से तुम्हारा क्या मतलब है, बेटे ? हम तो इसके सिवा और कोई दूसरा कपड़ा नहीं जानते। मैं जब इस पृथ्वी पर रहता था, तब भी सिर्फ इस तरह के कपड़े पहनता था। मैं ही नहीं। हम सब इसी किस्म के कपड़े पहनते थे। हम करते भी क्या ? इसके अलावा कोई दूसरा कपड़ा ही नहीं था। इन्हीं कपड़ों को पहने-पहने मैं स्वर्ग चला गया। स्वर्ग में कपड़े न घिसते हैं, न फटते। तुम्हारी पतिव्रता स्त्री ने मुझे पुकारा और मैं जल्दी चला आया।" वृद्ध महाशय ने कहा।

चेट्टियार हक्का-बक्का रह गया। "ये सब व्यर्थ की बातें हैं, जरूर यह कांग्रेसियों की कोई सभा है, नहीं तो ये सब-के-सब खद्दर क्यों पहने होते ?" मन में यह सोच चेट्टियार धर्मपुत्र के पास गया, जिनकी वेशभूषा से ही विश्वास की भावना उत्पन्न हो रही थी। उनके सामने साष्टांग पड़कर उसने कहा, "श्रीमान्, आप सच्चे आदमी मालूम होते हैं, मुझे ठीक-ठीक बताइये कि यह सब क्या है ?"

"सब ठीक है, बेटा ! चिंता या भय करने की कोई बात नहीं। जब हम इस पृथ्वी पर रहते थे तो हाथ के कते-बुने कपड़े के सिवा कोई दूसरा कपड़ा जानते ही नहीं थे। तुम अब उसी कपड़े को खद्दर कहते हो। हमारे पास दूसरी तरह का कोई कपड़ा नहीं था, जिसे हम पहन सकते। उन दिनों भारत में कपड़ा बहुत था और बाहर से नहीं आता था, बल्कि हम ही यहां से बाहर कपड़ा भेजा करते थे। मिलें न हमारे देश में थीं, न कहीं और। स्वर्ग में तो हम लोग अब भी यही कपड़ा पहनते हैं। तुम भी ऐसा ही क्यों नहीं करते ? सुनता हूं कि देश में बड़ी गरीबी है। क्या यह बात सच है?"

सबको अच्छी तरह प्रणाम करने के बाद चेट्टियार में काफी साहस आ गया और उसने हरेक का कपड़ा अपने अंगूठे और तर्जनी के बीच रगड़कर देखा। राम, बलराम, कृष्ण, परशुराम, भीष्म, अर्जुन सभी ने शुद्ध खद्दर पहन रखा था।

"यह अजीब बात है ! मैं तो सोचता था कि केवल महात्मा गांधी ने हाल में यह मजाक शुरू किया है और वही हरेक पर खद्दर पहनने के लिए जोर डाल रहे हैं। लेकिन इस समाज में तो सबने खद्दर पहन रखा है।" चेट्टियार ने मन-ही-मन में सोचा और अपनी पत्नी की ओर देखा।

मीनाक्षी अभी उस स्वर्गीय आनंद की मूर्च्छा से पूरी तरह जागी भी नहीं थी कि सबने एक साथ मिलकर कहा, "भगवान् तुम्हें सुखी रखें, अब हम जाते हैं।" और चेट्टियार का बड़ा कमरा खाली हो गया।

यह बिल्कुल सच है कि हमारे पुरखों के पास कोई दूसरी तरह का कपड़ा नहीं था। उसी कपड़े को पहने-पहने वे स्वर्ग सिधार गये थे और स्वर्ग में अब भी वे उसे ही पहने हुए हैं। वही कपड़ा हम यहां भी क्यों न पहनें ? यह विश्वास किया जा सकता है कि ऐसा करने से हम अपनी पुरानी महानता को भी प्राप्त कर लेंगे। □

अबोध बालक

□□

"मां, जब मैं सफेद गाय के पास जाता हूं तो वह मुझे सींग से डराती है, लेकिन करुप के सामने चुपचाप खड़ी रहती है। यह क्या बात है ?"

"वह उससे परच गई है, इसलिए उसके सामने चुपचाप खड़ी रहती है। तुमसे नहीं परची है, इसलिए तुम्हें मारती है।"

"मैं भी उसे परचा लूं, मां ?"

"नहीं-नहीं। तुम्हें करना क्या है ? तुम खेलो-कूदो। वह तो अछूत है, इसलिए उसे गाय चरानी पड़ती है। आओ, केक खा लो ?"

सुब्बू था तो चार साल का, लेकिन अपनी अवस्था के लिहाज से वह बहुत बढ़चढ़ कर बातें किया करता था और उसके माता-पिता उसे बड़ा लाड़-प्यार करते थे। उससे पहले उसके दो बहनें हो चुकी थीं।

"मां, तुम ऐसे केक कैसे बनाती हो ?"

"चीनी, दाल और नारियल की गिरी मिलाकर। खाकर बताओ, अच्छा है या नहीं।"

"अछूत क्या होता है ? करुप घर के अंदर क्यों नहीं आता ? और तो सब आते हैं।"

"वह अछूत जो है।"

"लेकिन अछूत क्या होता है ?"

"मैं बताऊंगी तो तुम्हारी समझ में नहीं आयगा। सवाल-जवाब छोड़ो और अपनी फोली खाओ।"

"मैं नहीं खाता। करुप घर के अंदर क्यों नहीं आता ?"

"बकवास बंद करो और भाग जाओ। देखते नहीं वह कितना मैला है। अगर वह घर में आ गया तो हम मैले हो जायंगे।"

"मैला किसे कहते हैं, मां ? गोबर को ?"

"गोबर मैला नहीं होता। उसका बदन बहुत मैला है, वह कभी नहीं नहाता, वह अछूत है।"

"तो मैं करुप को अपने घर में नहाने के लिए कह दूं ?"

"क्यों बक-बक करते हो ? भाग जाओ। उसके साथ मत खेलना।"

"मैं तो उसी के साथ खेलूंगा, और किसीके नहीं। उसे भी एक पोली दो।"

"नहीं, अछूत के लड़के को पोली नहीं दी जाती। अगर मैं उसे दे दूंगी तो घर में रखी हुई सब पोली गंदी हो जायंगी। जाओ, तुम्हें बाहर चाचा बुला रहे हैं। जाकर देखो, वह क्या चाहते हैं ?"

"पहले मुझे दूसरी पोली दो। मैं उसे जरूर दूंगा। उसे भी एक पोली खाने दो।"

"नहीं, पहले यहां बैठकर इसे खा लो तब जाना; लेकिन उसके पास मत फटकना।"

"तो मैं नहीं लेता।" वह बोला और पोली नीचे रखकर घर के पीछे वाले आंगन में भाग गया।"

"करुप, क्या तुम अछूत हो ?"

"हां।"

"क्या मैं भी अछूत हूं ?"

"नहीं-नहीं; तुम तो ब्राह्मण हो। अछूत मैं हूं।"

"तुम्हारी मां है ?"

"हां मेरी मां है"

"क्या वह मेरी मां-जैसी है ?"

"हां।"

"क्या वह तुम्हारे लिए पोली बनाती है ?"

"पोली! नहीं, हमारे घर में पोली नहीं होती।" उसने हंसते हुए कहा।

"आज दीवाली है। आज हम सब तेल मलकर गरम पानी से नहाये हैं। क्या तुम भी नहाये हो ?"

"हमारा कुआं सूख गया है, और तेल खरीदने के लिए हमारे बाप के पास पैसा कहां से आया ?"

"हमारे घर में नहा लो।"

"राम-राम, क्या तुम्हारी मां मुझे अंदर घुसने देंगी ?"

"तुम मेरे साथ आओ। अगर तुम नहाकर साफ हो जाओगे तो वह तुम्हें घर के अंदर जाने देंगी।"

"नहीं जाने देंगी। ठोकर मारकर वह मुझे बाहर निकाल देंगी।"

"नहीं-नहीं, मेरी मां तुम्हें कभी नहीं पीटेगी।"

वे बात ही कर रहे थे कि कृष्णैयर चाचा आ गये।

"तुम यहां हो सुब्बु ! देखो यह पटाखों का पैकेट।"

सुब्बु कूदकर चाचा के कंधे पर चढ़ गया। कृष्णैयर ने उसे प्यार कर पटाखों का पैकेट दे दिया और कहा, "क्या तुम इन्हें सुलगाना जानते हो ?"

"हां-हां, जानता हूं।" उसने पैकेट खोलकर पटाखों को फैलाते हुए कहा, "इन्हें आधा-आधा कर दो और एक हिस्सा करुप को दे दो।"

"अछूत का लड़का इनका क्या करेगा ? उसे छूना मत। आओ, अंदर चलें।" चाचा ने कहा और अछूत के लड़के की ओर देखकर धमकाया, "क्यों बे अछूत के बच्चे, इतनी बदतमीजी ? हमारे लड़के के इतने पास मत आया करं। भाग यहां से।"

करुप भागकर कुछ दूर खड़ा हो गया, लेकिन उसकी आंखें पटाखों के पैकेट पर ही लगी रहीं।

सुब्बू की मां के आने पर कृष्णैयर ने कहा, "अपने लाड़ले बेटे को तो देखो, सावित्री ! चाहता है कि मैं अछूत छोकरे को पटाखे दे दूं।" यह कहकर उन्होंने सुब्बू को उठाकर प्यार किया।

"कितना अच्छा है यह ! क्या बताऊं इसकी बातें ?" मां ने अभिमान के साथ कहा और उसे अपनी गोद में उठाकर छाती से चिपटा लिया।

सुब्बू की समझ में कुछ नहीं आया। करुप गाय को बाहर निकालकर

खेत पर चला गया।

इतने में सुब्बू की बहन पार्वती भारती का एक गीत गाती हुई आई—

"परैया स्वतंत्र होंगे ! तीया स्वतंत्र होंगे !
और पुलैया भी, पुलैया भी;
सबके लिए स्वतंत्रता !"

"मां, क्या तुमनें आज का अखबार पढ़ा है ? उसमें लिखा है कि अछूतों के लिए सारे मंदिर खोल दिये जायंगे।" उसने मां से कहा।

"क्या जाने इन सब बातों का क्या नतीजा निकलेगा।" सावित्री बोली।

"तुम्हें नहीं पता ! अब दुनिया उलट रही है।" कृष्णैयरने कहा। ⊡

सीताराम

□□

सब-कलक्टर सीताराम की तनख्वाह बारह सौ रुपया महीना थी; लेकिन वह अपने घर का खर्च बड़ी किफायत के साथ करते थे। शहर के दूसरे अफसर और उनकी पत्नियां उन्हें मक्खीचूस कहा करती थीं।

सीताराम और उनकी पत्नी में परस्पर बड़ा प्रेम था, फिर भी उनमें एक भेद की बात थी। हर महीने तनख्वाह मिलते ही सीताराम नौ सौ रुपये इंगलैंड भेज देते थे और उनकी पत्नी चेष्टा करने पर भी यह नहीं समझ पाई थी कि आखिर ये रुपये हर महीने क्यों भेजे जाते हैं। पहले वह समझती रहीं कि उनके पति इंगलैंड के किसी बैंक में जमा होने के लिए भेजते हैं और यह सोचकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती थी; किंतु बाद में उनकी समझ में आया कि यह बात नहीं हो सकती। स्वयं अपनी इच्छा से धन खर्चने में और विवशतावश किसी को रुपये देने में बड़ा अंतर होता है, जो कि हमारे दैनिक व्यवहारों में और उसके कारण उत्पन्न होनेवाली मानसिक दशा द्वारा स्पष्ट दिखाई दे जाता है।

एक दिन सीताराम ने अपनी पत्नी से कहा, "जब मैं इंगलैंड में पढ़ रहा था तो मुझपर कर्ज हो गया था और उसी कर्ज को उतारने के लिए मैं हर महीने रुपया भेजा करता हूं।" लेकिन उनकी पत्नी की समझ में यह बात नहीं आई कि जब सारा खर्चा ससुर करते रहे थे तो फिर पति पर कर्ज कैसे हुआ। फिर भी पत्नी को न तो शंका प्रकट करने की गुंजाइश होती है और न बहुत-से प्रश्न करने की। कभी चर्चा छिड़ती भी तो सीताराम चुपचाप बात बदल देते और दूसरा प्रसंग ले उठते। कभी-कभी उनकी पत्नी इंगलैंड

के जीवन के विषय में सुनी हुई बातों का ध्यानकर उद्विग्न हो उठती, किंतु उनके प्रति सीताराम का प्रेमपूर्ण व्यवहार इन शंकाओं को टिकने न देता। "मुझे चिंता करने की जरूरत ही क्या है," वह सोचती, "बात चाहे कुछ भी हो, मैं समझूंगी कि उनकी तनख्वाह ३०० रुपये ही है।" ऐसी ही बातों से वह अपने-आपको तसल्ली देती; भारतीय नारियों के परंपरागत पतिव्रत की विशेषता और शक्ति होती ही ऐसी है।

सीताराम ससुर के रुपये से इंगलैंड गये थे और वहां तीन वर्ष रहकर उन्होंने आई० सी० एस० की परीक्षा पास की थी। जब वह इंगलैंड के लिए रवाना हुए थे तो उनकी पत्नी सुंदरी की अवस्था उन्नीस वर्ष की थी वह बड़ी रूपवती थीं, लेकिन गहने-कपड़े पुराने ढंग के पहनती थी। वह समझती थी कि इस बात से उसके पति प्रसन्न होंगे। उनका और उनकी मां दोनों का यह हार्दिक विश्वास था कि जितने ही अधिक गहने खरीदे और पहने जाते हैं, उतनी ही अधिक सुंदरता भी बढ़ती है। इसके विपरीत, बेचारे सीताराम सोचते कि अगर मेरी पत्नी अपनी नाक से वह भद्दी नलकी और कान से बड़े-बड़े बुंदे निकालकर सिर्फ बारीक चूड़ियों का जोड़ा पहने रहे और पुराने ढंग की चमकदार साड़ी के बजाय हल्की साड़ी नए ढंग से सफाई के साथ पहने तो कितनी सुंदर लगे। इसी तरह रेशमी किनारी की कोहनी तक लटकती हुई भद्दे रंग की आस्तीनें भी बुरी लगतीं और वह सोचते कि आस्तीनें तो बिल्कुल होनी ही नहीं चाहिए।

लेकिन सच पूछिए तो वे स्वयं भी पुराने विचारों के थे। उन्हें अपनी पत्नी को यह बताने में बड़ा संकोच होता था कि पहनने-ओढ़ने के बारे में उनके अपने विचार क्या हैं। यह सोचते कि अगर मैं कहूंगा तब भी ये पुराने विचारवाले आदमी मेरी बात मानेंगे नहीं और इस प्रकार वह असंतोष के कीड़े को अपना मस्तिष्क चाटने देते। वह सिनेमा जाते और वहां रूपवती स्त्रियां देखते। परदे पर दिखाई जानेवाली और सिनेमा देखने आनेवाली भी। "एक ये हैं जो अपने रूप का अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना जानती हैं और एक मेरी स्त्री है, जो कोरी बुद्धू है।", वह अपने मन में विचार करते और अपने दुर्भाग्य पर ठंडी आह भर कर रह जाते। लेकिन

फिर यह सोचकर कि अच्छा इंगलैंड हो आऊं तो सब बातें ठीक करूंगा, वह बात टाल देते और इससे उन्हें कुछ तसल्ली हो जाती।

सीताराम इंगलैंड पहुंचे। जिधर भी उनकी दृष्टि गई उन्हें सुघड़ता-ही-सुघड़ता दिखाई दी। उन्होंने सोचा, "कैसा सुंदर शरीर है! कैसे सुरुचि-पूर्ण कपड़े! मेल और अनुपात का कैसा सूक्ष्म विवेक! ये सुंदर आचार-व्यवहार! ये चमकते हुए मुखड़े? यह अनुकूल वातावरण! यह तो सचमुच स्वर्ग है, इससे अधिक मनुष्य और क्या चाह सकता है?"

कुछ दिनों तक इस स्वर्ग में अप्सराओं के बीच रहने के बाद एक अप्सरा उनसे अधिक आत्मीयता के साथ मिलने-जुलने लगी! इस स्वर्गीय जीव से तो केवल बातें करने में इतना आनंद आता है! उन्होंने सोचा कि जीवन को सुखी बनाने के लिए इसके अतिरिक्त और क्या चाहिए, न विवाह, न बच्चे! ऐसा था वह सुख, जो उन्हें उसके संग-मात्र से मिलता था। उससे अलग होते ही वह उदास हो जाते। उन्हें अपनी पत्नी सुंदरी की याद आती, जिसे वह गांव में छोड़ आये थे। धीरे-धीरे उसके लिए उनके मन में एक प्रकार की अरुचि-सी होने लगी।

एक दिन सीताराम के बुरे ग्रह पराकाष्ठा पर थे। उस अप्सरा ने अपना जाल बड़ी सफलता के साथ फैलाया था और अंत में सीताराम उसमें फंस ही गये। उन्होंने उससे ब्याह करने का निश्चय कर लिया। बातें तै हुई और तीन सप्ताह के भीतर-ही-भीतर सबकुछ समाप्त हो गया। इंगलैंड में ऐसा प्रबंध होता है कि यदि कोई चाहे तो आध घंटे से भी कम में ब्याह संपन्न हो जाय।

शुरू-शुरू में बातें करते समय एक दिन सीताराम ने खुशी की एक गैर-जिम्मेदार भावना से प्रेरित हो उस स्त्री से कह दिया कि मैं अभी तक क्वारा हूं। स्वभावतः उन्हें बाद में भी यह असत्य निभाना पड़ा। ऐसी भूलों को सुधारना बड़ा मुश्किल है।

बातें इसी आधार पर आगे बढ़ती रहीं और अंत में यह असत्य ब्याह के समय रजिस्टरी करानेवाले सरकारी अफसर के सामने दुहराया गया। ब्याह के समय इस प्रकार की घोषणा आवश्यक होती है, क्योंकि इंगलैंड में पत्नी के जीवित रहते हुए कोई पुरुष दूसरी स्त्री के साथ ब्याह नहीं कर

सकता। इस दृष्टिकोण से अंग्रेजी कानून में स्त्री और पुरुष में कोई अंतर नहीं माना जाता।

सीताराम और उनकी अप्सरा ने विवाह के बाद फौरन ही पति-पत्नी की तरह जीवन बिताना आरंभ नहीं किया। कुछ कठिनाइयां ऐसी थीं, जिनके कारण यह बात थोड़े दिनों के लिए रोकनी पड़ी। सीताराम ने अपने घर पत्र लिखा और कुछ कारण बताकर अधिक रुपया मंगवाया। ससुर ने रुपया भेज दिया और उसके बाद सीताराम अपनी अंग्रेज पत्नी के साथ रहने लगे।

सीताराम ने अनुभव किया कि उनकी अप्सरा का स्वभाव दिन-पर-दिन शीघ्रता के साथ बिगड़ता जा रहा है! जिस सुशीलता और सुघड़ता की पहले यह इतनी प्रशंसा किया करते थे, वह धीरे-धीरे कम होती दिखाई दी और अंत में बिल्कुल लुप्त हो गई। उन्हें उसके स्वभाव में सचमुच कठोरता दिखाई देने लगी, यहां तक कि एक दिन उन्होंने सोचा कि सुंदरी निश्चय ही उनसे ज्यादा अच्छी है।

जल्दी ही सीताराम को यह मालूम हो गया कि जिस सुंदर होंठों की मैं प्रशंसा किया करता हूं, वे लिपस्टिक से बराबर रंगे रहने के कारण इतने भले मालूम पड़ते हैं और जब वे रंगे हुए नहीं होते तो बहुत ही भद्दे दिखाई देते हैं। कभी-कभी वह सोचते कि उम्र के बारे में भी धोखा खाया है। तब उन्हें सुंदरी के होंठों और मुंह का ध्यान आता और वह इस नतीजे पर पहुंचते कि वे अंग्रेजी अप्सरा के होंठों और मुंह से हजार गुने सुंदर हैं।

एक दिन सीताराम को यह भी पता चला कि अंग्रेज अप्सरा के सिर पर जो बाल हैं, वे उसके अपने नहीं हैं। उस दिन उन्हें जो मानसिक पीड़ा हुई, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि नरक में पड़ी हुई आत्माएं ही उसे समझने में समर्थ हो सकती हैं। अंत में यह बात भी स्पष्ट हो गई कि केवल बाल ही नहीं, भौंहें भी रंगकर काली बनाई गई हैं। एक महीने बाद उन्होंने यह भी देखा कि श्रीमती के मोती-जैसे सफेद दांत एक डिब्बे के अंदर दो कतारों में हिफाजत से रखे हुए हैं। निस्संदेह इन बातों की खबर उन्हें देर से लगी।

सीताराम अधिक सहन न कर सके। उन्होंने गले में फांसी डालकर

इस कष्ट से छूटने का संकल्प किया।

वह कुरसी पर कमर लगाकर बैठ गये और अपने-आपको कोसने लगे। उन्हें अपने गांव और मंदिर की याद आई। उन्हीं का ध्यान करते हुए उन्होंने आंखें बंद कर लीं और सोच में डूब गये। बचपन के दिनों की याद नदी की तरह उमड़ आई। मरी हुई माता का रूप उनके आंखों के सामने आ खड़ा हुआ। उन्होंने देखा कि मां की आंखों में दया भरी हुई है। इसके बाद उन्हें अपनी पत्नी की सुध आई। उन्हें ऐसा लगा, मानो भोली सुंदरी उनके वापस आने की प्रतीक्षा कर रही है और उसके मुख पर तेज है, जैसा तपस्या के समय उमा के मुख पर था। आत्महत्या से पूर्व मनुष्यों को ऐसी ही मानसिक अनुभूतियां होती हैं और उन्हें ऐसे ही सपने दिखाई देते हैं। सीताराम की आंखों में आंसू भर आये।

तब एकाएक उन्हें डिब्बे में रखे हुए दांतों का ध्यान आया। नकली दांतों की दोनों पंक्तियां उनके सामने सजीव बनकर खड़ी हो गईं और उनका मखौल उड़ाती हुई बोलीं, "मूर्ख, तू धोखा खा गया।"

"तो क्या इस सड़ी हुई औरत के पीछे मैं अपनी जान दे दूं ? नहीं-नहीं, कितनी बड़ी मूर्खता का काम करने जा रहा था मैं !" सीताराम ने अपने मन में कहा और कुरसी से उठ कपड़े पहनकर वह बाहर चले गये।

कुछ दिनों तक इधर-उधर मारे-मारे फिरने के बाद एक दिन संयोगवश उन्हें मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज के एक प्रोफ़ेसर मिल गये। उन्होंने अपनी शिक्षा इसी कॉलेज में प्राप्त की थी। प्रोफेसर से उन्होंने अपनी मूर्खता की सारी कहानी कह सुनाई और उनकी सहायता मांगी। प्रोफेसर को अपने पुराने शिष्य पर दया आ गई। वह उन्हें जाल से निकालने की चेष्टा करने लगे और अंत में उस औरत को समझौते के लिए तैयार करने में सफल हो गये। सीताराम को इस बात के लिए राजी होना पड़ा कि जब वह इम्तहान पासकर इंडियन सिविल सर्विस में ले लिये जायेंगे तो अपनी तनख्वाह का, चाहे वह कितनी भी हो, एक बड़ा हिस्सा हर महीने उस औरत को भेज दिया करेंगे। रकम तय कर दी गई और इकरारनामे पर हस्ताक्षर कर सीताराम ने सोचा, "बड़े भाग्य जो इस जाल से छूटा, चाहे किसी भी शर्त पर सही।" ब्याह करानेवाले अफसर के सामने झूठी घोषणा करने के

कारण लंबी जेल काटने, सदा के लिए अपमानित होने और किसी प्रकार की भी नौकरी न पाने का भय था ।

उन्होंने कसकर पढ़ाई की और आई०सी०एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण हो वह भारत के लिए चल पड़े । जहाज से उतरकर भारत की भूमि पर पैर रखते ही उन्हें ऐसा लगा, मानो वह अपनी मां की गोद में आ गये हों और उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई । विदेश से भारत लौटनेवाले सभी लोगों के हृदय में ऐसी भावना उठती है, लेकिन सीताराम के साथ जो घटनाएं घटीं थीं, उनके कारण उन्हें यह अनुभूति और भी तीव्र रूप में हुई । घर पहुंचकर जब उन्होंने सुंदरी को देखा तो परंपरा का ध्यान जाता रहा और उन्होंने सारी भीड़ के सामने उसे अपनी छाती से लगा लिया। उसके पुराने ढंग के कपड़े और गहने अब सचमुच सुंदर दिखाई देने लगे । उसकी कोहनी तक पहुंचनेवाली आस्तीनें, जिन्हें पहले वह घृणा की दृष्टि से देखते थे, अब सुरक्षा और हर्ष की भावना उत्पन्न करने लगीं । डूबने से बचाये जाने पर जो भावना किसी व्यक्ति को सूखी भूमि पर खड़े होने में होती है, वही भावना सुंदरी की पुराने ढंग की चीजें देखकर सीताराम को हुई । सुंदरी कितनी रूपवती और सुसंस्कृत है, यह बात उनकी समझ में तब आई ।

यह ज्ञान सीताराम को सचमुच बड़ा महंगा पड़ा, लेकिन अब जिस प्रेम का उदय उनके हृदय में सारे संसार को जीवनदान देनेवाले सूर्य के समान हुआ, उसके लिए जो भी कीमत दी जाय, वही कम । □

पटाखे

□□

"बापू मैं पटाखे लूंगा," वीर के लड़के ने रो कर कहा। लेकिन बेचारा वीर पटाखे कहां से लाता? ब्राह्मणों के मोहल्ले और जुलाहों की गली में दीपावली से तीन दिन पहले से ही बच्चे पटाखे छुटाने लगे थे। वीर का लड़का दस गज दूर खड़ा-खड़ा तमाशा देख रहा था। जब कभी वह बिना जले हुए टुकड़ों को उठाने के लिए नीचे झुकता तभी झिझककर दूर हटा दिया जाता।

दूसरे दिन और भी बुरा हुआ। पटाखों के छूटने की आवाज हर जगह से आ रही थी। "क्या बात है कि सबके घर में पटाखे हैं और हमारे घर में नहीं?" यह प्रश्न बच्चे के मन में बराबर उठ रहा था, लेकिन उसका कोई समाधान नहीं हो पा रहा था। अपने बाप से पूछते हुए उसे डर लग रहा था।

उसे भूख लग रही थी, लेकिन अपने मोहल्ले में जाने का उसका मन नहीं कर रहा था। ब्राह्मणों की गली में खड़ा-खड़ा वह बच्चों के पटाखे छुड़ाने का मजा ले रहा था।

"दूर खड़ा हो।" एक आदमी ने सड़क पर से निकलते हुए कहा। वीर का लड़का डर से कांप उठा और भागकर एक गली में दीवार से सटकर खड़ा हो गया।

क्या वीर का लड़का जानता था कि उसे इस तरह डरकर क्यों छिपना पड़ा? बच्चे क्या सोचते हैं, यह कौन समझ सकता है? उसके पास ही एक छोटा-सा पिल्ला खड़ा था। उस बेचारे जानवर से उसे आत्मीयता

मालूम हुई और जबतक वह ब्राह्मण चला नहीं गया तबतक वह उसे थपथपाता रहा। फिर वह गली से बाहर निकल आया और बहुत देर बाद अपने मोहल्ले में लौट गया।

"बापू मुझे पटाखे ला दो।" उसने वीर से कहा। इसपर उसके बाप ने उसके गाल पर इतना कसकर तमाचा लगाया कि वह जमीन पर गिर पड़ा।

"नशे में चूर होकर घर आते हो और लगते हो बेचारे लड़के को पीटने।" वीर की स्त्री ने चिल्लाकर कहा, "शराब-ताड़ी में जो रुपये फूंकते हो उसमें से क्या तुम एक पैसा भी बचाकर इसके लिए पटाखे नहीं खरीद सकते? क्या वह मांग भी नहीं सकता? इसके लिए क्या मार डालोगे उसे?" मां लड़के को उठाकर पुचकारने लगी।

"मां, मैं पटाखे लूंगा।" लड़के ने फिर कहा।

"चुप रह, अछूत के लड़के को पटाखों से क्या काम!" यह कहकर वह रसोई बनाने चली गई।

"अगर तूने फिर पटाखों का नाम लिया तो मैं तुझे जान से मार डालूंगा।" वीर ने उसे धमकाते हुए कहा।

दोरस्वामी ऐयंगर के घर बड़ी धूम मच रही थी। मद्रास से उसका दामाद मय बिस्तर और ट्रंक के आया था। उनकी तीसरी लड़की का ब्याह शेल ऐयंगर नाम के यूनिवर्सिटी के एक ग्रेजुएट से हाल में ही हुआ था। चार हजार रुपयों से जितनी धूमधाम की जा सकती थी, उतनी ब्याह में की गई! ब्याह के बाद को यह पहली दीवाली थी और शेल बहुत-सारी चीजें लेकर आया था। अपने छोटे सालों के लिए वह बीस पैकट पटाखों और फुलझड़ियों के लाया था। उन सबको बांटकर वह अपनी सास के पास चला गया। उसके सालों, किट्टू और चीनू ने, जो क्रमशः सात और चार वर्ष के थे, पटाखों को आपस में बांट लिया। चीनू चाहता था सारे पीले डिब्बे मैं ही ले लूं, लेकिन किट्टू ने देने के लिए मना कर दिया।

"बेबी को पीले डिब्बे दे दो।" कमला ने कहा। कमला उस गर्वीली लड़की का नाम था, जिसका हाल ही में ब्याह हुआ था।

बच्चों का झगड़ा निबटाने के बाद उसने फिर कहा, "इन्हें अभी छुटाना मत। दिवाली तो कल है। कल जब तेल मलवाकर नहा लोगे तब ये पटाखे छुटाने को मिलेंगे।"

इसके बाद वह अपनी मां के पास चली गई।

"मैं तो अपने पटाखे अभी छुटाऊंगा।" किट्टू ने कहा।

"मैं नहीं छुटाता। मैं तो कल छुटाऊंगा।" चीनू ने कहा।

"मैं एक पैकट आज छुटाऊंगा और बाकी कल के लिए रख दूंगा।" किट्टू बोला।

वे दोनों अपने पटाखे लेकर मां के पास पहुंचे।

"मां, इन्हें अच्छी तरह रख दो," चीनू बोला और उसने अपने हिस्से के पटाखे मा की गोद में डाल दिए। दामाद के आने की प्रसन्नता में मां ने चीनू को छाती से चिपटा लिया और उसे प्यार करते हुए कहा, "तुम बड़े राजा के बेटे हो।" फिर पटाखों के डिब्बे को उस आलमारी में रखकर, जिसमें अक्सर चांदी के बर्तन रखे रहते थे, वह दामाद से बातें करने चली गई।

दिवाली का दिन आया। "हाय, वह तो सबकुछ ले गया। एक हजार रुपये के चांदी के बर्तन चले गये।" दोरस्वामी की पत्नी सीता ने रोते-रोते कहा।

"उसने मेरा बटुआ भी चुरा लिया। बैंक से निकाले हुए सारे रुपये मैंने उसीमें रख दिए थे।" दोरस्वामी ने विलाप-सा करते हुए कहा।

"हमें जाकर पुलिस में खबर करनी चाहिए।" दामाद ने कहा।

"तुम्हारा कितना रुपया था?" सीता के छोटे भाई आरामुदु ने पूछा।

"मां, सारे पटाखे कहां हैं?" चीनू ने पूछा।

"शी...ी...ी, सारे पटाखे चोर ले गया।" किट्टू ने चुपके-से उसके कान में कहा।

"चोर कौन होता है?" चीनू ने पूछा।

वह ताला आदमी होता है और रात को सबके सो जाने पर घर में घुसकर सब चीजें ले जाता है।" किट्टू ने बताया।

"क्या वह कल यहां आया था ?" चीनू ने पूछा और किट्टू ने गर्दन हिलाकर स्वीकारात्मक संकेत किया।

"तो क्या वह सारे पटाखे ले गया ?" चीनू ने पूछा और वह रोने लगा।

"रो मत बेबी ! हम चोर को पकड़कर मारेंगे।" सीता ने कहा।

"कमबख्त चोर बच्चों के पटाखे तक ले गया।" कमला बोली।

दोरस्वामी ऐयंगर ने अपने बटुए को चारों ओर तलाश किया और न मिलने पर वह सिर पकड़कर एक कोने में बैठ गए।

"जो जाना था, चला गया। अब वापस तो आ नहीं सकता। चलो, नहा लो।" सीता ने दामाद की ओर मुड़कर कहा।

"नहीं, पहले हमें चावडियूर जाकर फौरन पुलिस को खबर करनी चाहिए। चाचा चलिए।" शेल ऐयंगर ने कहा और वह चाचा कृष्ण ऐयंगर को साथ लेकर चला गया।

"चोर ने चांदी का एक बर्तन नहीं छोड़ा। मैं अपने दामाद का सत्कार कैसे करूंगी ?" सीता ने कहा।

वीर का लड़का पटाखे छुटा रहा था। मोहल्ले के दूसरे लड़के चारों ओर खड़े होकर तालियां पीट रहे थे और खूब खुश हो-होकर चिल्ला रहे थे।

उन्हें पटाखे कहां से मिले ?

किसी को नहीं पता। दीवाली के दिन वीर ने चार डिब्बे पटाखों के लाकर अपने लड़के को दिये और कहा, "ले, इन्हें छुटा।" लड़का खुशी से उछल पड़ा और "पटाखे, पटाखे" चिल्लाता हुआ मां के पास भाग गया।

दिवाली के अगले दिन दो आदमी आये और वीर को ले गये। जब वीर वापस नहीं लौटा तो उसकी पत्नी अपने लड़के को लेकर स्कूल के मास्टर के पास गई और बोली, "हमारी ओर से एक अर्जी लिख दीजिए।"

"वे पुलिस के आदमी थे। तुम्हारे आदमी ने ताला तोड़कर मकान

में घुसने और चोरी करने का इल्जाम लगाया गया है।" अध्यापक महालिंग पिल्ले ने बताया।

"हाय, मैं तो बरबाद हो गई।" औरत ने रोते हुए कहा और दोनों हाथों से अपना सिर पीट लिया।

नाड़ी की दुकान में खबर मिलने पर पुलिसवाले सादे लिबास में अछूतों के मोहल्ले में गये और कुप को गिरफ्तार कर पुलिस चौकी पर ले गये। उसके बाद पूछताछ करने के लिए वे फिर अछूतों के मोहल्ले में गये। उन्हें कूड़े में पटाखों के टुकड़े मिले और पूछने पर मालूम हुआ कि पटाखे वीर के छोटे लड़के ने छुटाये थे। पुलिसवाले सारे टुकड़े इकट्ठे करके ले गये।

वीर को चाकडियूर ले जाकर वे उससे अपने नियमित ढंग से पूछताछ करने लगे।

"मारिये मत, मैं आपको सारी बातें बता दूंगा।" वीर ने कहा।

दूसरे दिन तलैयूर के वेंकट और चेन्नराय नाम के दो जरायम-पेशा जाति के आदमी गिरफ्तार किये गए। पुलिसवालों ने पड़ोस के गांव में कुप सुनार के घर की तलाशी ली और उससे सवाल-जवाब भी किये। अगले दिन उसके ससुर के घर की तलाशी ली गई और वहां से पांच-सौ रुपये के नोट और चांदी के बर्तन बरामद हुए।

वीर का लड़का गवाहों के कटघरे में खड़ा था।

"तुम्हारे बाप ने तुम्हें पटाखे दिये थे?" उससे पूछा गया।

"हां, हुजूर; नहीं, हजूर।" लड़के ने कहा।

"सच-सच बोलो। डरो मत।" दरोगा ने सख्ती के साथ कहा।

"मैंने बापू से पटाखे मांगे थे, लेकिन उसने मेरे मुंह पर थप्पड़ मारा और मुझे धक्का देकर नीचे गिरा दिया। मैं कसम खाकर कहता हूं कि मैंने पटाखे नहीं छुटाये!" लड़के ने कहा।

"असली बात यही है, हजूर। दूसरा गवाह झूठ बोलता है। वे सब झूठे हैं।" इजलास के एक कोने मे एक औरत ने चिल्लाकर कहा।

"इसे गिरफ्तार कर लो।" दारोगा ने डपटकर हुक्म दिया।

दो सिपाही फौरन आगे बढ़े और उन्होंने वीर की स्त्री को ले जाकर मजिस्ट्रेट की मेज के पास खड़ा कर दिया।

"खबरदार ! तू अदालत में गवाही देते वक्त अपने लड़के को सिखाने-पढ़ाने आई है ?" मजिस्ट्रेट ने धमकाकर कहा और वीर की स्त्री ऐसी कांपने लगी, मानो मूर्च्छित हो जायगी !

"इसे बाहर ले जाओ !" मजिस्ट्रेट और दारोगा ने एक साथ आज्ञा दी।

मुकदमे की सुनवाई फिर शुरू हुई। वीर के लड़के ने पटाखों के बारे में तीन तरह के बयान दिये।

"बस काफी है।" मजिस्ट्रेट ने कहा। इसके बाद दारोगा ने अदालत के सामने एक लंबा-चौड़ा भाषण दिया।

एक सप्ताह बाद मजिस्ट्रेट ने वीर और तलैयूर के कैदियों को रिहा कर दिया। दोनों सुनारों को सजा हो गई। तलैयूर के कैदियों के संबंध में मजिस्ट्रेट ने अपने फैसले में कहा, "सिर्फ वीर के पुलिस के सामने दिये हुए बयान पर तलैयूर के दोनों कैदियों को सजा नहीं दी जा सकती।"

वीर के खिलाफ भी काफी शहादत नहीं थी। अछूतों के मोहल्ले में पटाखों के टुकड़ों का मिलना संदेहजनक अवश्य था, लेकिन चूंकि इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं था कि कूड़े के ढेर में पाये गये टुकड़े इन्हीं पटाखों के थे, जो दोरस्वामी ऐयंगर के घर से चोरी गये थे, इसलिए, मजिस्ट्रेट ने वीर पर से अभियोग उठाकर उसे मुक्त कर दिया।

"वेंकट ! पटाखों के पैकट उस गधे के सिवा और किसी ने नहीं लिये होंगे। उसी की वजह से यह सारी मुसीबत आई।" चेन्नराय ने कहा।

"मैंने तो उससे उसी वक्त कहा था कि कोई दूसरी चीज ले ले, लेकिन वह माना नहीं। जब वह सारे पटाखों को लेकर बांध रहा था तभी घर में से किसीकी आवाज आई और हमें फौरन भागना पड़ा।" वेंकट ने कहा।

"जो पेशा जिस जाति का नहीं होता उसे करने से यही नतीजा निकलता है। उस आदमी को साथ लेकर हमने भूल की।" चेन्नराय बोला।

चोरी का पेशा करनेवाले इन आदमियों को इस बात का बिल्कुल पता नहीं था कि वीर का लड़का पटाखों के लिए रोया था या वीर ने उसे मारा था।

वीर वापस आ गया। जेल में उसे बराबर खाना मिलता रहा था, लेकिन उसके घर में एक दाना भी नहीं था। उसकी स्त्री हंडिया लेकर किसानों के मोहल्ले में दलिया मांगने गई। पति के घर लौटने पर उसे जो खुशी हुई, उसे भूख भी नहीं दबा सकी।

वीर के लड़के ने फिर कभी पटाखों के लिए जिद नहीं की। अगर वह किसीको पटाखे छुंटाते देखता तो अनायास भाग खड़ा होता। □

जगदीश शास्त्री का सपना

□□

बावन साल की उम्र में जगदीश शास्त्री रंगून से अपने जन्म-स्थान तिरु-विडैमरुदूर वापस लौटे। पहली बार वह रंगून सुब्बैयर नामक बैरिस्टर के रसोइया बनकर गये, परंतु जल्दी ही उन्होंने भोजन बनाने का काम छोड़ दिया और वह वहां के बसे हुए ब्राह्मणों के धार्मिक संस्कार कराने का काम करने लगे। चूंकि उनका जन्म एक पुरोहित-कुल में हुआ था, इसलिए वह कुछ मंत्र उच्चारित कर लेते थे। जिन मंत्रों का उच्चारण वह नहीं जानते थे, उन्हें वह एक छपी हुई पुस्तक से, जो उन्होंने इसी काम के लिए अपने पास रख छोड़ी थी, पढ़कर सीख लेते थे।

रसोइया और पुरोहित का काम करके जगदीश शास्त्री ने जो रुपया कमाया, उसे वह ब्याज पर चलाने लगे और जल्दी ही धनवान बन गये। अफवाह तो यहां तक थी कि उनके पास एक लाख रुपया नक़द है।

रंगून में रहते हुए जगदीश शास्त्री ने कई बार ब्याह करने की बात सोची, लेकिन उनकी इच्छा पूर्ण न हो सकी। बाद में अवस्था अधिक हो जाने के कारण उन्होंने यह विचार छोड़ दिया और निश्चय किया कि तिरुविडैमरुदूर में थोड़ी-सी जमीन खरीद ली जाय और स्वर्ग का रास्ता साफ करने के लिए एक बेटा गोद ले लिया जाय तथा शेष दिन शांति के साथ बिताये जायं; परंतु तिरुविडैमरुदूर लौटकर जब वह कुंभ पर, जो उसी साल बारह वर्ष बाद पड़ा था, स्नान के लिए कुंभकोण जाकर ठहरे तो वहां एक ऐसी घटना घटी, जिससे उनके जीवन का प्रवाह ही बदल गया।

वहां वह जिस मकान में ठहरे थे, उसमें नागेश्वरैयर नाम का एक दूसरा आदमी भी अपनी तीन लड़कियों के साथ ठहरा हुआ था। वे भी स्नान के लिए ही आये थे। जगदीश शास्त्री को पता चला कि नागेश्वरैयर एक जौहरी है और किसी बीमा कंपनी का एजेंट भी। वह उत्तरी अरकाट जिले का रहनेवाला था, लेकिन बहुत दिनों तक आंध्र देश में रह चुका था और उसके बाद कुछ समय तक कलकत्ते में भी रहा था। उसकी दो बड़ी लड़कियों का ब्याह हो चुका था, परंतु तीसरी अभी क्वारी थी। उसकी उम्र चौदह वर्ष की थी। वह रूपवती और वीणा बजाने में बड़ी निपुण थी। जगदीश शास्त्री की आयु ५२ वर्ष की थी, परंतु थे वह अब भी हट्टे-कट्टे। नागेश्वरैयर का कहना था कि कोई भी उन्हें देखकर चालीस वर्ष से अधिक का नहीं समझ सकता था।

जगदीश शास्त्री को पता चला कि नागेश्वरैयर के पास बीमा-कंपनी का जो रुपया था उसे उसने खर्च कर दिया है और अब उसको पूरा करने का उसे कोई साधन नहीं मिल रहा है। इसलिए तय हुआ कि जगदीश शास्त्री छः हजार रुपया देकर नागेश्वरैयर को अपना ऋण चुकाने में सहायता दें और शीघ्र ही तिरुपति में उनका नागेश्वरैयर की छोटी लड़की से चुपचाप ब्याह हो जाय। रुपया दे दिया और ब्याह भी हो गया। नागेश्वरैयर किसी आवश्यक कार्य से कलकत्ते लौट गया और जगदीश शास्त्री को बड़ा आश्चर्य हुआ जब उन्हें उसका कोई समाचार नहीं मिला। लेकिन इस बात पर ध्यान न देकर अपनी युवती पत्नी के साथ रंगून चले गये।

दो वर्ष भी न बीते होंगे कि जगदीश शास्त्री की पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। जगदीश शास्त्री ने उसका बड़े लाड़-प्यार से लालन-पालन किया, जैसे कि कभी बड़े-बड़े अधिक आयु में पुत्र उत्पन्न होने पर करते हैं।

दो-तीन साल और बीतने पर उनकी पत्नी के चरित्र के विषय में इधर-उधर बदनामी की बातें कही जाने लगीं। ये बातें शास्त्री के कानों में पड़ीं, लेकिन इस विषय में उन्होंने अपने को बिलकुल लाचार पाया। एक दिन घर लौटने पर उन्होंने देखा कि उनकी पत्नी अपनी वीणा, गहने और कैशबक्स के सारे रुपये लेकर चंपत हो गई। इससे बूढ़े शास्त्री को बड़ा

क्षोभ हुआ।

लड़का अब सात साल का था और स्कूल में पढ़ता था। उसकी शिक्षा और कुछ चुने हुए मित्रों के घर पुरोहिताई के काम में व्यस्त रहकर शास्त्री अपना दुःख बहुत-कुछ भूल गये।

स्कूल की शिक्षा सफलतापूर्वक समाप्त कर रामचंद्र विश्वविद्यालय में भरती हुआ और उन्नीस वर्ष की उम्र में उसने बी० ए० की डिग्री ले ली। सन् १९३० ई० में बाप-बेटा अपने देश लौट आये।

जगदीश शास्त्री के एक चचेरे भाई थे। उनका नाम सीतारामैयर था और वह एक बड़े सफल वकील थे। वह अपने काम में इतने निपुण समझे जाते थे कि जगह खाली होने पर उनके एडवोकेट-जनरल बनने की आशा थी। स्वभावतः जगदीश शास्त्री उन्हीं के यहां आकर ठहरे और सीता-रामैयर की पत्नी ने रामचंद्र को अपनी लड़की पार्वती के लिए उपयुक्त वर समझा। "इससे अच्छा वर हमें और कहां मिल सकता है ? बी० ए० तो वह कर ही चुका है, हम उसे आई० सी० एस० की परीक्षा के लिए इंगलैंड भेज सकते हैं।" उसने अपने पति से कहा और सीतारामैयर ने भी उसका समर्थन किया। लेकिन बीच में एक रुकावट थी—शारदा कानून। लड़की अभी ग्यारह साल की थी और कानून को बिना तोड़े उसका ब्याह फौरन नहीं हो सकता था। किंतु जिस व्यक्ति को एडवोकेट-जनरल बनने की आशा थी, वह कानून के विरुद्ध कैसे काम कर सकता था ?

सीतारामैयर की पत्नी ब्याह को टालकर इतने अच्छे जामाता के हाथ से निकल जाने देने का खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि अगर ब्याह अभी नहीं किया जा सकता तो कम-से-कम दोनों ओर से पक्की लिखा-पढ़ी हो जानी चाहिए। अतः आपस में लिखा-पढ़ी हुई और तय हुआ कि लड़के को आई० सी० एस० के लिए इंगलैंड भेजने का सारा खर्च सीतारामैयर करेंगे और तीन वर्ष बाद उसके वहां लौटने पर ब्याह हो जायगा। लड़की काली थी, इसलिए रामचंद्र को उसके प्रति कोई अनुरक्ति नहीं थी। फिर भी अपने पिता की इच्छा को ध्यान में रखकर और इंगलैंड जाने की उत्सुकता के कारण उसने कोई आपत्ति नहीं की।

रामचंद्र के इंगलैंड चले जाने के बाद जगदीश शास्त्री रंगून वापस चले गये, लेकिन वहां बिना अपने बेटे के अकेले रहने के कारण उनका चित्त शांत नहीं रहता था। अक्सर उन्हें अपनी पत्नी की याद आ जाती थी। इस मानसिक अशांति का प्रभाव उनके शरीर पर भी पड़ा और धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। इसे शारीरिक रोग समझकर उन्होंने अपने को डाक्टर को दिखाया। डॉक्टर ने विश्वास दिलाया कि उनके स्वास्थ्य में कोई खराबी नहीं है, लेकिन उनको अपने देश लौट जाना चाहिए। जगदीश शास्त्री को यह सलाह अच्छी लगी और वह रंगून को सदा के लिए छोड़कर भारत चले आये।

स्टीमर में एक अनहोनी घटना घटी। जगदीश शास्त्री ने सेकंड क्लास में एक महिला को देखा, जो उनकी खोई पत्नी से मिलती-जुलती थी। थोड़ा-बहुत अंतर तो अवश्य था, परन्तु उसे उन्हें छोड़कर गये भी तो पंद्रह वर्ष से अधिक हो गये थे। स्टीमर के मद्रास पहुंचते-पहुंचते उन्हें इस बात का करीब-करीब पूरा विश्वास हो गया कि यह मेरी पत्नी ही है। बंदरगाह पहुंचने पर जब वह महिला अपने असबाब के साथ उतरने लगी तो वह उसके सामने जाकर खड़े हो गये। एक क्षण तक वे एक-दूसरे को देखते रहे। फिर उस महिला ने कहा, "मैं अंगप्पनायक गली में ६१४ नंबर के मकान में ठहरी हुई हूं। अगर आप बातचीत करना चाहते हैं तो वहां आकर मिल सकते हैं।" इस पर शास्त्री हँस पड़े और बोले, "तो आखिर तुम्हीं हो। मैंने ठीक समझा था।"

"हां, मैं ही हूं।" उसने भी हँसकर उत्तर दिया।

दो दिन तक 'शास्त्री' अपने संबंधी सीतारामैयर के घर रहे और वहां उनकी बड़ी शान के साथ खातिर हुई। उन दिनों दक्षिण में इस बात की चारों ओर चर्चा थी कि अछूतों को मंदिर-प्रवेश की स्वतन्त्रता दी जानेवाली है। "सनातनधर्म नष्ट हो गया," सीतारामैयर के घर में सबने कहा। शास्त्री का भी यही विचार था।

"शारदा बिल के पेश होने पर आप लोग चुप क्यों बैठे हो? वह उसी का फल है।" सीतारामैयर ने कहा।

"बेकार की बातें मत करो, उस बात का इससे क्या संबंध ?" सीतारामैयर बोले।

"नहीं, उसका कहना बिल्कुल ठीक है," शास्त्री ने कहा। एक-दूसरे वकील, जो सीतारामैयर के नीचे काम सीखा करता था, नम्रता के साथ बोला, "क्या आपको रंगून जाने के लिए समुद्र पार नहीं करना पड़ा ? इस बात से भी मंदिर-प्रवेश का मार्ग साफ ही होता है।"

"इन ऊटपटांग बातों का क्या मतलब ? क्या जीविका कमाने के लिए रंगून जाना और पवित्र मंदिरों को अछूतों के लिए खोल देना एक ही बात है ?" जगदीश शास्त्री ने अधीरता के साथ पूछा।

"शास्त्रों में केवल चार वर्णों का उल्लेख है। कोई पांचवां वर्ण तो होता नहीं। अगर हम अछूतों की गिनती चौथे वर्ण में कर लें तो इससे नुक-सान क्या होगा ?" छोटे वकील ने पूछा।

"आप लोग शास्त्रों का अनुवाद-भर पढ़कर पूर्ण पंडितों की तरह बातें करने लगते हैं। चार वर्ण तो आरंभ में ईश्वर ने बनाये थे, लेकिन बाद में दो वर्णों के मिलने से नये अपवित्र वर्ण उत्पन्न हो गये। चांडाल इन्हीं अनियमित विवाहों के फल हैं।" जगदीश शास्त्री ने कहा।

"ऐसा मालूम होता है कि ब्रह्मा को अपने काम में सफलता नहीं मिली। क्या आपके कहने का मतलब यह है कि अछूत कही जानेवाली जाति के सभी लोग चरित्रहीन ब्राह्मणियों की संतान हैं ?" छोटे वकील ने पूछा।

"इन बातों की गहराई तक जाने से कोई लाभ नहीं ! हम उन्हें पीढ़ियों से चांडाल मानते आये हैं। हम अब उनकी पहचान के सबूत नहीं मांग सकते। हम ब्राह्मण हैं, इसी बात का क्या प्रमाण है ?" जगदीश शास्त्री ने उत्तर दिया।

कचहरी जाने का समय हो जाने के कारण सभा विसर्जित हो गई और जगदीश शास्त्री ६१४ अंगप्पानायक गली के लिए चल पड़े।

उसी दिन शाम को जगदीश शास्त्री सेंट्रल स्टेशन पर बनारस का टिकट लेते हुए दिखाई दिये। सुबह की अपेक्षा उस समय उनकी आयु दस वर्ष अधिक

मालूम हो रही थी।

"आप किस रास्ते से जाना चाहते हैं, बाबा ?" टिकटबाबू ने पूछा।

"कोई भी रास्ता हो, लेकिन हो सबसे पास का। मुझे जल्दी-से-जल्दी गंगाजी में नहाकर अपने पाप धोने हैं।" जगदीश शास्त्री ने कहा।

जगदीश शास्त्री के इस वैराग्य का कारण वे बातें थीं, जो उन्हें ६१४ अंगप्पनायक गली में अपनी पत्नी से मालूम हुई थीं। जगदीश शास्त्री का ससुर न तो ब्राह्मण था, न जौहरी। उसका असली नाम परियारी नायक था। असिस्टेंट एकाउंटेंट-जनरल त्यागराजैयर उसे अपने साथ कलकत्ते ले गये थे, जहां उसकी बाल काटने की एक दुकान थी। इस पुश्तैनी पेशे में लगे-लगे ही उसने एक अनाथ विधवा को घर में पत्नी के रूप में रख लिया और जगदीश शास्त्री की पत्नी उसीसे जन्मी थी। अपनी लड़की के ब्याह के बाद वह किसी फौजदारी के षड्यन्त्र में फंस गया और उसे सात साल की जेल हो गई। वह अब भी लाहौर की जेल में बंद था।

जगदीश शास्त्री की पत्नी उन्हें रंगून में छोड़ने के बाद इधर-उधर घूमती फिरी और अंत में वह एक सिनेमा कंपनी में भरती हो गई और वहां उसने खूब धन कमाया। उसने शास्त्री को बताया कि मुझे अब किसी बात की कमी नहीं, मैं खूब खुश हूं और आपसे किसी तरह की सहायता लेना नहीं चाहती।

"मैंने और मेरे पिता ने मिलकर आपको ठगने का जाल रचा था। हमें केवल भगवान् ही क्षमा कर सकता है।" उसने कहा।

इन सब बातों के होते हुए भी जगदीश शास्त्री अपनी पत्नी की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सके। उसके प्रति उनके मन में पहले से भी अधिक प्रेम उमड़ पड़ा और वह बच्चे की तरह रोने लगे। फिर उन्होंने कहा, "पता नहीं यह जात-पांत बनाई किसने ? भगवान् ने ऐसा कभी नहीं किया होगा। चलो, पिछली बातों को भूलकर रंगून चलें और वहां आनंद से रहें।"

"ऐसी बातें कहने से कोई लाभ नहीं। मैं तो आपको स्पर्श करने योग्य भी नहीं हूं। मेरा पाप तो सात पीढ़ियों तक नहीं धुल सकता। जाइये, गंगाजी नहाकर मुझसे ब्याह करने का पाप धो आइये।" शास्त्री की पत्नी

ने कहा।

जब शास्त्री घर से बाहर निकले तो उन्हें बड़ा भय मालूम हुआ। उन्हें अपने लड़के का ध्यान आया, जो उस समय इंगलैंड में पढ़ रहा था और कुछ ही महीनों में वापस आनेवाला था। "उसका ब्याह होना है। अगर किसी को पता चल गया कि वह एक कुलटा का लड़का है तब ? इस औरत की जाति क्या है ? और इस लड़के की जाति क्या है ? सीतारामैयर और उनकी पत्नी क्या कहेंगी ?" शास्त्री का सिर चकराने लगा। वह लड़खड़ाते हुए बड़ी कठिनाई से स्टेशन तक पहुंचे।

रेल-यात्रा की दूसरी रात को शास्त्री के साथवाले यात्रियों ने उन्हें बूढ़ा और कमजोर समझ तरस खाकर लेटने की जगह दे दी। वह थके हुए थे और जल्दी ही गहरी नींद में सो गये। सोते-सोते उन्हें एक भयानक सपना दिखाई दिया :

रामचंद्र इंगलैंड से वापस आ गया है। अब यह सुंदर ब्राह्मण का लड़का नहीं लगता। शापग्रस्त त्रिशंकु की तरह अब वह कुरूप होकर घर आया है और पूरी तरह से एक अछूत का लड़का बन गया है। वह आई० सी० एस० नहीं, बल्कि सिर्फ एक कुली है। परंतु शास्त्री उसे अब पहले से भी अधिक प्रेम करने लगे हैं।

उन्होंने देखा कि सीतारामैयर और उसकी पत्नी ने उन्हें घर से बाहर निकाल दिया है। माली, ड्राइवर और भंगी सब उन्हें झिड़कियां दे-देकर वहां से भगा रहे हैं। गली में भीड़ इकट्ठी हो गई, जिसमें से शास्त्री अपने लड़के के साथ किसी तरह निकल भागे।

अब शास्त्री अपने गांव में पहुंच गये, लेकिन वहां सबको पता लग गया कि उन्होंने एक अछूत लड़के को अपने घर में शरण दे रखी है। लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई और उन्होंने उन्हें खदेड़कर ब्राह्मणों की गली से बाहर भगा दिया।

शास्त्री अपने बेटे के साथ फिर मद्रास पहुंचे। दोनों एक बस में चढ़े। चढ़ते ही कंडक्टर ने पूछा, "यह लड़का किस जाति का है ?" गले में माला पहने हुए एक बूढ़े आदमी ने चिल्लाकर कहा, "यह लड़का चांडाल है अछूत है।"

"इसे बाहर फेंक दो ।" बस में बैठे हुए सब आदमियों ने चिल्लाकर कहा। बसवाले ने शास्त्री को घसीटकर बाहर खींचा और बाप-बेटा एक-साथ नीचे कूदे। इस अपमान को सह न सकने के कारण वे गली में जा छिपे।

इसके बाद दृश्य बदला। वह मैलापुर में सीतारामैयर के घर पहुंचे। "क्या आप मेरे लड़के को अपने दफ्तर में क्लर्क नहीं रख सकते ?" शास्त्री ने सीतारामैयर से हाथ जोड़कर कहा।

'यह कैसे हो सकता है ? मेरी पत्नी को आपत्ति होगी," सीतारामैयर ने कहा और उसी समय उनकी पत्नी भी अंदर से आ गई। जगदीश शास्त्री भय से कांपने लगे।

"हमारे दफ्तर में अछूत बैठकर काम करे ? क्या ही अच्छा विचार है आपका ! हमें उसकी जरूरत नहीं। हमारा रुपया फौरन वापस करो।" सीतारामैयर की पत्नी ने कहा और एक दस्तावेज दिखाया। यह वही कागज था, जिसपर रामचद्र के ब्याह का इकरारनामा लिखा गया था। सीतारामैयर रामचंद्र के लिए पंद्रह हजार रुपये खर्च कर चुके थे। उन्होंने शास्त्री से यह रकम वापस करने को कहा।

दृश्य फिर बदला। पीले वस्त्र पहने और हाथ में त्रिशूल लिये एक महंत मृगछाला पर बैठे दिखाई दिये। "स्वामीजी ! क्या आप मेरे लड़के की शुद्धि कर उसे ब्राह्मण बना सकते हैं।" शास्त्री ने उससे पूछा।

"असंभव, एक जन्मजात चांडाल की शुद्धि की कोई आशा नहीं," स्वामी ने मधुर वाणी में कहा, "उसकी जाति तो उसी समय मिट सकती है जब उसका शरीर जलकर भस्म हो जाय। यदि वह इस जन्म में अपनी जाति के धर्म का पूर्ण रूप से पालन करे तो दूसरे जन्म में वह उच्च जाति में जन्म लेगा। फिर भी ब्राह्मण का जन्म पाने से पहले तो उसे कई जन्म लेने पड़ेंगे।"

"बदमाश ! बड़ा संन्यासी बना है ? क्या तू उस विश्वासघात के मामले को भूल गया, जिसमें तुझे दंड मिला था ? क्या तूने झूठी दरख्वास्तें नहीं दी थीं ? क्या तूने किराये पर ली हुई चीजें नहीं बेच डाली थीं ! तुझे तो जेल होनी चाहिए थी, लेकिन तू जुर्माना देकर ही छूट गया था।

क्या इन बातों में कोई पाप नहीं है ?" शास्त्री ने चीखते हुए कहा।

संन्यासी की आंखें गुस्से से लाल हो गईं। "अछूत कहीं का ! मैं तुझे शाप देता हूं। तूने मेरी निंदा की है और एक संन्यासी को उसके जीवन की पहली बातें याद दिला दी हैं।" संन्यासी चिल्लाकर बोला और डंडा लेकर मारने को दौड़ा। शास्त्री भागे और उनका सिर गली के फाटक से टकराया।

रेल की गद्दी से लुढ़ककर नीचे गिरने से बूढ़े शास्त्री की आँखें खुल गईं और उनका सपना टूट गया।

दूसरी रात को शास्त्री को अपने लड़के के बारे में और भी स्वप्न दिखाई दिये। आंखें बंद करते ही उनका तांता-सा लग गया।

शास्त्री अपने बेटे के साथ फिर इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे थे। दोनों को भूख लगी और वे एक कॉफी-घर में घुसे। बैरा ने उनके सामने दो पत्तों पर चावल के केक परस दिये। वे खाना शुरू ही करनेवाले थे कि फिर पास में बैठे हुए एक आदमी ने पूछा, "यह लड़का कौन है ?" शास्त्री ने डर के मारे कोई उत्तर नहीं दिया। इतने में एक आवाज आई, "वह चांडाल है।" और तब सब-के-सब एक साथ चिल्ला उठे, "यह अछूत है, इसे बाहर निकाल दो।" बैरे ने लड़के के चावल का केक छीनकर कूड़े के बर्तन में फेंक दिया और लड़के को धक्का देकर बाहर निकाल दिया। शास्त्री उसके पीछे "मेरे बच्चे" कहते हुए भागे।

कुंभकोण के रायबहादुर नरसिंहचारियर दिल्ली असेंबली के मेंबर थे। शास्त्री ने उनसे कहा, "जब आप दिल्ली जायं तो कृपाकर मेरे लड़के को अपना क्लर्क बना कर ले जायं। वह बी० ए० पास कर चुका है, परंतु मेरे पाप के कारण वह अचानक अछूत बन गया है।"

"नहीं शास्त्री ! यह ठीक है कि दिल्ली में हम जातपांत अधिक नहीं मानते। लेकिन एक अछूत को हम अपने घर कैसे रख सकते हैं ? अगर वह शूद्र होता तब भी कोई बात नहीं थी।" नरसिंहचारियर ने कहा।

"तो क्या आप उसे शुद्ध कर शूद्र बना सकते हैं ?" शास्त्री ने उत्सुकता से पूछा।

"मैं शूद्र कैसे बन सकता हूं ? आप तो कह रहे थे कि मैं अपवित्र

जाति का हूं।" लड़के ने कहा ।

"हां, यह सच है । क्या इन शास्त्रों को जलाया नहीं जा सकता ?" शास्त्री ने चिल्लाकर कहा ।

"कोई बात नहीं, पिताजी, मैं रेल का कुली बन जाऊंगा । वहां किसी को आपत्ति नहीं होगी ।" रामचंद्र बोला ।

"यह भी कोशिश कर देखो ।" शास्त्री ने दुखी होकर कहा ।

रामचंद्र फौरन रेल का कुली बन गया । पहली बार के असबाव ढोने में उसे चार आने पैसे मिले; लेकिन दूसरे दिन जब वह किसी आदमी का ट्रंक और बिस्तर उठाकर अपने सिर पर रखनेवाला था तभी एक दूसरा लड़का दौड़ता हुआ आया और चिल्लाया, "साहब, यह अछूत का लड़का है ।"

उस ट्रंक और बिस्तर का मालिक एक ब्राह्मण अफसर था । उसने कहा, "क्यों बे, तूने मेरे असवाब को छूने की कैसे हिम्मत की ?" और अपनी छतरी की नोक से लड़के की कमर खोदी । रामचंद्र ट्रंक और बिस्तर को नीचे डालकर भाग खड़ा हुआ ।

अपने अभिशापित लड़के को लेकर शास्त्री फिर चले । आकाश के किसी भाग से "चांडाल, चांडाल" की ध्वनि बराबर आ रही थी । जब वृक्षों की पत्तियां खड़खड़ातीं तो उनमें से भी वही ध्वनि सुनाई देती थी । बूढ़े शास्त्री थककर चूर हो गये, उनकी टांगों में दर्द होने लगा और प्यास के मारे उनका हलक़ सूख गया । लेकिन पास में कोई तालाव या कुआं दिखाई नहीं दिया ।

"मैं बहुत प्यासा हूं, बेटा, थोड़ा-सा पानी ले आओ ।" शास्त्री ने कहा ।

"मुझे पानी कौन देगा, पिताजी ?" रामचंद्र ने कहा ।

"ठीक है, मेरे बच्चे । न कोई हमें पानी देगा, न कहीं से लेने ही देगा । हमें तो मरना ही पड़ेगा ।"

"हम मरेंगे क्यों, उठिये, पिताजी; हम इंगलैंड चलेंगे । वहां जात-पांत या छुआछूत का कोई झगड़ा नहीं ।"

"हम इंगलैंड कैसे जा सकते हैं । अभी तो हम वृंदाचल में ही हैं ।"

शास्त्री ने कहा।

"देखिये, सामने एक सीढ़ियोंवाला कुआं है। चलिये, हम वहां उतरकर पानी पियें," यह कहकर लड़का अपने पिता को उस ओर ले चला। भय से कांपते हुए वे सीढ़ियों से नीचे उतरे। वहां कोई नहीं, इसलिए दोनों ने जी भरकर प्यास बुझाई। ऊपर चढ़ने समय उन्हें एक बूढ़ी औरत मिली। उन्हें देखकर वह चिल्लाई, "जल्दी आओ, जल्दी आओ; किसी चांडाल ने आकर हमारे गांव का कुआं अपवित्र कर दिया। दुष्ट कहीं का !"

फौरन भीड़ जमा हो गई। गुस्से में भरकर सब लोग लड़के पर टूट पड़े। शास्त्री लड़के का हाथ पकड़कर एक दूर के मंदिर की ओर भागे।

"हे भगवान ! हमारी रक्षा तुम्हीं कर सकते हो," उन्होंने चिल्लाकर कहा। लेकिन जब वह मंदिर के पास पहुंचे तो उनके मन में एक शंका हुई और वह रुक गये।

"भगवन् ! सब कहते हैं कि मेरा लड़का चांडाल है। क्या हम तुम्हारे मंदिर में भी नहीं आ सकते ? तुम्हारे सिवा और कौन हमें शरण दे सकता है ?" उन्होंने रोकर कहा।

"तुम विना किसी डर के अंदर आ सकते हो, मैं सबका माता-पिता हूं। मैं कोई भेदभाव नहीं करता।" अंदर से एक आवाज आती हुई सुनाई दी। शास्त्री अपने लड़के के साथ अंदर चले गये। "तो आखिर हमें शरण और रक्षा की जगह मिल ही गई।" उन्होंने कहा।

उसी समय एक पुरोहित चिल्लाता हुआ आया, "हे भगवान् ! देवता के घर में चांडाल घुस आया !" बहुत-से दूसरे आदमी भी आ पहुंचे और बाप-बेटे के चारों ओर तुरंत ही भीड़ इकट्ठी हो गई।

"इस अछूत के लड़के की ढिठाई तो देखो ! मारो, इसे ठोकर लगाओ।" वे चिल्लाये।

"यह चांडाल नहीं है, यह मेरा बेटा है।" शास्त्री ने चिल्लाकर कहा।

उसी समय कहीं से शास्त्री की पत्नी आ पहुंची। "यह झूठ है, बूढ़े का विश्वास मत करो। वह मेरा बेटा है, दंगला है, चांडाल है।" उसने चिल्लाकर कहा !

"चुड़ैल ! विश्वासघातिनी ! बदजात !" शास्त्री ने मंद स्वर में कहा। फिर वह भीड़ की तरफ मुंह करके खड़े हुए और बोले, "भगवान् ने स्वयं अपने श्रीमुख से हमें अंदर आने की अनुमति दी है, क्या आपने नहीं सुना ?"

"हमने कुछ नहीं सुना, इसकी खाल उधेड़ दो, इसे जान से मार डालो।" वे चिल्लाये और रामचन्द्र पर टूट पड़े।

"हे भगवान् !" शास्त्री चिल्लाये और उठकर बैठ गये। उन्होंने देखा कि टिकट-चेकर उन्हें धीरे-धीरे थपथपाकर जगा रहा है। "उठकर बैठो बाबा ! तुम चिल्ला क्यों रहे हो ? अपना टिकट तो दिखाओ।"

यह केवल सपना था, लेकिन शास्त्री बहुत देर तक बैठे-बैठे कांपते रहे। जाग जाने पर भी उन्हें ऐसा मालूम होता रहा कि पटरी पर चलने से गाड़ी का जो शब्द हो रहा था, उसमें से 'अछूत, अछूत' की ध्वनि आ रही थी।

कुछ समय बाद रामचंद्र इंगलैंड से लौट आया और कुरनूल में असिस्टेंट कलक्टर नियुक्त हो गया। उसके जन्म की कथा न उसे बताई गई, न सीतारामैयर को ही।

जगदीश शास्त्री का लापता हो जाना सबको बुरा लगा और कुछ दिनों तक सब लोग उन्हें प्रेमपूर्वक याद करते रहे। किसी ने कहा कि उन्हें एकाएक वैराग्य उत्पन्न हो गया और वह संन्यासी बनने के लिए बनारस चले गये। किसीने कहा कि वह गंगा में डूब मरे।

कुछ दिनों तक उनके लौटने की प्रतीक्षा की गई, लेकिन जब वह वापस नहीं आये तो इकरारनामे के अनुसार असिस्टेंट कलक्टर मिस्टर जे० आर० चंद्र का ब्याह सीतारामैयर की लड़की के साथ हो गया। मैलापुर के और ब्याहों की भांति यह ब्याह भी धूमधाम और शान के साथ हुआ। □

'मंडल' का

कथा-कहानी साहित्य

□□

देवी का दान
खंडित पूजा
प्रकाश की रेखाएं
बहता पानी निर्मला
जीवन संदेश
विद्रोही आत्माएं
फूल और कांटा
दुखी दुनियां
दिव्य जीवन की झांकियां
चौपाल की बातें
त्रिवेणी संगम
पंचामृत
कुब्जा सुन्दरी



